चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

रोटी के नाम पर धोखा

पेज 2

बसपा का ऑपरेशन क्लीन

पेज 4

साई की महिमा

पेज 12

धोनी नहीं हैं ज़िम्मेदार

पेज 15

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 24 मई–30 मई 2010

विपक्ष सो रहा है

सभी फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

मनीष कुमार

महंगाई की मार से त्रस्त देश की जनता स्वयं को अनाथ महसूस कर रही है. उसके लिए सड़कों पर उतर कर आंदोलन करने वाला कोई नहीं है. आईपीएल के घोटाले में मंत्री, नेता, फ़िल्म स्टार, बड़े-बड़े बिजनेसमैन एवं अधिकारी और अंडरवर्ल्ड शामिल हैं. वे मिलजुल कर क्रिकेट के पीछे करोड़ों का खेल खेल रहे हैं, लेकिन इसके ख़िलाफ़ कोई आवाज़ उठाने वाला नहीं है. देश में दलालों की भूमिका अब कैबिनेट मंत्री तय करने तक पहुंच गई है, लेकिन सब चुप हैं. एक समय था, जब सिर्फ़ 64 करोड़ रुपये के बोफोर्स घोटाले के खुलासे ने देश को हिलाकर रख दिया था और सरकार को जाना पड़ा था. आज 60 हज़ार करोड़ रुपये का घोटाला देश के सामने है, लेकिन हैरानी की बात यह है कि विपक्ष चुप है.

यह देश का दुर्भाग्य है कि हमारे यहां विश्वसनीय विपक्ष नहीं है. कहने को तो विपक्ष है, लेकिन उसे अपने कर्तव्यों और ज़िम्मेदारियों का एहसास ही नहीं है. महंगाई हो या बेरोज़गारी या फिर जनता से जुड़ी अन्य विभिन्न समस्याएं, विपक्ष चुप है. आईपीएल का घोटाला, जिसमें नेताओं, मंत्रियों, औद्योगिक घरानों एवं बीसीसीआई के अधिकारियों पर मैच फिक्सिंग से लेकर अंडरवर्ल्ड की मिलीभगत तक का खुलासा हुआ, लेकिन विपक्ष सिर्फ़ खानापूर्ति के लिए संसद में शोर मचाकर फिर सुषुप्तावस्था में चला गया. भारतीय राजनीति का एक और काला अध्याय जनता के सामने आया, जिसमें मंत्रिमंडल तय करने में दलालों की भूमिका का खुलासा हुआ, लेकिन विपक्ष ने संसद में बहस करने के सिवा कुछ नहीं किया. भारतीय जनता पार्टी, वाममोर्चा, समाजवादी पार्टी, राष्ट्रीय जनता दल एवं जनता दल युनाइटेड आदि पार्टियां कहने को सरकार के बाहर हैं, सरकार का विरोध करने का दावा करती हैं, लेकिन क्या इनकी राजनीति का जनता से कोई सरोकार है? मुलायम सिंह की समाजवादी पार्टी और लालू प्रसाद यादव के राष्ट्रीय जनता दल का हाल ऐसा है कि जनता को यह पता ही नहीं चल पाता है कि वे सरकार के विरोध में हैं या फिर समर्थन में. महंगाई के मुद्दे पर सदन से वाकआउट करके उन्होंने यह तो साफ कर ही दिया कि अगर यूपीए गठबंधन में कोई उतार-चढ़ाव हुआ, अगर ममता बनर्जी सरकार से बाहर गईं तो सरकार इन पार्टियों को अपना दोस्त मान सकती है. ऐसा लगता है कि इनकी राजनीति का मुख्य उद्देश्य केंद्र में किसी तरह से कुछ मंत्री पद पाने का है. इसलिए इन्हें विपक्ष का दर्जा नहीं दिया जा सकता. जनता से जुड़ी समस्याओं पर सरकार की नीतियों पर सवाल उठाने का काम वाममोर्चा कर रहा है, लेकिन उसके पास संख्या कम है और वह सिर्फ़ पश्चिम बंगाल एवं केरल जैसे दो राज्यों तक ही सीमित है. संख्या के हिसाब से और वैसे भी भारतीय जनता पार्टी देश की मुख्य विपक्षी पार्टी है, लेकिन वह अपनी ज़िम्मेदारियों को नहीं निभा रही है. यही सबसे बड़ी चिंता है.

सरकार के कामकाज पर नज़र रखना, उस पर अंकुश लगाना, जनता का पक्षधर बनकर सरकार की नीतियों और योजनाओं पर सवाल उठाना, ग़रीबों-ग्रामीणों एवं शोषित वर्गों के लिए आवाज़ उठाना और उनकी मांगों के समर्थन में आंदोलन करना जैसे कुछ दायित्व हैं, जिन पर एक विश्वसनीय विपक्ष अमल करता है. लोकतंत्र में जनता किसी पार्टी को इसलिए विपक्ष में बैठाती है, ताकि वह सिर्फ़ जनता के लिए काम करे. उसके दु:खों और तकलीफों को लेकर सरकार के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलंद करे. जब भी सरकार, ग़ैर सरकारी संस्थान अथवा किसी व्यक्ति द्वारा गबन, घोटाला, दलाली या सौदेबाज़ी आदि के मामले सामने आएं तो विपक्ष न्याय के लिए लड़े. विपक्ष को सिर्फ़ संघर्ष ही नहीं करना होता है, बल्कि यह भी साबित करना होता है कि वह वर्तमान सरकार से ज़्यादा बेहतर काम कर सकता है, ताकि जनता उस पर भरोसा कर सके और उसे अगले चुनाव के बाद सरकार चलाने का मौक़ा दे. यही वजह है कि लोकतंत्र में विपक्ष की ज़िम्मेदारियां सत्तापक्ष से कहीं ज़्यादा होती हैं.

भारतीय जनता पार्टी और अध्यक्ष नितिन गडकरी को इस ज़िम्मेदारी का एहसास नहीं है. अध्यक्ष बनने के बाद शिबू सोरेन की ग़लतियों की वजह से गडकरी के सामने पहली राजनीतिक चुनौती आई. इस पर पूरे देश की नज़र थी कि गडकरी अब क्या करेंगे. भाजपा ने सबसे पहले समर्थन वापस लेने की घोषणा की. इस फ़ैसले का सभी ने स्वागत किया, लेकिन बाद में गडकरी ने सरकार बनाने का फ़ैसला ले लिया. गडकरी के इस फ़ैसले को राजनाथ सिंह का समर्थन मिला. गडकरी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नुमाइंदे हैं तो क्या यह मान लिया जाए कि इस फ़ैसले में संघ की सहमति थी. विपक्ष की राजनीति के देश के सबसे अनुभवी नेता आडवाणी जी के रहते ऐसी रणनीति क्यों बनी. आडवाणी जी चुप क्यों रहे.

गडकरी ने इस दौरान एक और ऐसा काम किया, जिससे भाजपा के समर्थक भी हैरान रह गए. उन्होंने मुलायम सिंह और लालू यादव के लिए असभ्य भाषा का प्रयोग किया. बाद में माफी भी मांग ली. यह बात और है कि हमारे नेताओं का स्तर इतना गिर गया है कि इस तरह की भाषा सुनने को तो मिलती है, लेकिन ज़िले और विधायक स्तर के नेताओं के मुंह से. देश की मुख्य विपक्षी पार्टी के अध्यक्ष को इस तरह की भाषा का इस्तेमाल करते पहले कभी न देखा गया और न ही कभी सुना गया. भारतीय जनता पार्टी पिछले चुनाव में हार के बाद बिखरने की कगार पर थी, तब संघ ने गडकरी को अध्यक्ष बनाकर पार्टी संगठन को दुरुस्त करने के लिए भेजा था, लेकिन पार्टी संगठन मज़बूत होता नज़र नहीं आ रहा. यह ज़रूर है कि पार्टी ऐसी रणनीति अपनाने पर उतारू है, जिससे सिर्फ़ पार्टी की विचारधारा और कार्यकर्ताओं की किरकिरी हो रही है.

भारतीय जनता पार्टी और अध्यक्ष नितिन गडकरी को इस ज़िम्मेदारी का एहसास नहीं है. अध्यक्ष बनने के बाद शिबू सोरेन की ग़लतियों की वजह से गडकरी के सामने पहली राजनीतिक चुनौती आई. इस पर पूरे देश की नज़र थी कि गडकरी अब क्या करेंगे. भाजपा ने सबसे पहले समर्थन वापस लेने की घोषणा की. इस फ़ैसले का सभी ने स्वागत किया, लेकिन बाद में गडकरी ने सरकार बनाने का फ़ैसला ले लिया. गडकरी के इस फ़ैसले को राजनाथ सिंह का समर्थन मिला.

जब भारतीय जनता पार्टी को झारखंड में सरकार बनाने का मौक़ा मिला तो पार्टी की अंदरूनी कलह जगज़ाहिर हो गई. पार्टी में कितना अनुशासन है, इसका सबको पता चल गया. गडकरी के नेतृत्व में भाजपा के छोटे-छोटे नेताओं को कितना भरोसा है, यह भी साफ हो गया. यही वजह है कि भारतीय जनता पार्टी को सरकार बनाने में इतना समय लग गया. यह साफ हो गया कि झारखंड में पार्टी पूरी तरह से बिखरी हुई है. ऐसा एक भी नेता नहीं है, जो विधायकों या पार्टी को सर्वमान्य हो. यह भी सबके सामने आ गया कि केंद्रीय नेताओं की ऐसी साख नहीं है कि उनके फ़ैसले को झारखंड के विधायक मान लें. यही वजह है कि झारखंड में हर छोटे-बड़े नेता को लग रहा था कि वह मुख्यमंत्री बन सकता है. दिल्ली से राजनाथ सिंह और अनंत कुमार को भेजा गया, लेकिन उन्हें भी खाली हाथ वापस लौटना पड़ा. भाजपा की परेशानी यहीं ख़त्म नहीं हुई. सरकार बनने से पहले ही भाजपा की तरफ़ से बयान आने लगा कि अगली सरकार अपना टर्म पूरा करेगी, यानी यह सरकार पूरे साढ़े चार साल तक चलेगी. जब दिल्ली से आए नेता भावी मुख्यमंत्री की तलाश में लगे थे, उसी वक़्त झारखंड मुक्ति मोर्चा के नेता हेमंत सोरेन धमकी दे रहे थे. दोनों पार्टियों के बीच 28-28 महीने सरकार चलाने की सहमति बनी है. अब यह भाजपा को तय करना है कि वह स्थाई सरकार बनाना चाहती है या नहीं.

बात कहां से शुरू हुई और कहां जाकर ख़त्म हुई, यह शायद फ़ैसला लेने वाले भाजपा नेताओं को पता नहीं चल सका. कांग्रेस को समर्थन के सवाल पर शिबू सोरेन को सज़ा देने निकली भाजपा इस तथाकथित झारखंड ऑपरेशन में पूरी तरह से फंस गई. अगर भारतीय जनता पार्टी पर्दे के पीछे की साठगांठ और डील से ऊपर उठकर सीधे जनता के पास जाती और झारखंड में चुनाव कराने की रणनीति बनाती तो उसकी साख निश्चित रूप से बढ़ जाती. आईपीएल और नीरा राडिया की दलाली को लेकर जनता से समर्थन लेने का अच्छा मौक़ा था, जिसे गडकरी ने गंवा दिया. इतने बड़े घोटाले को लेकर जनता के बीच उतरने से भारतीय जनता पार्टी को झारखंड में बहुमत मिल सकता था. साथ ही इसका फ़ायदा बिहार और उत्तर प्रदेश के चुनावों में भी मिलता, लेकिन नितिन गडकरी ने ठीक इसका उल्टा किया. अब तो हर तरफ़ यही संदेश गया कि भाजपा आईपीएल और नीरा राडिया जैसे घोटाले के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने और जनता को साथ लेने में सक्षम नहीं है. यह पार्टी बस किसी तरह जोड़-तोड़ करके झारखंड में सरकार बनाना चाहती है और इसे सिर्फ़ सत्ता का लालच है.

भाजपा में कुछ भी नहीं बदला है. संगठन के अंदर जब वर्चस्व की लड़ाई होती है तो अंदर की ख़बरें भी बाहर आ जाती हैं. माना यह जा रहा है कि प्राकृतिक संसाधनों और उद्योगों से भरपूर इस मलाईदार राज्य में भारतीय जनता पार्टी के कुछ नेताओं का अपना निजी स्वार्थ है, इसलिए सरकार बनाने के लिए यह घमासान हो रहा है. यही वजह है कि झारखंड में सरकार बनाने को बेचैन भाजपा के कई नेता मुख्यमंत्री पद की रेस में कूद पड़े, जिसकी वजह से राजनीति का यह खेल लंबा खिंचता चला गया. भाजपा की आपसी खींचतान में जीत चाहे जिस गुट की हो, लेकिन पार्टी के लिए यह पूरी कवायद नुक़सानदेह है. सच तो यही है कि मुख्यमंत्री कोई भी हो, उसे अपनी ही पार्टी का पूरा समर्थन नहीं है. ऐसी सरकार कितने दबाव में काम करेगी और जनता के कितने काम आएगी, यह अंदाज़ लगाना मुश्किल नहीं है.

समझने वाली बात यह है कि इसका छत्तीसगढ़ और मध्य प्रदेश की सरकार पर बुरा असर होगा, जहां रमन सिंह और शिवराज सिंह चौहान बेहतर काम कर रहे हैं. यह कैसी रणनीति है, जिससे सरकार बनाने के चक्कर में पार्टी संगठन में विद्रोह की स्थिति पैदा हो जाए, मुख्यमंत्री बनने की होड़ में संगठन अलग-अलग गुटों में बंट जाए, संगठन के सारे दोष सामने आ जाएं और जनता का पार्टी से विश्वास उठ जाए. और तो और, गडकरी के नेतृत्व में भाजपा की यह रणनीति ऐसी है, जिससे दूसरे राज्यों में अच्छा काम करने वाले मुख्यमंत्रियों की छवि पर छींटे पड़ने लगेंगे. हैरानी की बात यह है कि झारखंड में पार्टी के पास बहुमत से आधी सीटें हैं. झारखंड की कुल 82 सीटों में सिर्फ़ 18 भाजपा के पास हैं, फिर भी उसने इतना बड़ा जोखिम झारखंड मुक्ति मोर्चा के समर्थन के आधार पर लिया है. वही पार्टी, जिसके नेता ने कांग्रेस का साथ दिया और जिसके नेता सरकार बनने से पहले ही उसे गिराने की धमकी दे रहे हैं. अब ऐसी रणनीति बनाने वाले पर देश की जनता कैसे विश्वास करे. जनता यह कैसे मान ले कि भाजपा के पास कांग्रेस से बेहतर सरकार देने का विवेक और शक्ति है.

लोकतंत्र नेताओं की रणनीति, राजनीतिक दलों की साठगांठ और डील पर नहीं चलता. जनता का विश्वास लोकतंत्र का सबसे अहम पहलू है. अटल बिहारी वाजपेयी को लगा कि इंडिया शाइनिंग को लोगों का आशीर्वाद मिलेगा, लेकिन वह भी हार गए. इंदिरा गांधी इमर्जेंसी लगाने के बावजूद चुनाव में गईं, वह भी हार गईं, लेकिन लोकतंत्र की जीत हुई. देश को बचाए रखने के लिए यह ज़रूरी है कि जनता का लोकतंत्र में विश्वास बना रहे. आज यह भरोसा टूट रहा है. इसे बनाए रखना सरकार की अपेक्षा विपक्ष की ज़्यादा ज़िम्मेदारी है. अगर राजनीतिक दल सरकार बनाने और गिराने को शतरंज का खेल समझने लगेंगे तो लोकतंत्र ख़तरे में आ जाएगा. आज देश के सामने यही ख़तरा है.

manish@chauthiduniya.com

भारत की सबसे बड़ी अदालत भूख, बेरोज़गारी, सामाजिक असुरक्षा और कुपोषण से जुड़े मामलों की एक जनहित याचिका की सुनवाई करते हुए अभी तक 65 से ज़्यादा ऐसे आदेश दे चुकी है, जो भारत सरकार को उसके कर्तव्यों और ज़िम्मेदारियों को निभाने के लिए मजबूर करते हैं.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

अब आएगा ऊंट पहाड़ के नीचे!

मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया (एमसीआई) के अध्यक्ष केतन देसाई को पिछले दिनों जब सीबीआई ने गिरफ़्तार किया तो आश्चर्य इसलिए हुआ कि नौकरशाहों के अंदाज़ में काम करने वाले इस अधिकारी को पकड़ने में जांच एजेंसी को इतनी देर कैसे लग गई. पिछले कई सालों से सीबीआई के पास देसाई के ख़िलाफ़ आरोपों की लंबी लिस्ट बनती जा रही थी.

नए मेडिकल कॉलेजों को स्वीकृति देने की पूरी प्रक्रिया उन्होंने पूरी तरह अपने क़ब्ज़े में कर ली थी. इसके लिए उन्होंने नौकरशाहों की ही तरह काम करने वाले इंस्पेक्टरों की एक फौज खड़ी कर रखी थी, जो उनके विश्वसनीय सिपहसालार थे. देसाई ने सबका मेहनताना तय कर रखा था. अच्छी बात यह है कि स्वास्थ्य मंत्री और उनके मंत्रालय के अधिकारियों ने समय रहते अपनी मिट्टी पलीद होने से बचा ली. मामले की गंभीरता को समझते हुए मंत्रालय ने एमसीआई में फैले भ्रष्टाचार की जांच के लिए एक टीम का गठन कर दिया है. व्यक्तिगत स्तर पर स्वास्थ्य मंत्री का मानना है कि इंडियन मेडिकल काउंसिल एक्ट, 1956 के मौजूदा प्रावधानों के अंतर्गत एमसीआई में पारदर्शी और निष्पक्ष निर्णय प्रक्रिया को सुनिश्चित नहीं किया जा सकता. एमसीआई की गतिविधियों को नियंत्रित करने वाला यह क़ानून पांच दशक से भी ज़्यादा पुराना है. हाल के दिनों में इसमें संशोधन की कोशिश भी संसदीय समिति के अड़ंगे के चलते नाकाम हो गई. देश में मेडिकल शिक्षा को नियंत्रित करने के लिए सरकार की सारी उम्मीदें अब प्रस्तावित छतरीनुमा निकाय पर टिकी हैं, जिसकी चर्चा पिछले साल जून में राष्ट्रपति के अभिभाषण में की गई थी. नेशनल काउंसिल फॉर ह्यूमन रिसोर्सेज ऑन हेल्थ नामक इस प्रस्तावित संगठन का मुख्य उद्देश्य देश में मेडिकल शिक्षा के क्षेत्र में फैली अव्यवस्था को काबू करना है.

स्वास्थ्य सचिव सुजाता राव के नेतृत्व में गुलाम नबी आज़ाद के अधिकारियों ने कई संशोधनों का प्रस्ताव रखा था. इनमें एमसीआई अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष के कार्यकाल को दो टर्म तक सीमित करना, केंद्र सरकार के हाथों में काउंसिल की एग्ज़ीक्यूटिव कमेटी को भंग एवं अध्यक्ष को बर्खास्त करने की शक्ति और सरकार द्वारा काउंसिल को दिशानिर्देश जारी करने का अधिकार जैसे प्रस्ताव शामिल थे. गुलाम नबी आज़ाद चाहते हैं कि प्रस्तावित संगठन के दायरे में मेडिकल शिक्षा के अलावा डेंटल काउंसिल, आयुर्वेद, नर्सिंग और पैरामेडिकल को भी शामिल किया जाए.

प्रस्तावित नेशनल काउंसिल फॉर ह्यूमन रिसोर्सेज ऑन हेल्थ बिल में ऐसे ही एक छतरीनुमा निकाय के गठन की चर्चा की गई है और अभी इस पर राज्यों के साथ विचार–विमर्श का दौर जारी है. एक बार यह अस्तित्व में आ गया, तो मौजूदा संस्थाएं स्वत: ही इसकी जद में आ जाएंगी.

dilipcherian@chauthiduniya.com

रोटी के नाम पर धोखा

रूबी अरुण

ग़रीबों का पेट भर सकने वाले राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा बिल में तमाम विसंगतियां हैं, जो भारत की ग़रीब जनता के हित में नहीं है. महिला बाल विकास मंत्रालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, स्वास्थ्य एवं कल्याण मंत्रालय और कृषि एवं खाद्य मंत्रालय भूख और ग़रीबी के उन्मूलन के लिए कुल 25 योजनाएं चला रहे हैं, लेकिन हक़ीक़त में इन योजनाओं का नतीजा कहीं देखने को नहीं मिल रहा है. महज़ काग़ज़ी आंकड़ों के आधार पर ही भूख से लड़ने की बात कही जा रही है. सरकार की योजना के मुताबिक़, अगले तीन महीने में इस बिल को कैबिनेट की मंज़ूरी मिल जाएगी. और तब, इसे संसद में पेश कर आम आदमी को भोजन का अधिकार देने की अपनी ऐतिहासिक उपलब्धि पर शायद सरकार फूली न समाए, पर क्या सचमुच इस बिल से ख़ुशहाली आ जाएगी?

भारत की सबसे बड़ी अदालत भूख, बेरोज़गारी, सामाजिक असुरक्षा और कुपोषण से जुड़े मामलों की एक जनहित याचिका की सुनवाई करते हुए अभी तक 65 से ज़्यादा ऐसे आदेश दे चुकी है, जो भारत सरकार को उसके कर्तव्यों और ज़िम्मेदारियों को निभाने के लिए मजबूर करते हैं. इसके अलावा अदालत ने सरकार को ज़्यादा बजट आवंटन का भी आदेश दे रखा है. सरकार ने अभी तक अदालती आदेशों का पालन करने की दिशा में तत्परता से क़दम नहीं बढ़ाया है. अलबत्ता वह पिछले कई सालों से लटके खाद्य सुरक्षा बिल को क़ानून बनाने की दिशा में सक्रिय हो उठी है. सवाल फिर वही उठता है कि क्या सरकार सचमुच देश से भूख और ग़रीबी दूर करना चाहती है या फिर सुप्रीम कोर्ट के आदेशों के चाबुक से बचने के लिए वह क़ानून बनाने का ढोंग कर रही है. सवाल इसलिए भी कि खाद्य सुरक्षा के दायरे में मध्यान्ह भोजन और आंगनवाड़ी योजनाएं भी आती हैं, पर सरकार इन्हें क़ानूनी दायरे से बाहर रखने की जुगत में लगी है, ताकि इसमें निजी क्षेत्र निवेश कर सकें और सरकार अनुदान देने एवं दान लेने के खेल से अरबों का वारा–न्यारा कर सके. सरकार की नीयत इससे भी समझी जा सकती है कि सुप्रीम कोर्ट ने पहले ही खाद्य सुरक्षा के अनेक अधिकारों को अपने आदेशों के ज़रिए सुनिश्चित किया है. इनमें हर परिवार को 35 किलो राशन के अलावा अंत्योदय अन्न योजना के तहत और भी सस्ता राशन, जननी सुरक्षा योजना, मातृत्व सुरक्षा योजना, आईसीडीएस के तहत शिशुओं एवं बच्चों के लिए पूरक पोषण आहार और अकेली औरतों, बेघर एवं छह वर्ष तक के बच्चों की ज़रूरतों को पूरा करने का अधिकार शामिल है. सरकार की मंशा पर संदेह इसलिए भी है, क्योंकि यह बिल प्राथमिकताओं में शामिल होने के बाद भी कई सालों से लटका पड़ा था. लेकिन, जैसे ही इन अधिकारों का विस्तार करने वाली अदालत द्वारा गठित वाधवा समिति ने अपनी रिपोर्ट सुप्रीम कोर्ट में दाख़िल की, सरकार ने भी खाद्य सुरक्षा संबंधी अपना मसौदा जारी कर दिया.

सरकार के इस क़दम से खाद्य सुरक्षा विशेषज्ञों में बेहद क्षोभ है, क्योंकि वे इस विधेयक को अधूरा मानते हैं. सीपीआई नेता, खाद्य सुरक्षा विशेषज्ञ एवं सामाजिक कार्यकर्ता अतुल अंजान कहते हैं कि मौजूदा विधेयक के क़ानून बनने से देश के ग़रीबों और भुखमरी के शिकार लोगों पर दोहरी मार पड़ेगी. मसौदा यह कहता है कि राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा योजना का लाभ केवल उन्हें मिलेगा, जिन्हें केंद्र सरकार ग़रीब मानेगी. भारत सरकार केवल छह करोड़ लोगों को ग़रीब मानती है, जबकि योजनाओं का क्रियान्वयन करने वाली राज्य सरकारें ग्यारह करोड़ लोगों को ग़रीब मानती हैं. मसौदे के मुताबिक़, राज्य सरकारों द्वारा पहचाने गए ग़रीबों की इस योजना में कोई जगह नहीं है. मतलब यह कि लगभग पांच करोड़ ग़रीबों को पहले ही दरकिनार कर दिया जा रहा है. उस पर भी तुर्रा यह कि देश की आबादी और उसमें भी ग़रीबों की संख्या का सही आंकड़ा सरकार के पास मौजूद नहीं है. जनगणना होनी है अभी. उसमें भी जातिगत आधार पर कई पेंच हैं. वाधवा समिति की रिपोर्ट कहती है कि देश के पचास करोड़ लोग ग़रीबों में गिने जाएंगे. वर्ष 2010–11 में भारत सरकार ने ग़रीबी से जूझने के लिए एक लाख अट्ठारह हज़ार पांच सौ पैंतीस करोड़ रुपये का बजट रखा है. उसमें बयासी हज़ार एक सौ करोड़ रुपये और जोड़ने की ज़रूरत है.

राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा क़ानून के जानकार अर्जुन सेन गुप्ता कहते हैं कि देश के 77 करोड़ लोग महज़ 20 रुपये प्रतिदिन पर गुज़र–बसर करते हैं. 84 करोड़ लोगों को पर्याप्त पोषण वाला भोजन नहीं मिल पाता. ज़ाहिर है कि 75 से 80 फ़ीसदी जनसंख्या भूख और ग़रीबी के साथ जी रही है. सुरेश तेंदुलकर समिति की रिपोर्ट के मुताबिक़, देश की 37 करोड़ आबादी की हालत इतनी दयनीय है कि उसके लिए अलग से ख़ास प्रावधानों की ज़रूरत है. साथ ही भुखमरी और ग़रीबी को लेकर अलग–अलग योजनाएं तैयार करने की ज़रूरत है. इस बिल में एक और ज़बरदस्त खामी है. इसके मसौदे में पोषण जैसे बेहद अहम मुद्दे को कहीं जगह नहीं दी गई है. पहले तो इस मसौदे में यह प्रावधान था कि प्रत्येक बीपीएल परिवार को हर महीने तीन रुपये किलो की दर से 25 किलो अनाज मिला करेगा. सरकार के इस मसौदे पर विपक्षी पार्टियों ने बेहद बावेला मचाया. तब सोनिया गांधी ने प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को एक पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने यह गुज़ारिश की कि बीपीएल परिवारों के लिए शुरू की जा रही इस योजना के मसौदे में बदलाव करते हुए प्रति महीने दिए जाने वाले अनाज को 25 से 35 किलो कर दिया जाए. प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने भी सदाशयता दिखाई और तुरंत उनके अनुरोध पर मुहर लगा दी. लिहाज़ा अब एक परिवार को महीने में 35 किलो अनाज़ मिला करेगा और वह भी तीन रुपये किलो की दर से. जबकि न्यूनतम ज़रूरतों के आधार पर भी देखा जाए तो चार सदस्यों के एक परिवार को महीने में कम से कम 56 किलो अनाज, पांच किलो दाल और चार किलो खाद्य तेलों की ज़रूरत है. एक ऐसे देश में, जहां पहले ही वसा और प्रोटीन की कमी से बहुत बड़ी आबादी कुपोषण से जूझ रही है, वहां इस तरह का मसौदा भूख से लड़ रहे लोगों को मौत की ओर ढकेलने का सबब बन सकता है.

खाद्य सुरक्षा विशेषज्ञ उत्सा पटेल कहते हैं कि देश की 84 करोड़ जनता के कुपोषित होने का मतलब देश का कुपोषित होना है. बच्चों के कुपोषित होने का आंकड़ा तो और भी भयावह है. कुल 46 फ़ीसदी बच्चे कुपोषित हैं, जो दक्षिण अफ्रीका के सहारा से भी दोगुना है. भारत में मातृत्व मृत्यु दर पचास प्रतिशत है. दुनिया भर में भुखमरी के शिकार लोगों का चालीस प्रतिशत हिस्सा भारत में रहता है, जिसकी वजह कुपोषण है. सरकार को चाहिए कि लाभार्थियों की संख्या कम करने की जगह सकल सार्वजनिक वितरण व्यवस्था की आवश्यकता है. चिंता का सबब यह भी है कि नए मसौदे में अब जो परिवार ग़रीबों में भी ग़रीब हैं, उन्हें अब दो रुपये प्रति किलो की जगह तीन रुपये प्रति किलो क़ीमत चुकानी पड़ेगी. भाजपा किसान मोर्चा के अध्यक्ष विनोद पांडे कहते हैं कि क्यों नहीं भारत सरकार ब्राजील की तरह भोजन के अधिकार को हर नागरिक का संवैधानिक अधिकार बनाती है. ग़रीबी रेखा और उसके नीचे रहने वाले लोगों की संख्या के योजना आयोग के अनुमानों को लेकर पहले भी बहुत विवाद हुआ है, फिर भी बीपीएल परिवारों की संख्या निर्धारित करने का अधिकार योजना आयोग के ही पास है. उदाहरण के तौर पर अगर बिहार की ही बात की जाए, तो राज्य सरकार के मुताबिक़ वहां बीपीएल परिवारों की संख्या 1.40 करोड़ है, पर केंद्र सरकार वहां महज़ 65.23 लाख बीपीएल परिवारों के वजूद को ही मानती है. मतलब अगर नया खाद्य सुरक्षा क़ानून लागू होता है तो बिहार के लगभग 75 लाख परिवार खाद्य असुरक्षा के घेरे में आ जाएंगे. मसौदे में इस बात का साफ ज़िक्र है कि केंद्र सरकार द्वारा तय की गई संख्या से अगर ज़्यादा संख्या बीपीएल परिवारों की हुई तो उसका ख़र्च राज्य सरकारों को ही उठाना पड़ेगा. और, फ़िलहाल राज्य सरकारों की जो आर्थिक स्थिति है, उसमें यह मुमकिन नहीं लग रहा. इस मसौदे और केंद्र सरकार के रुख़ से अधिकांश राज्य सरकारें भी चिंतित हैं. राज्य सरकारों को इस बात का डर है कि केंद्र सरकार भोजन के अधिकार का अधूरा क़ानून बनाकर भी सियासी फ़ायदा उठा ले जाएगी और जब राज्य सरकारें इस क़ानून को सफलता से लागू नहीं कर पाएंगी, तब लोगों की नाराज़गी और असफलता उनके हिस्से आएगी. ऐसे में अगर यह कहा जाए कि केंद्र सरकार राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा क़ानून के ज़रिए अपनी ही जनता को भूखा मारने की योजना पर काम कर रही है तो ग़लत नहीं होगा.

ruby@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 2 अंक 11
दिल्ली, 24 मई–30 मई 2010

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210–211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के – 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय

के –2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ–2, सेक्टर –11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश–201301

फोन न.
संपादकीय 0120–4783999/11–23418962
विज्ञापन + 91 9873575318
प्रसार + 91 9810017924
फैक्स न. 0120–4783950

पृष्ठ–16 (+4)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुन: प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

मोंगरा बांध बने पांच साल हो रहे हैं, लेकिन मुआवज़े का मसला अभी तक नहीं सुलट सका है. केवल मोंगरा गांव के सौ से अधिक परिवारों की ज़मीन बांध में डूबी.

मोंगरा बांध का पानी किसके लिए?

आदियोग

छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव ज़िले का अंबागढ़ चौकी ब्लॉक. पारा 46 डिग्री को छू रहा था. चिलचिलाती धूप में छह लोगों की टोली पांगरी नामक छोटे से सुदूर आदिवासी गांव से मोंगरा बांध से जुड़े सवाल लेकर सात दिन के पैदल सफ़र पर रवाना हुई. प्रचार के लिए किसी ढोल-नगाड़े के बग़ैर और बेहद अनौपचारिक अंदाज़ में. यह सफ़र मोंगरा गांव पहुंच कर ख़त्म हुआ. लगभग हर गांव से औसतन पांच लोग अगले गांव तक हमसफ़र बने. टोली ने कुल 13 गांवों में दस्तक दी और इस दौरान वह एक से बढ़कर एक त्रासद विसंगतियों और भीषण समस्याओं से दो-चार हुई. इस बीच यह ख़बर भी सुनने को मिली कि सरकार शिवनाथ नदी के इस बांध की लंबाई में 17 किलोमीटर और ऊंचाई में पांच फुट का इज़ाफा किए जाने के मूड में है. याद रहे कि शिवनाथ देश की पहली नदी है, जिसे ख़रीदा-बेचा जा चुका है. बीते अप्रैल माह के दूसरे पखवाड़े में किया गया यह पैदल सफ़र जुरमिल मोर्चा एवं छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा मज़दूर कार्यकर्ता समिति का साझा क़दम था और जिसका आयोजन भूख और विस्थापन विरोधी आंदोलन के नाम से किया गया. झंडे, बैनर और इलाक़े में उलझे संगठन इससे सीख ले सकते हैं.

शेर अर्ज़ है, *कल इक महल देखा तो देर तक सोचा/ इक मकां बनाने में कितने घर लुटे होंगे.* विकास की चकाचौंध इसी महल का नाम है. इस महल की बुलंदी इसलिए है कि उसके चारों ओर अंधियारे का राज है. यह अंधियारा ग़रीबी और अभाव का है, बेकारी और लाचारी का है, अन्याय और अत्याचार का है, शिक़ायत और सुनवाई के लगातार बंद होते दरवाज़ों का है. अंधियारा छंटने का नाम नहीं ले रहा, हर कहीं पसरता-गहराता जा रहा है और सरकारें हैं कि महलों की चाकरी और चौकीदारी में मगन हैं. उन्हें उस विकास की चिंता है, जो खाए-पिए-अघाए लोगों के हित में है और जिसका रास्ता ज़्यादातर लोगों और कुदरत की ऐसी-तैसी से होकर गुज़रता है. इसके तमाम उदाहरण बिखरे पड़े हैं. मोंगरा बांध भी उन्हीं में एक है. इससे प्रभावित गांवों की पदयात्रा ने पांच सवाल सामने रखे-सरकार की पुनर्वास नीति क्या है और कहां है, सही मुआवज़ा कैसे और कब तय होगा, बांध का पानी किसके लिए है, सिंचाई के लिए क्यों नहीं है और विकास का मतलब आख़िर क्या होता है. पदयात्रा का कुल संदेश यही था कि अगर बांध की संभावना है तो उसे रोकने का उपाय किया जाना चाहिए. मोंगरा बांध 14 गांवों की खेतिहर ज़मीन का बड़ा हिस्सा गटक चुका है. इनसे जुड़े कई टोले तो तीन तरफ़ से पानी से घिर गए हैं और वहां शौच तक के लिए जगह की किल्लत हो गई है. बांध में डूबने के लिए पोसार गांव खाली हो चुका है. इस सूची में कुल 56 गांव शामिल किए जाने हैं.

मोंगरा बांध बने पांच साल हो रहे हैं, लेकिन मुआवज़े का मसला अभी तक नहीं सुलट सका है. केवल मोंगरा गांव के सौ से अधिक परिवारों की ज़मीन बांध में डूबी. इनमें 32 परिवार मुआवज़े के लिए न जाने कब से यहां-वहां चक्कर काट रहे हैं. यह क़िस्सा हरेक गांव का है. वैसे, जिन्हें मुआवज़ा मिला भी तो उनमें से ज़्यादातर को आधा-अधूरा ही और वह भी बाज़ार दर से कम पर. मुआवज़ा देने-दिलाने का बाज़ार भी ख़ूब गर्म हुआ. जैसे-तैसे हाथ आई मुआवज़े की राशि कहां फुर्र हो गई, इसका पता ही नहीं चला. मुआवज़ा तय करने का मानक नदारद था. मुआवज़ा कितना मिलेगा, यह सर्वेक्षण करने वालों और संबंधित अधिकारियों की मर्ज़ी पर निर्भर था. ज़ाहिर है कि उनकी कृपा रसूखदारों पर ही बरसी. उन परिवारों की सूची बहुत लंबी है, जिनकी धनहा ज़मीन सरकारी दस्तावेज़ों में भर्री और असिंचित ज़मीन दर्ज कर दी गई. धनहा माने धान की फ़सल के लिए बेहतर और भर्री माने बमुश्किल कोदों-कुटकी उगाने लायक़.

छह साल पहले तहसील कार्यालय के बाहर लगभग एक माह का धरना हुआ था. यह मोंगरा बांध विरोधी आंदोलन का आख़िरी पड़ाव था. इसमें खड़खड़ी गांव की रेंगीला बाई भी शामिल हुई थीं. वह कहती हैं कि उस धरने से बड़ा दबाव बना और मुआवज़ा दोगुने से भी अधिक बढ़ गया. वरना तो सरकार प्रति एकड़ 16 हज़ार रुपये ही देने जा रही थी. बिना लड़े कहीं कुछ हासिल होता है क्या? हालांकि यह समझ इधर फीकी पड़ी है और यह अकारण नहीं है. बांध के सवाल पर वोट के सौदागरों ने राजनीति की दुकान चमकाई और जुझारू ताक़तों ने बीच भंवर में संघर्ष से अपने हाथ खींच लिए. रही-सही कसर बिचौलियों ने पूरी कर दी. जानकार बताते हैं कि मोंगरा बांध बनाने का ख्याल आज़ादी से पहले आया था, लेकिन उसे ज़मीन पर उतारने का साहस नहीं किया जा सका. आज़ादी के बाद 1967 में इसका प्रस्ताव पेश हुआ, तो भी हालात कुछ ऐसे रहे कि दो दशक तक यह ठंडे बस्ते में पड़ा रहा. 1989 में इसने तेज़ी पकड़ी, जब बांध के लिए गांव चिन्हित किए जाने लगे. इसने इलाक़े की राजनीति में उबाल पैदा कर दिया और जिसने अगले एक दशक तक बांध की योजना को स्थगित रखा. आख़िरकार छत्तीसगढ़ नया राज्य बना, कांग्रेस ने उसकी बागडोर संभाली और अजीत जोगी उसके पहले मुख्यमंत्री बने. तब तक राजनीतिक समीकरण बदल चुके थे. मतलब यह कि मोंगरा बांध का प्रस्ताव स्वीकृत होने में कोई परेशानी नहीं हुई, तो भी जोगी सरकार इससे आगे नहीं जा सकी. आगे जाने का काम पूर्ण बहुमत से बनी डॉ. रमन सिंह की दूसरी सरकार ने किया. योजना कांग्रेसी सरकार ने बनाई और उसे भाजपा सरकार ने साकार कर दिया. इसे रिले रेस का भी नाम दिया जा सकता है. दोबारा सत्ता में लौटी रमन सरकार द्वारा मोंगरा बांध के बारे में प्रचार किया गया था कि उसका पानी सिंचाई के काम आएगा और इलाक़े में ख़ुशहाली की फ़सल झूमेगी. इस प्रचार की पोल खोलती कुछ लोगों की सक्रियता रंग लाई और बांध के ख़िलाफ़ लोग एकजुट होने लगे. सरकार को इसका अंदाज़ा था और उससे निपटने की तैयारी भी. प्रतिरोध के स्वर उबाल खाते कि लोगों को पटाने-बांटने के हथकंडे उसे ठंडा कर देने में कामयाब हो गए. मैदान में उतरे संगठनों की आपसी खींचतान ने भी इसमें मदद पहुंचाई. इस तरह बांध विरोधी पक्ष कमज़ोर होकर टूट गया और बांध का निर्माण शुरू हो गया. इससे प्रभावित होने जा रहे लोग ही बांध बनाने में ठेके के मज़दूर हो गए. पुरुष 50 रुपये और महिलाएं 40 रुपये प्रतिदिन की मज़दूरी पर.

मज़दूरी में यह लिंग भेद भी बहस का मुद्दा नहीं बन सका. प्रसंगवश, बताते चलें कि बांध विरोधी लहर में महिलाओं की हिस्सेदारी आधे से अधिक थी, लेकिन अगुवाई में लगभग शून्य. यह दस्तूर है कि महिलाएं घरेलू ज़िम्मेदारी उठाती हैं और खेती में भी हाथ बंटाती हैं. पदयात्रा के दौरान ऐसी कई महिला किसानों से भेंट हुई, जिन्हें नहीं पता कि उनके परिवार की कितनी ज़मीन डूबने में गई, उसका कितना मुआवज़ा मिला, कहां ख़र्च हुआ या कितनी ज़मीन अभी पास में है. पदयात्रा के दौरान ग्राम सुराज अभियान भी जारी था. यह रमन सिंह सरकार का तीन साल से चल रहा सालाना कार्यक्रम है, जिसके तहत सरकारी अमला गांव-गांव जाता है. मुख्यमंत्री से लेकर सत्तापक्ष के विधायक-सांसद भी इसमें जुट जाते हैं. कहने को तो यह सरकार से ग़रीब-गुरबों की दूरी घटाने का अभियान है, लेकिन दरअसल यह नेकनीयती का लबादा ओढ़ कर दुखियारों को भरमाने का नाटक है. तयशुदा तारीख़ पर संबंधित अधिकारी-कर्मचारी गांव पहुंचते हैं. उन्हें गांव में ही रात बिताने का आदेश है, लेकिन ऐसे असुविधाजनक आदेशों की कौन परवाह करता है. उनकी भूमिका प्रचारक, उपदेशक और डाकिए की होती है. वे सुनते कम, सुनाते ज़्यादा हैं. सरकारी कार्यक्रमों की जानकारियां बांटते हैं. सफ़ाई बरतने, पीने के लिए साफ़ पानी का इस्तेमाल करने और खेती के उन्नत तरीके आज़माने जैसी सीख देते हैं. निजी या सामूहिक हित के आवेदन स्वीकार करते हैं. आमतौर पर इन आवेदनों का तत्काल निपटारा नहीं हो पाता और उन्हें उचित कार्रवाई के लिए आगे बढ़ा दिया जाता है. आवेदन साल भर धूल खाते हैं और ज़्यादातर यही होता है कि अगले साल आकर ग्राम सुराज अभियान उन आवेदनों का नवीनीकरण कर देता है. बताते चलें कि राज्य के अख़बारों ने इस अभियान के लिए जगह की कमी नहीं होने दी. थोड़ी-बहुत चुटकी ली और कुल मिलाकर शाबाशी दे दी. अभियान के तहत मुख्यमंत्री ने भारी सुरक्षा के बीच दंतेवाड़ा के उस डोरनापाल में अपनी चौपाल लगाई, जहां सुरक्षाबलों की छतरी के नीचे सलवाजुडूम का दबदबा है और जिसके आगे माओवादियों के सीधे नियंत्रण का इलाक़ा शुरू होता है.

भान साहू

अख़बारों ने इसे प्रमुखता से जगह दी. उन्होंने यह छानबीन करने की ज़हमत नहीं उठाई कि मुख्यमंत्री को सौंपे गए आवेदनों में विस्थापन से जुड़ा एक भी मामला क्यों नहीं जुड़ सका या क्या आवेदन के लिए लक्ष्मण रेखाएं पहले से खींच दी गई थीं. वैसे, अगर नया रायपुर की योजना का फुल पेज विज्ञापन हासिल करना है तो उसका दाम चुकाता विस्थापन का दर्द भला कैसे बयां हो सकता है. पदयात्रा की अगुवा भान साहू ग़रीब विधवा हैं. कुल आठवीं तक पढ़ी हैं, लेकिन समाज और ज़िंदगी के अनुभवों से गढ़ी हैं. धाराप्रवाह बोलती और बेबाक राय रखती हैं. पदयात्रा के दौरान उन्होंने अख़बारों की भी ख़ूब ख़बर ली. इसी कड़ी में उन्होंने वैकल्पिक मीडिया के बतौर सीजी नेट स्वर से ग़रीबों का परिचय कराया. यह संदेशों के आदान-प्रदान का फोन आधारित नेटवर्क है, जो गोंडी, कुडुक, सादरी एवं छत्तीसगढ़ी जैसी पीछे छूट रही भाषाएं बोलने-समझने वालों के बीच तेज़ी से लोकप्रिय हो रहा है. वंचितों-उपेक्षितों के इस अनूठे मंच में भागीदारी की सुविधा को नि:शुल्क किए जाने की कोशिशें जारी हैं.

मोंगरा बांध का बोर्ड बताता है कि इसका पानी सिंचाई के लिए है, लेकिन बांध से सटी प्यास से बेहाल धरती इस खुले झूठ की गवाही देती है. नाकाफी ही सही, लेकिन पिछले साल ज़रूर आसपास के कुछेक गांवों को बांध का पानी नसीब हुआ था. इस साल जनवरी में मोंगरा से चिरचारीकला तक यानी बांध के क़रीब बसे 25 गांवों में मुनादी हुई कि किसान रबी की बुआई की तैयारी करें, सिंचाई के लिए उन्हें बांध का पानी मिलेगा. बावजूद इसके बांध का पानी खेतों तक नहीं पहुंच सका और किसानों की उम्मीदों पर पानी फिर गया. प्रदेश के तमाम इलाक़ों की तरह अंबागढ़ चौकी ब्लॉक भी पिछले दो सालों से अकाल की मार झेल रहा है. अधिसंख्य आबादी के सामने पहले से खड़ा ज़िंदा रहने का संकट और घना हो गया है. कई घरों के दरवाज़ों पर महीनों से जड़े ताले काम की तलाश में हुए पलायन की तेज़ रफ़्तार की निशानदेही करते हैं. बेशक, छत्तीसगढ़ के लिए पलायन कोई नई बात नहीं. खेती के कामकाज से छुट्टी पाने के बाद ख़ासकर नौजवानों का एक हिस्सा शहरों का रुख़ करता रहा है. इस ग़रीब इलाक़े में पलायन अतिरिक्त कमाई करने और लगे हाथ शहर की रंगीनियों का लुत्फ़ उठाने का भी ज़रिया रहा है, लेकिन आज यह ज़िंदा रहने की मजबूरी में तब्दील हो गया है. मोंगरा बांध से प्रभावित केवल खड़खड़ी गांव से ही इसका बख़ूबी अंदाज़ा लगाया जा सकता है. यहां कोई पौने तीन सौ घर हैं और पिछले साल इसके सवा सौ से अधिक बाशिंदों ने पलायन का रास्ता पकड़ा.

दूसरी तरफ़ सरकारी फ़ाइलों में गांव का मौसम गुलाबी है. ग़रीबों की संख्या लगातार घटती जा रही है. 2015 तक पूरी दुनिया में आधी ग़रीबी घटा देने का लक्ष्य है और इसे हासिल करने के लिए अमीर देशों की ओर से ग़रीब देशों में अनुदानों की बरसात है. तो भी, ग़रीब का आटा और गीला होता जा रहा है. इसलिए कि इस मेहरबानी का शुक्रिया अदा करती सरकारी नीतियां, कार्यक्रम एवं उसकी प्रक्रियाएं ग़रीबी के समंदर को और अधिक चौड़ा व गहरा कर देने की भूमिका अदा कर रही हैं. लेकिन आंकड़ों में ख़ुशहाली की तस्वीर ज़रूर खींची जा सकती है. इस सिलसिले में खड़खड़ी गांव की रमित बाई का ज़िक्र काफी होगा. वह कोई 40 साल की हैं. 12 साल पहले पति की मौत के साथ ही घर संभालने की ज़िम्मेदारी उनके कंधों पर आ गिरी. दो कोठरियों का उनका छोटा सा घर है. एक में खाना पकता है और दूसरी में बेटा-बहू अपनी बच्ची समेत रहते हैं. रात काटने के लिए उन्हें अपनी बेटी के साथ दूसरे घरों की शरण लेनी होती है. जवान बेटी के हाथ पीले करने की चिंता सताती रहती है, लेकिन क्या करें? उनके हाथ तो खाली हैं. बंटवारे में मिली कुल एक एकड़ ज़मीन भूख के सवाल को हल नहीं कर पाती. बाज़ार से चावल ख़रीदना होता है-सबसे सस्ता खंडवा चावल, कम से कम 16 रुपये किलो में. इसलिए कि भले ही उनके परिवार के नाम जॉबकार्ड है, लेकिन राशन का पीला कार्ड नहीं. राहत की बात बस इतनी है कि दो साल पहले उन्हें आंगनवाड़ी सहायिका का काम मिल गया और इस तरह एक हज़ार रुपये मासिक आय का बंदोबस्त भी हो गया. यह राहत गांव के अस्नूराम दुधनांगे की दौड़भाग से संभव हुई, जो कभी मोंगरा बांध के ख़िलाफ़ लोगों को जुटाने वालों में शामिल थे. यह साथ और संयोग आख़िर कितनों को नसीब हो पाता है?

मोंगरा बांध के दाऊरंजन सिंह कुंजाम 70 साल के बुज़ुर्ग हैं, लेकिन फुर्ती और आशावादिता के मामले में उतने ही युवा हैं. गरज कर बोले, बहुत अंधेर हो रही है. बांध पानी से लबालब है और खेत सूखे पड़े हैं. बांध का पानी भिलाई इस्पात उद्योग को बेचा जा रहा है, राजनांदगांव के नगर निगम से उसका सौदा किया जा रहा है. इसे रोकना होगा, वरना यह इलाक़ा और अधिक ग़रीबी के दलदल में धंस जाएगा. अंधी-बहरी सरकार को आख़िर कब समझ आएगी और कैसे? सरकार तभी चेतेगी, जब लोग अपने हित-अधिकारों की सुध लेंगे और उठ खड़े होंगे. मोंगरा बांध की लंबाई और ऊंचाई बढ़ाए जाने की ताज़ा ख़बर ने थके-हारे लोगों में एक बार फिर गर्मी भरने की शुरुआत कर दी है. ताक़त के नशे में सरकारें अक्सर मनमानी पर उतारू रहती हैं और भूल जाती हैं कि संकट का सैलाब सिर पर चढ़ने लगे तो सब्र का बांध टूट जाता है.

feedback@chauthiduniya.com

गंगाजल बेचने की सरकार की मंशा का भारतीय साधु समाज एवं जगतगुरु शंकराचार्य स्वरूपानंद जैसी हस्तियां शुरू से ही विरोध कर रही हैं.

बसपा का ऑपरेशन क्लीन

सुधार की क़वायद है या राजनीतिक ड्रामा

अजय कुमार

बसपा प्रमुख मायावती ने वायदे के अनुसार पार्टी से क़रीब पांच सौ दागियों को बाहर का रास्ता दिखा दिया. बीते 30 अप्रैल को उन्होंने स्वयं इस बात की घोषणा की. यह सिलसिला यहीं नहीं थमा है. अभी दागी नेताओं की एक और सूची तैयार की जाएगी. बसपा द्वारा दागियों को पार्टी से बाहर करने का फ़ैसला राजनीतिक गलियारों में चर्चा का विषय बना हुआ है. एक ओर लोग इसे देर से सही, पर सही क़दम बता रहे हैं, तो दूसरी ओर कुछ लोग इसे आगामी विधानसभा चुनाव से जोड़कर देख रहे हैं.

मायावती

समय वाकई बहुत बलवान होता है. समय के साथ इंसान की ज़रूरतें भी बदलती रहती हैं. ऐसा ही कुछ मायावती के साथ हो रहा है. लगभग तीन वर्षों के बाद उनका तीसरा नेत्र खुला और अचानक वह बसपा से अपराधियों का सफ़ाया करने की कसम खाने लगी हैं. बसपा प्रमुख ने पार्टी में अपराधियों की मौजूदगी के लिए हास्यास्पद रूप से विपक्ष को दोषी करार देकर अपनी ही हंसी उड़ाई है. वास्तव में मायावती समय की सताई हुई हैं. विधानसभा चुनाव धीरे-धीरे क़रीब आ रहा है. वह नहीं चाहती हैं कि दागदार नेताओं के कारण उन्हें जनता को जवाब देने में मुश्किल आए और विपक्ष को उन्हें घेरने का मौक़ा मिल जाए. इसीलिए वह अपना दामन साफ़ करने की मुहिम में लगी हैं, लेकिन ऐसा करते समय वह अपने पैरों पर कुल्हाड़ी भी नहीं मारना चाहती हैं. उन्हें अपनी सरकार की मज़बूती की भी उतनी ही चिंता है, जितनी बसपा से अपराधियों को बाहर निकालने की. शायद यही वजह है कि अभी तक मुख्तार अंसारी को छोड़कर बसपा से ऐसे किसी अपराधी को बाहर का रास्ता नहीं दिखाया गया, जो अपराधी होने के साथ-साथ जनता का नुमाइंदा भी हो. कहना ग़लत नहीं होगा कि बसपा से वही बाहुबली बाहर किए गए, जो थोड़ा निर्बल थे, जिनसे पार्टी को कोई ख़ास फ़ायदा नहीं हो रहा था और बदनामी ऊपर से उठानी पड़ रही थी. क़रीब तीन वर्ष पहले जब मायावती को सत्ता पर पकड़ मज़बूत बनानी थी, तब उन्हें सही-ग़लत और अच्छा-बुरा कुछ भी नहीं दिखा था. उनकी तरफ़ जिसने भी समर्थन का हाथ बढ़ाया, उन्होंने उसे तुरंत थाम लिया. न यह देखा कि समर्थन देने वाले का अतीत कैसा है और न इस बात पर ध्यान दिया कि इससे बसपा की छवि पर क्या प्रभाव पड़ेगा. यही वजह थी कि बसपा में ऐसे कई मौक़ापरस्त नेता और विधायक शामिल हो गए, जिनका अतीत न केवल दागदार था, बल्कि कई की छवि तो माफ़ियाओं वाली थी और थानों में उनकी हिस्ट्रीशीट खुली हुई थी. इन दागदार जनप्रतिनिधियों ने क़ानून व्यवस्था के साथ समय-समय पर खिलवाड़ भी ख़ूब किया, लेकिन सत्ता के मोह में उलझी बसपा प्रमुख इन सब बातों को अनदेखा कर समझौते पर समझौता करती गईं. अपराधियों को वह ग़रीबों का मसीहा बताने लगीं. वह यह तक भूल गईं कि मुलायम सिंह को प्रदेश में बिगड़ती क़ानून व्यवस्था के कारण ही जनता ने सत्ता से बाहर का रास्ता दिखाया था और प्रदेश को अपराधमुक्त करने का वायदा करके वह सत्ता में आई थीं. जिन गुंडे-बदमाशों को चुनाव प्रचार के दौरान वह जेल की सलाखों के पीछे डाल देने की बात करती थीं, वे बाद में उनके बगलगीर हो गए. कई को लालबत्ती मिल गई. बाहुबली मुख्तार अंसारी, आनंद सेन, शेखर तिवारी, गुड्डू पंडित एवं अरुण कुमार शुक्ला उर्फ अन्ना जैसे अपराधी बसपा की शोभा बढ़ाने लगे. अपराधियों के लिए बसपा शरणगाह बनी हुई थी, लेकिन मायावती यह नहीं चाहती थीं कि उन पर अपराधियों को संरक्षण देने का आरोप लगे, शायद इसीलिए एक तरफ़ वह अपराधियों को संरक्षण देती रहीं, तो दूसरी तरफ़ कुछ चुनिंदा गुंडे-बदमाशों और डक़ैतों के ख़िलाफ़ मुहिम चलाकर अपना दामन दागदार होने से बचाती रहीं. इसमें काफी हद तक वह सफल भी रहीं. माया की दोहरी राजनीति को आम जनता भले ही नहीं समझ पा रही थी, लेकिन ऐसे लोगों की कमी भी नहीं थी, जो उनके इस खेल का पर्दाफ़ाश करने में लगे थे. धीरे-धीरे मायावती की असलियत जनता के बीच उजागर होने लगी, लेकिन तब तक वह इन्हीं गुंडों-माफ़ियाओं के साथ सत्ता की काफी मलाई मार चुकी थीं और जनता के बीच जाने का समय पुन: नज़दीक आने लगा था. गोंडा में एक जनसभा के दौरान मंच पर एक अपराधी एवं कथित बसपा नेता की गोली मारकर हत्या किए जाने से बसपा की बेहद किरकिरी हुई. बाद में बसपा ने मारे गए नेता को अपनी पार्टी का नहीं बताकर इस मामले से पल्ला झाड़ लिया, लेकिन विपक्ष को तो बसपा सरकार पर हमला करने का मौक़ा मिल गया. इससे पहले कि विपक्ष और आक्रामक होता, मौक़े की नज़ाकत भांपकर मायावती ने अपने कारनामों से चर्चा बटोरने वाले बाहुबली विधायक मुख्तार अंसारी और उनके सांसद भाई अफजल अंसारी को बाहर का रास्ता दिखा दिया और यह घोषणा कर दी कि बसपा से बाहुबलियों को बाहर किया जाएगा, लेकिन 30 अप्रैल को समीक्षा बैठक के बाद पत्रकारों को इस बात की जानकारी देते हुए मायावती ने बसपा से पांच सौ दागियों को बाहर निकालने की बात तो कही, पर निकाले गए दागी नेताओं की कोई लिस्ट मीडिया को नहीं दी. इससे दूध का दूध और पानी का पानी हो गया. मायावती ने जब अपराधियों को बसपा से निकालने की बात की थी, उस समय बसपा में क़रीब 70-75 दागी विधायक मौजूद थे और आज भी वे बसपा की शान में कसीदे पढ़ रहे हैं. अगर इन सभी के ख़िलाफ़ कार्रवाई हो गई होती तो माया सरकार की बुनियाद हिल जाती.

मायावती सरकार की कथनी और करनी में अंतर साफ़ दिखाई पड़ रहा है. जब अपराधियों को बसपा से बाहर करने की बात आई तो बड़ी मछलियों पर हाथ नहीं डाला गया और छोटी मछलियों का शिकार करके वाहवाही लूट ली गई. आपराधिक छवि के लोगों को पार्टी से बाहर करने के अभियान के तहत सबसे पहले गोंडा में सफ़ाई अभियान चलाया गया. पूर्व सांसद रिज़वान ज़हीर एवं कीर्तिवर्धन सिंह और पूर्व विधायक अजय प्रताप सिंह उर्फ लल्ला भइया के साथ ही ज़िला समन्वयक छज्जूराम को भी निष्कासित कर दिया गया. बाद में पता चला कि कीर्तिवर्धन सिंह समेत तीन नेताओं को पार्टी से निकालने का फ़ैसला वापस ले लिया गया. गोंडा के बाद मेरठ, बागपत, सहारनपुर एवं ग़ाज़ियाबाद में बसपा ने आपराधिक छवि वाले क़रीब सौ नेताओं से किनारा कर लिया. चर्चित विक्की त्यागी और शरद त्यागी की पत्नी शोभा त्यागी के साथ-साथ अजय जडेजा के चहेते भी बसपा के सफ़ाई अभियान की चपेट में आ गए. मुज़फ्फरनगर में 39, मेरठ में 14, सहारनपुर में 15, बागपत में 14 एवं गाजियाबाद में 19 नेताओं के ख़िलाफ़ कार्रवाई की गई. उम्मीद इस बात की भी है कि पार्टी से बाहर किए गए इन नेताओं के ख़िलाफ़ जल्द ही ठीक वैसी पुलिस कार्रवाई की जा सकती है, जैसी मुख्तार और अफजल को पार्टी से निकालने बाद उनके विरुद्ध की जा रही है.

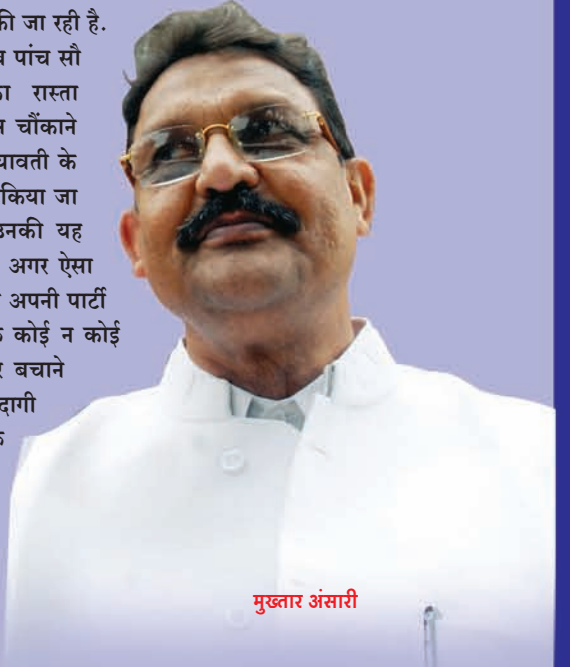

मुख्तार अंसारी

बहरहाल, बसपा से क़रीब पांच सौ अपराधियों को बाहर का रास्ता दिखाया जाना भले ही ख़ास चौंकाने वाला न रहा हो, लेकिन मायावती के साहस को अनदेखा भी नहीं किया जा सकता है. उम्मीद है कि उनकी यह मुहिम आगे भी जारी रहेगी. अगर ऐसा होता है तो अन्य दलों को भी अपनी पार्टी के दागी नेताओं के ख़िलाफ़ कोई न कोई क़दम उठाना पड़ेगा. सरकार बचाने की नीयत से अगर मायावती दागी जनप्रतिनिधियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई करने का साहस न भी जुटा पाएं और इतना ही कह दें कि 2012 के विधानसभा चुनाव में बसपा किसी अपराधी को टिकट नहीं देगी तो मतदाताओं को यह बात काफी राहत देने वाली होगी.

बसपा की इस कार्रवाई को समाजवादी पार्टी, कांग्रेस एवं भाजपा भले ही ढकोसला बता रही हों, लेकिन यह बात नहीं भूली जा सकती कि उक्त दलों का दामन भी पाक-साफ़ नहीं है. समाजवादी पार्टी तो हमेशा से अपराधियों को संरक्षण देने में आगे रही है. भाजपा और कांग्रेस भी समय-समय पर बाहुबलियों को चुनाव मैदान में आज़माती रही हैं. क़रीब-क़रीब सभी राजनीतिक दलों में आपराधिक छवि के जनप्रतिनिधि हैं. संसद और विधानसभाओं में दागियों की लगातार बढ़ती संख्या यही दर्शाती है कि विभिन्न राजनीतिक दल इसके प्रति कोई रुचि नहीं ले रहे हैं. यहां तक कि निर्वाचन आयोग का भी सहयोग नहीं करते हैं. बसपा ने एक पहल की है, जिसकी अगर तारीफ़ नहीं की जा सकती है तो नज़रअंदाज़ भी नहीं किया जा सकता.

feedback@chauthiduniya.com

गंगा तेरा पानी अमृत

राजकुमार शर्मा

गंगाजल को सात समंदर पार बेचने की अपनी अति महत्वाकांक्षी योजना को साकार करने के लिए उत्तराखंड सरकार ने गंगा स्वायत्तशासी प्राधिकरण का ऐलान करके प्रति वर्ष कम से कम पांच सौ करोड़ रुपये जुटाने की योजना को अंतिम रूप दे दिया है. सरकार का मानना है कि इस काम से होने वाली आय को गंगा की साफ़-सफ़ाई के लिए ख़र्च किया जाएगा. गंगा की सफ़ाई पर लगभग पांच सौ करोड़ रुपये का ख़र्च आने का अनुमान है. इस संदर्भ में राज्य सरकार ने केंद्र से भी मदद मांगी है, लेकिन उसका मंसूबा है कि प्राधिकरण भी ख़ुद में इतना सक्षम हो कि वह अपनी ही आय से गंगा की सफ़ाई का काम कर सके.

गंगाजल बेचने की सरकार की मंशा का भारतीय साधु समाज एवं जगतगुरु शंकराचार्य स्वरूपानंद जैसी हस्तियां शुरू से ही विरोध कर रही हैं. सरकार गंगाजल बेचने का काम पहले स्वयं करना चाहती थी, लेकिन विरोध को देखते हुए अब वह यही काम स्वतंत्र स्वायत्तशासी प्राधिकरण का गठन करके करेगी. उसने तय किया है कि गंगाजल की पैकेज़िंग और ब्रांडिंग का काम गंगा स्वायत्तशासी प्राधिकरण के जरिए होगा. इस समय जो भी कंपनियां सूबे में गंगाजल की पैकेज़िंग अथवा उससे जुड़े काम कर रही हैं, उन्हें भी प्राधिकरण के अधीन रह कर काम करना होगा. यानी इन कंपनियों को भी गंगाजल के बदले एक निश्चित धनराशि प्राधिकरण को अदा करनी होगी. राज्य सरकार ने तय किया है कि गंगा को निर्मल रखने का दायित्व वह स्वयं निभाएगी. साथ ही उसकी कोशिश होगी कि इसमें होने वाले ख़र्च की व्यवस्था भी वह इसी गंगाजल से कर ले. सरकार की नई योजना से अब तक अपने यजमानों को गंगाजल भेजकर दान-दक्षिणा के माध्यम से आमदनी करने वाले हिमालयी एवं ग़ैर हिमालयी गंगा तटों के किनारे बसे हज़ारों पंडों-पुरोहितों के समक्ष रोज़ी-रोटी का संकट उत्पन्न हो गया है, इससे उनमें आक्रोश व्याप्त है. हिमालय सहित काशी-प्रयाग के संत-महात्मा भी उत्तराखंड सरकार के निर्णय से नाराज़ हैं. उत्तरकाशी स्थित गीता स्वामी दिव्य धाम के पीठाधीश्वर स्वामी कमलेशानंद सरस्वती ने सरकार के इस क़दम को सनातन हिंदू जनता के साथ विश्वासघात बताते हुए कहा कि गंगा को विश्व जनमानस मां मानता रहा है. आज भी लाखों-करोड़ों जनता की आस्था गंगा जी में है. गंगाजल की मार्केटिंग एक अपराध है. सरकार को जनभावना से खिलवाड़ नहीं करना चाहिए. काशी के प्रख्यात संत सतुआ बाबा भी सरकार के फ़ैसले से हैरान हैं. वह कहते हैं कि इस कार्य को सरकार चाहे ख़ुद करे अथवा अपने किसी प्रतिनिधि या संस्था से कराए, किंतु इससे गंगा की मर्यादा को चोट पहुंचेगी.

केंद्र सरकार ने गंगा के प्रति हिंदू जनमानस की आस्था को देखते हुए पहले ही यूपीए प्रमुख सोनिया गांधी के इशारे पर इसे राष्ट्रीय नदी का दर्जा दे रखा है. सूबे की सरकार का गंगा को अपनी आमदनी का माध्यम बनाना जनमानस को नहीं भा रहा है.

केंद्र सरकार ने गंगा के प्रति हिंदू जनमानस की आस्था को देखते हुए पहले ही यूपीए प्रमुख सोनिया गांधी के इशारे पर इसे राष्ट्रीय नदी का दर्जा दे रखा है. सूबे की सरकार का गंगा को अपनी आमदनी का माध्यम बनाना जनमानस को नहीं भा रहा है. राज्य सरकार ने जनता एवं राजनीतिक दलों की आलोचना से बचने के लिए अब सीधे मार्केटिंग न करके प्राधिकरण को स्वायत्तशासी बनाने का फ़ैसला किया है. इसके बावजूद वह ख़ुद को नहीं बचा पा रही है. हालांकि वह बार-बार यही बताने का प्रयास कर रही है कि प्राधिकरण से सरकार का कोई लेना-देना नहीं रहेगा, लेकिन उसकी दलील किसी के गले नहीं उतर रही है. पिछले दिनों अपनी मॉरीशस यात्रा के दौरान मुख्यमंत्री डॉ. निशंक ने गंगाजल की मार्केटिंग का फंडा पूरी तरह समझा. वहां से वापस आकर उन्होंने गंगाजल को अपनी सरकार की आय के सबल साधन के रूप में चुनते हुए प्राधिकरण के गठन को मंजूरी दे दी. निशंक को एक बात क़ायदे से समझ में आ गई कि विदेश में रहने वाले हिंदू किसी भी क़ीमत पर गंगाजल हासिल करना चाहते हैं. बस, उनकी इसी समझ ने उन्हें इस काम के लिए तैयार कर दिया. राज्य सरकार जनता की आस्था को कैश करने पर आमादा है.

पूर्व गृह राज्यमंत्री स्वामी चिन्मयानंद ने सरकार के फ़ैसले की निंदा करते हुए कहा कि सरकार को जनता की आस्था से खिलवाड़ नहीं करना चाहिए. गंगा को मां की संज्ञा देते हुए उन्होंने कहा कि मां के साथ धनार्जन के लिए इस तरह की छूट नहीं दी जा सकती. भारत साधु समाज के उत्तराखंड राज्य के अध्यक्ष एवं संस्कृत विश्वविद्यालय के संस्थापक कुलपति ब्रह्म स्वरूप ब्रह्मचारी ने निशंक सरकार के इस क़दम को हिंदू जनमानस के साथ विश्वासघात करार देते हुए कहा कि *विनाश काले विपरीत बुद्धि* वाली कहावत चरितार्थ हो रही है. गंगाजल बेचकर भारी धनराशि कमाई जा सकती है, लेकिन हिंदू जनमानस जो गंगा को मां की नज़र से देखता है, वह अगर भाजपा एवं निशंक सरकार से बिदकता है तो यह निश्चित रूप से दोनों के लिए नुक़सानदायक साबित होगा. देवभूमि हिमालय और उत्तराखंड सदियों से गंगा, देवालयों, वन्यजीवों एवं प्राकृतिक वैभव के लिए दुनिया भर में जाना जाता है, सरकार को इसे थाती समझ कर बचाने का काम करना चाहिए.

feedback@chauthiduniya.com

आम जनता को लगने लगा है कि केंद्र मुइवा के इस दौरे का राजनीतिक इस्तेमाल करने की कोशिश कर रहा है और इसमें मुइवा को हथियार बनाया जा रहा है.

मुइवा, मणिपुर और केंद्र की दोहरी नीति

एस. बिजेन सिंह

पिछले दस वर्षों से शीर्ष नगा अलगाववादी संगठन नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालैंड (एनएससीएनआईएम) और केंद्र सरकार के बीच वार्ताओं का दौर चला आ रहा है. बीते अप्रैल में हुई नई दौर की वार्ता से लोगों को लगा कि इस बार दोनों पक्ष एक–दूसरे को बेहतर तरीक़े से समझ पा रहे हैं. नए वार्ताकार आर एस पांडे प्रधानमंत्री और गृहमंत्री से मुलाक़ात करने के बाद मुइवा से मिले थे. पांडे नगालैंड कैडर से हाल ही में सेवानिवृत्त हुए आईएएस अधिकारी हैं. उनसे पहले के पद्मनाभन ने मुइवा एवं इसाक स्वू के साथ कई दौर की बातचीत करके नींव तैयार की थी और अब समझौता होने के आसार दिखने लगे थे. मगर, केंद्र सरकार के कुछ फ़ैसलों ने सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया. केंद्र ने अचानक अपना रुख़ बदलते हुए सीधे जवाब दे दिया कि पड़ोसी राज्यों की सहमति के बिना इस वार्ता का कोई सार्थक परिणाम नहीं निकल सकता. सरकार का यह बयान इस समस्या की सच्चाइयों से मुंह मोड़ना है, क्योंकि सभी जानते हैं कि नगा बागी वृहद नगालिम में पड़ोसी राज्यों के कुछ नगा बहुल इलाक़ों को भी शामिल करने की मांग करते रहे हैं. जब यह पहले से ही स्पष्ट है तो इस मौक़े पर केंद्र का यह बयान अपने बढ़े पैरों को पीछे खींचने जैसा है.

पिछले कई वर्षों से नगा बागी वृहद नगालैंड (नगालिम) के तहत नगा बहुल इलाक़ों को एक पृथक प्रशासनिक तंत्र में शामिल करने की मांग करते रहे हैं. उनका कहना है कि नगालिम में नगालैंड के अलावा मणिपुर के चार ज़िले, असम के दो पहाड़ी ज़िले और पूर्वी अरुणाचल प्रदेश के दो ज़िले भी शामिल किए जाएं. केंद्र के इस बयान से वार्ता असफल हुई तो एनएस–सीएन (आईएम) के मुखिया मुइवा ने अपना पैंतरा बदला. उन्होंने 3 से 10 मई तक मणिपुर में अपने जन्मस्थान उख्रूल के सोमदाल आने का फ़ैसला किया. नगा शांति वार्ता पिछले दस वर्षों से चल रही है, लेकिन इस बीच मुइवा कभी मणिपुर नहीं आए. अब उनके इस फ़ैसले ने राज्य की जनता को दो हिस्सों में बांट दिया है. स्थानीय लोगों का एक हिस्सा मुइवा को आने देने के पक्ष में है, तो राज्य की जनसंख्या का अधिकांश हिस्सा ऐसा नहीं होने देना चाहता. उसे डर है कि मुइवा अपने मणिपुर दौरे के दौरान लोगों को लामबंद करने की कोशिश करेंगे, जिससे राज्य का सांप्रदायिक माहौल बिगड़ सकता है. बिफरी हुई जनता चौक–चौराहों और सड़कों पर विरोध प्रदर्शन पर उतर आई. राज्य सरकार भी इस ख़तरे से वाक़िफ़ थी और यही वजह है कि राज्य कैबिनेट ने एक प्रस्ताव पारित कर यह फ़ैसला ले लिया कि मुइवा को किसी भी क़ीमत पर मणिपुर में प्रवेश की इजाज़त नहीं दी जाएगी. मणिपुर और नगालैंड की सीमा माओ गेट पर धारा 144 के तहत कर्फ्यू लगा दिया गया. मणिपुर का द्वार कहे जाने वाले माओ गेट पर कमांडो पुलिस और सुरक्षाबलों को मुइवा को आने से रोकने के लिए तैनात कर दिया गया. दूसरी ओर, मुइवा के मणिपुर आगमन का समर्थन करने वाले हज़ारों लोगों की भीड़ पांच मई को कर्फ्यू का उल्लंघन करती हुई माओ गेट पर एकत्र हो गई. मुइवा के स्वागत के लिए आए लोगों की पुलिस के साथ झड़प हुई. उन्हें रोकने के लिए सुरक्षाबलों को हवाई फायरिंग और टियर गैस का इस्तेमाल करना पड़ा, जिसमें तीन लोगों की मौत हुई और 50 से अधिक घायल हो गए. घटना में मारे गए लोगों के परिजनों ने शव ले जाने से मना कर दिया है. पुलिस कार्रवाई के बाद मार्केट सेंटर के रूप में प्रचलित माउ बाज़ार में सन्नाटा पसरा है. बड़ी दुकानें, होटल और रोज़मर्रा की ज़रूरतों वाली दुकानें बंद हैं. नेशनल हाइवे नंबर 39, जो मणिपुर को देश के बाक़ी हिस्सों से जोड़ता है, पूरी तरह बंद पड़ा है. इस वजह से लोग गुवाहाटी से इंफाल नहीं पहुंच पा रहे हैं. राज्य के बाहर रहने वाले हज़ारों छात्र अपने घर नहीं जा पा रहे हैं. माउ गेट पर मणिपुर आने वाली तेल और खाने–पीने के सामान से लदी गाड़ियां रुकी हुई हैं. राज्य में महंगाई आसमान छू रही है और जनता रोजमर्रा की ज़रूरतों की पूर्ति से भी महरूम है. मणिपुर की बिगड़ती स्थिति को देखते हुए पीएमओ ने आदेश दिया कि जब तक यहां का माहौल शांत नहीं हो जाता, मुइवा की मणिपुर यात्रा स्थगित रहे. नगालैंड के मुख्यमंत्री नैफ्यू रिउ ने भी माहौल शांत होने तक यात्रा स्थगित रखने की अपील की. इस मामले में मणिपुर सरकार और जनता एक साथ है. लेकिन, केंद्र के टालमटोल वाले रवैये ने एक बार फिर इस आग में घी डाल दिया.

मुइवा

चिदंबरम

दिल्ली से बुलावा आने पर मणिपुर के मुख्यमंत्री ओ इबोबी सिंह 7 मई को दिल्ली पहुंचे. इस मसले को लेकर गृहमंत्री, रक्षा मंत्री और अन्य वरिष्ठ नेताओं से उनकी बातचीत हुई. केंद्र ने मुख्यमंत्री से कहा कि वह मुइवा के मणिपुर आने की व्यवस्था करें. केंद्र सरकार का तर्क है कि एनएससीएन (आईएम) प्रतिबंधित संगठन नहीं है और इसलिए मुइवा को मणिपुर में आने से रोकना उचित नहीं है. उसने राज्य सरकार को मुइवा के लिए ज़रूरी सुरक्षा इंतज़ाम करने की सलाह दी, लेकिन मुख्यमंत्री ने ऐसा करने से इंकार कर दिया. उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि मुइवा को रोकने का फ़ैसला उनका व्यक्तिगत नहीं, बल्कि राज्य कैबिनेट का है, जो इस आधार पर लिया गया है कि 40 वर्ष बाद मुइवा का अपने जन्मस्थल लौटना एनएससीएन (आईएम) के पक्ष में नया माहौल बनाने में मददगार साबित हो सकता है. राज्य सरकार इसलिए भी डरी हुई है, क्योंकि मुइवा उख्रूल के अलावा मणिपुर के कई अन्य ज़िलों जैसे सेनापति, तमेंगलोग और अन्य नगा बहुल इलाक़ों में जाने की योजना बना रहे थे. सरकार का मानना है कि अपनी बैठकों और भाषणों के ज़रिए मुइवा हज़ारों वर्षों से एक साथ रह रहे नगा और मणिपुरी लोगों के बीच अलगाव की कोशिश करेंगे.

केंद्र सरकार के इन विरोधाभासी फ़ैसलों को देखकर आम जनता को लगने लगा है कि केंद्र मुइवा के इस दौरे का राजनीतिक इस्तेमाल करने की कोशिश कर रहा है और इसमें मुइवा को हथियार बनाया जा रहा है. हालांकि, राज्य सरकार मुइवा को रोकने के लिए पूरी तरह प्रतिबद्ध है, लेकिन फिर भी अगर मुइवा आ जाते हैं, तो इसके हर परिणाम के लिए केंद्र सरकार ही ज़िम्मेदार होगी. केंद्र के इस रवैये ने स्थानीय लोगों के जख्मों को फिर से हरा कर दिया है. उन्हें लग रहा है कि मुइवा के मणिपुर आने का यह मुद्दा कहीं 2001 के उस कांड की पुनरावृत्ति न कर दे, जिसमें 18 लोगों की मौत हो गई थी. लोग सहमे हुए हैं. 18 जून, 2001 को हुई घटना के लिए भी लोग मुइवा को ही ज़िम्मेदार मानते हैं. उनका कहना है कि मुइवा अगर ग्रेटर नगालैंड के सपने न देख रहे होते, तो 18 जून की घटना नहीं घटती और शांति वार्ता भी तेज़ी से आगे बढ़ती.

केंद्र सरकार केवल अपना राजनीतिक लाभ देखते हुए मुइवा को मणिपुर आने देने के लिए दबाव डाल रही है, मगर वह इस बात को भूल रही है कि वहां की जनता भी भारत का हिस्सा है, उसकी भावनाओं से खेलकर केंद्र दरअसल उसके मन में अपने ही ख़िलाफ़ कांटे बो रहा है. इससे देश की एकता और अखंडता को ख़तरा हो सकता है. केंद्र सरकार ने अगर दूरगामी परिणामों को ध्यान में रखा होता, तो वह यह निर्णय न लेती. शांति वार्ता को लेकर आम जनता का ख़ून बहा था, वह शायद केंद्र को याद नहीं है. स्थिति इतनी विस्फोटक हो चुकी है कि अब यदि मणिपुर सरकार मुइवा को आने की इजाज़त दे भी देती है, तो हालात इससे भी ज़्यादा बदतर हो सकते हैं. अब भी समय है कि केंद्र सरकार राजनीतिक बयानबाज़ी और निजी स्वार्थों को दरकिनार करते हुए ज़मीनी हक़ीक़त को समझे. साथ ही उसे यह भी समझना होगा कि यह मामला जनता की भावनाओं से जुड़ा हुआ है. इसलिए ज़रूरी है कि वह ज़बरदस्ती की अड़ंगेबाज़ी से बाज आए और राज्य की बहुसंख्यक जनता की इच्छाओं को ध्यान में रखते हुए अपनी नीतियों को स्पष्ट करे.

bijen@chauthiduniya.com

मुइवा के आने का विरोध करते लोग.

मणिपुर ज़रूर जाऊंगा : मुइवा

नगा नेशनल काउंसिल (एनएनसी) ने भारत सरकार से शिलांग समझौता टूटने के बाद 30 अप्रैल, 1988 को नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालैंड का गठन किया था. बाद में एनएससीएन दो गुटों में बंट गया. पहला गुट एनएससीएन (आईएम) यानी आइजाक चीसी स्वू और थुइङालेंग मुइबा और दूसरा एनएससीएन (के) यानी खपलांग के रूप में जाना जाने लगा. एनएससीएन (आईएम) का एक ही मक़सद है, माओत्से–तुंग की क्रांतिकारी विचारधारा पर आधारित ग्रेटर नगालिम का गठन. इस संगठन के घोषणापत्र में स्पष्ट रूप से मांग की गई है कि नया नगालैंड केवल ईसाइयों के लिए हो. भारतीय संविधान के मौजूदा दायरे में ऐसा संभव नहीं है और एनएससीएन (आईएम) इसके ख़िलाफ़ सशस्त्र आंदोलन चलाने का पक्षधर है. हालांकि, केंद्र के साथ पहली बार 1997 में हुए युद्ध विराम समझौते के बाद से हिंसा का दौर थमा हुआ है, लेकिन मौजूदा विवाद से सांप्रदायिक भावनाएं एक बार फिर भड़क जाने का ख़तरा भी पैदा हो गया है. दूसरी ओर, संगठन के जनरल सेक्रेटरी थुइङालेंग मुइवा भी राज्य सरकार को चुनौती देने के लिए पूरी तरह तैयार हैं. उनका कहना है कि मैं मणिपुर ज़रूर जाऊंगा और अपने परिजनों एवं रिश्तेदारों से मिलूंगा. कोई भी ताक़त मुझे नहीं रोक सकती. मैं मणिपुरियों से कुछ नहीं लूंगा. किसी भी तरह के आपत्तिजनक काम नहीं करूंगा. मैं सिर्फ़ नगाओं के हक़ की ही मांग करूंगा. मणिपुरियों ने मेरी यात्रा में बाधा डाली, इससे मैं बहुत आहत हूं. यह यात्रा शांति के लिए है, किसी को परेशान करने के लिए नहीं.

e देश का पहला इंटरनेट टीवी

तीन महीने में रचा इतिहास

- हिन्दी की सबसे पॉपुलर वेबसाइट
- हर महीने 12,00,000 से ज़्यादा पाठक
- हर दिन 40,000 से ज़्यादा पाठक
- स्पेशल प्रोग्राम–भारत का राजनीतिक इतिहास
- समाचार–राजनीति, खेल, पर्यावरण, मनोरंजन
- संगीत और फ़िल्मों पर विशेष कार्यक्रम
- साई की महिमा

www.chauthiduniya.tv

एफ-2, सेक्टर-11, नोएडा-201301

गेहूं ख़रीद का लक्ष्य बढ़ाकर स्वयं अपनी पीठ थपथपाने वाली उत्तर प्रदेश सरकार के लिए अन्न भंडारण का मुद्दा एक बार फिर भारी पड़ने वाला है.

अन्न का अनादर

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

महंगाई और भुखमरी से जूझ रहे आमजन यह जानकर हैरान हो सकते हैं कि देश में प्रतिवर्ष लाखों टन अनाज यूं खुले मैदान में पड़े-पड़े सड़ जाता है. वजह, भंडारण की पर्याप्त व्यवस्था का अभाव. सरकार को भी मालूम है, लेकिन उसे इस गंभीर समस्या से शायद कोई लेना-देना नहीं है.

महंगाई और भूख से परेशान इस देश में भंडारण की समुचित व्यवस्था न होने से अन्न सड़ रहा है. और, यह देश के नीति नियंताओं के लिए शर्म की बात है. महंगाई के मुद्दे पर हो रहे हंगामे को शांत करने के लिए प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह एवं वित्त मंत्री प्रणब मुखर्जी ने कहा है कि रबी की फ़सल आने के बाद महंगाई में गिरावट दर्ज़ होगी, लेकिन शायद उन्हें यह नहीं मालूम कि पिछले वर्ष भी देश में अनाज की कमी नहीं थी. यदि समुचित भंडारण की व्यवस्था होती तो आज कहीं अन्न की कमी दिखाई न देती. एक तरफ़ सरकार अभावग्रस्त लोगों को अन्न उपलब्ध कराने के लिए खाद्य सुरक्षा क़ानून बना रही है तो दूसरी ओर यह सुनने को मिल रहा है कि भंडारण के अभाव में हज़ारों टन गेहूं सड़ रहा है. यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि हमारे देश में अन्न का अनादर हो रहा है. कहा जाता है कि अन्न का अनादर करने वाले को रोटी के लिए तरसना पड़ता है. इसीलिए इस देश में ग़रीबी और भुखमरी ने डेरा डाल रखा है.

भारतीय खाद्य निगम (एफसीआई) के सूत्रों के मुताबिक़, इस वर्ष रबी की फ़सल की ख़रीद जिस तेज़ी के साथ हो रही है, उससे लगता है कि सरकारी खाद्यान्न का भंडार अवांछनीय स्तर पर पहुंचने की संभावना है. जब अप्रैल के शुरू में रबी की नई फ़सल बाज़ार में आई, तब सरकार के पास क़रीब 160 लाख टन गेहूं (40 लाख टन के ज़रूरी बफर स्टॉक से चार गुना ज्यादा), क़रीब 300 लाख टन चावल (122 लाख टन के ज़रूरी बफर स्टॉक से क़रीब ढाई गुना ज़्यादा) था. चूंकि पिछले खरीफ सीज़न के चावल की ख़रीद अभी भी चल रही है, लिहाज़ा उम्मीद है कि देश को एक बार फिर जून 2002 वाले हालात से गुज़रना पड़ेगा. उस वक़्त खाद्यान्न का भंडार 650 लाख टन पर पहुंच गया था. तब सरकार को भारी सब्सिडी वाली क़ीमत पर अनाज का निर्यात करना पड़ा था.

गेहूं ख़रीद का लक्ष्य बढ़ाकर स्वयं अपनी पीठ थपथपाने वाली उत्तर प्रदेश सरकार के लिए अन्न भंडारण का मुद्दा एक बार फिर भारी पड़ने वाला है. उत्तर प्रदेश के भंडारगृहों का आलम यह है कि अगर सरकारी ख़रीद लक्ष्य के मुताबिक़ गेहूं आ गया तो उसे रखना मुश्किल नहीं, नामुमकिन हो जाएगा. ख़रीद का लक्ष्य पूरा होते ही सरकार को कम से कम 10 लाख टन गेहूं खुले आसमान के नीचे रखना पड़ जाएगा. हालात यह है कि उत्तर प्रदेश में भंडारण की सुविधा न होने के चलते गेहूं ख़रीद के काम में लगी एजेंसियों की दिक़्क़तें बढ़ गई हैं. यहां गेहूं की सरकारी ख़रीद एक अप्रैल से शुरू हो गई है, जो अब तेज़ी पकड़ चुकी है. राज्य के खाद्य एवं रसद आयुक्त राजीव अग्रवाल कहते हैं कि सरकार ने इस बार 39 लाख टन गेहूं ख़रीद का लक्ष्य रखा है, जो ख़ुद में एक रिकॉर्ड है. इसके अलावा एक लाख टन गेहूं की ख़रीद एफसीआई को करनी है, पर उसका भंडारण राज्य सरकार का सिरदर्द नहीं है. हालांकि सरकार ने कहा है कि अगर लक्ष्य पूरा होने के बाद भी किसान अपना गेहूं लेकर क्रय केंद्रों पर आते हैं तो उन्हें वापस नहीं किया जाएगा. यानी सरकार लक्ष्य से ज़्यादा भी गेहूं की ख़रीद कर सकती है. ग़ौरतलब है कि इससे पहले 2001-02 में सबसे ज़्यादा 24.46 लाख टन गेहूं की सरकारी ख़रीद की गई थी. विभागीय आंकड़ों के मुताबिक़, सरकारी गोदामों की कुल भंडारण क्षमता 59.52 लाख टन है, जिसमें राज्य भंडारण निगम की क्षमता 23.13 लाख टन, केंद्रीय भंडारण निगम की 7.74 लाख टन, सहकारी संघ की 10.02 लाख टन, एफसीआई की 14.82 लाख टन और राज्य सरकार की 1.07 लाख टन है.

इस समय सरकारी गोदामों में केवल 25 लाख टन गेहूं ही रखा जा जा सकता है. ऐसे में ख़रीद का लक्ष्य पूरा हो जाने के बाद क़रीब 14 लाख टन अनाज खुले आसमान के नीचे रखना पड़ेगा. बताते हैं कि पहले जब 20 लाख टन गेहूं की ही ख़रीद की जाती थी, तब भी भंडारण की दिक़्क़त सामने आती थी. ऐसे में 40 लाख टन गेहूं कहां खपाया जाएगा, यह एक बड़ा सवाल है. देश में चालू सीज़न के दौरान अब तक 152.55 लाख टन गेहूं की सरकारी ख़रीद हो चुकी है. यह ख़रीद पिछले साल की समान अवधि के मुक़ाबले क़रीब दस फ़ीसदी ज़्यादा है. पिछले साल इस समय तक 138.93 लाख टन गेहूं की ख़रीद हुई थी. चालू सीज़न में गेहूं की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में क़रीब दस से पंद्रह फ़ीसदी की कमी आने का अनुमान है. ऐसे में गेहूं का उत्पादन सरकारी अनुमान से कम रह सकता है. सरकार ने 802 लाख टन गेहूं उत्पादन का अनुमान लगाया था.

एफसीआई के सूत्रों के अनुसार, अभी तक हुई कुल ख़रीद में सबसे ज़्यादा योगदान पंजाब और हरियाणा का है. पंजाब की मंडियों से अभी तक एमएसपी पर 75.01 लाख टन गेहूं की ख़रीद हो चुकी है, जो पिछले साल की समान अवधि के 71.22 लाख टन से ज़्यादा है. इसी तरह हरियाणा की मंडियों से अब तक 53.14 लाख टन गेहूं की सरकारी ख़रीद हो चुकी है, जबकि पिछले साल इस समय तक 50.73 लाख टन की ही ख़रीद हुई थी. मध्य प्रदेश की मंडियों से 19.93 लाख टन गेहूं की ख़रीद हो चुकी है, जो पिछले साल के 8.78 लाख टन के मुक़ाबले ज़्यादा है. उत्तर प्रदेश एवं राजस्थान से गेहूं की सरकारी ख़रीद पिछले साल के मुक़ाबले पिछड़ रही है. उत्तर प्रदेश की मंडियों से अभी तक 1.94 लाख टन गेहूं ख़रीदा गया है, जबकि पिछले साल की समान अवधि में 2.93 लाख टन की ख़रीद हो चुकी थी. वहीं राजस्थान की मंडियों से पिछले साल के 4.81 लाख टन की तुलना में अभी तक 2.09 लाख टन गेहूं ही ख़रीदा गया है. चालू विपणन सीज़न 2010-11 में एफसीआई ने 263 लाख टन गेहूं की ख़रीद का लक्ष्य रखा है, जो पिछले साल के 253.81 लाख टन से ज़्यादा है.

एफसीआई ने यह मान लिया है कि चालू रबी सीज़न में ख़रीदे जा रहे गेहूं के लिए गोदाम उपलब्ध नहीं होंगे. उसके पास सिर्फ़ 46 लाख टन अनाज के भंडारण के लिए गोदाम हैं. जबकि चालू सीज़न में 262 लाख टन गेहूं की ख़रीद होनी है. यानी गेहूं का भंडारण खुले में ही जैसे-तैसे किया जा सकता है. पंजाब और हरियाणा में अभी भी 67 लाख टन अनाज खुले में रखा हुआ है. एफसीआई के सीएमडी सिराज हुसैन के मुताबिक़, सेंट्रल पूल में पिछले साल के 267.13 लाख टन चावल और 161.25 लाख टन गेहूं का स्टॉक है. यानी कुल 428.38 लाख टन अनाज सरकारी गोदामों में भरा है. इसके मुक़ाबले एफसीआई की अपनी भंडारण क्षमता 284 लाख टन है. जबकि राज्य सरकारों के गोदामों की क्षमता 190 लाख टन है. इस तरह कुल भंडारण क्षमता 474 लाख टन अनाज रखने की है. इस हिसाब से गोदामों में केवल 46 लाख टन की जगह खाली है. जबकि चालू रबी ख़रीद सीज़न में एफसीआई ने 262.67 लाख टन गेहूं ख़रीदने का लक्ष्य तय किया है. इससे साफ है कि गेहूं का ज़्यादा से ज़्यादा स्टॉक खुले में ही रखना होगा. यह कोई अनोखी बात नहीं है कि राज्यों में गेहूं की ख़रीद शुरू होते ही उसके भंडारण की समस्या पैदा हो जाती है. लेकिन, हमारे नीति नियंताओं को इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ने जा रहा कि हमेशा की तरह इस वर्ष भी लाखों टन गेहूं भंडारण के अभाव में बर्बाद हो सकता है. यदि उन्हें इसकी चिंता होती तो अब तक गेहूं और अन्य दूसरे अनाजों के भंडारण की कोई ठोस व्यवस्था अवश्य कर ली गई होती. ऐसा कुछ नहीं हुआ है, इसका प्रमाण यह है कि पंजाब में टनों गेहूं सड़ जाने का समाचार आने के बाद केंद्रीय कृषि मंत्री शरद पवार ने कहा कि वह इस मामले को देखेंगे.

ख़ास बात यह है कि शरद पवार खाद्य मंत्री भी हैं और वह पिछले छह वर्षों से उक्त दोनों मंत्रालय संभाल रहे हैं. यदि इस तथ्य में तनिक भी सच्चाई है कि खाद्य निगम के गोदामों से उस समय भी अनाज निकालने की ज़रूरत नहीं समझी गई, जब बाज़ार में अनाज की क़ीमतें आसमान छू रही थीं, तो इसका अर्थ है कि कृषि और खाद्य मंत्रालय को नकारापन दिखाने की खुली छूट दी गई. वरना अनाज के समुचित भंडारण की व्यवस्था संबंधित मंत्रालय द्वारा अवश्य की गई होती. सवाल यह उठता है कि आख़िर खाद्य सुरक्षा विधेयक और दूसरी हरित क्रांति लाने की तैयारी कर रही केंद्र सरकार खाद्यान्न के इस घनघोर कुप्रबंधन पर ध्यान क्यों नहीं दे रही है? इस सवाल से राज्य सरकारें भी नहीं बच सकतीं. गेहूं के भंडारण की समस्या केवल पंजाब में ही नहीं, बल्कि अन्य गेहूं उत्पादक राज्यों, विशेष रूप से उत्तर प्रदेश एवं हरियाणा में भी है. यह समस्या तब है, जब एफसीआई के रूप में एक भारी-भरकम सरकारी अमला केवल अनाज के भंडारण की व्यवस्था करने के लिए है. ख़ास बात यह है कि अनाज का समुचित भंडारण तब नहीं हो पा रहा है, जब अन्न की कमी के कारण महंगाई बढ़ रही है और निर्धन तबके को दो जून की रोटी के लिए लाले पड़ रहे हैं. इस कृषि प्रधान देश के लिए यह शर्म की बात है कि वह अपनी उपज का भंडारण करने में असमर्थ है. महाशक्ति बनने का दावा करने वाले देश के लिए यह बात लज्जाजनक है कि अकेले एक राज्य पंजाब में लाखों टन गेहूं खुले मैदान में पड़ा हुआ है और सड़ रहा है. हमारे देश में प्रतिवर्ष सिर्फ़ लाखों टन अनाज ही बर्बाद नहीं होता, बल्कि सब्ज़ियां और फल भी बड़ी मात्रा में सड़ जाते हैं, क्योंकि उनके भी भंडारण की उपयुक्त व्यवस्था नहीं है. एक अनुमान के अनुसार, भारत में हर साल उतना अनाज बर्बाद हो जाता है, जितना कई देश मिलकर पैदा करते हैं. यह वह स्थिति है, जिस पर सिर्फ़ शर्मसार ही हुआ जा सकता है.

राजीव रंजन तिवारी
feedback@chauthiduniya.com

डाबर, बैद्यनाथ और झंडु जैसी बड़ी कंपनियां अपने उत्पादों में आंवले का ख़ूब उपयोग कर रही हैं.

संकट में आंवला कारोबार

उमाशंकर मिश्र

प्रतापगढ़ के आंवला व्यवसाय की चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए यदि जल्द ही ख़रीद, परिवहन, मार्केटिंग, तकनीकी प्रशिक्षण, बिजली आपूर्ति एवं सर्टिफिकेशन आदि सहूलियतें किसानों एवं व्यवसायियों को मुहैया न कराई गईं तो यहां की ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार माना जाने वाला यह कारोबार बीते समय की बात बनकर रह जाएगा.

भारत सरकार का स्वास्थ्य मंत्रालय भले ही आंवला खाओ–आंवला लगाओ के नाम से देश भर में इसके प्रचार–प्रसार की बात कर रहा हो, लेकिन उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ ज़िले के आंवला उत्पादक किसान एवं व्यवसायी दिनेश शर्मा पिछले कुछ वर्षों से बेहतर उत्पादन के बावजूद आंवला कारोबार में हो रहे उतार–चढ़ाव को लेकर ख़ासे चिंतित नज़र आते हैं. उनके कार्य का मूलमंत्र है, ख़ुद काम करो और दूसरों को भी काम दो. भारत की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था के संदर्भ में शर्मा का यह कथन ग़ौर फरमाने योग्य इसलिए है, क्योंकि इसमें कृषिजन्य औद्योगिक इकाइयों के माध्यम से ग्रामीण अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने वाले सूत्रों का ताना–बाना साफ़ झलकता है. सड़कों के किनारे दूर–दूर तक आम एवं महुए के पेड़ों की कतारें, उन पर फूटती लाल रंग की कोपलें और दूर खेतों में आंवले के पेड़ों के झुरमुट अवध अंचल के प्रतापगढ़ ज़िले की झलक भर है. ठेठ अवधी बोली में घुली मिसरी और मेहमाननवाज़ी का परंपरागत अनौपचारिक अंदाज़ किसी को भी बरबस अपना बना लेने के लिए पर्याप्त है. सई नदी के किनारे बसे प्रतापगढ़ ज़िले की अर्थव्यवस्था कृषि आधारित है और गेहूं, चावल, चना, मटर, अरहर, उड़द, ज्वार एवं सरसों आदि फ़सलों की खेती यहां मुख्य रूप से की जाती है. नीलगाय के आतंक से परंपरागत खेती–बाड़ी पहले ही संकट में है. दूसरी ओर प्रतापगढ़ को पहचान दिलाने वाले आंवला व्यवसाय के अस्तित्व पर भी काली छाया मंडराने लगी है.

परंपरागत खेती के अतिरिक्त कृषिजन्य औद्योगिक इकाइयों जैसे राइस एवं दाल मिल, तेल पेराई, आंवला प्रसंस्कृत उत्पाद, आटा चक्की, ब्रेड निर्माण एवं डेयरी जैसी छोटी–मोटी इकाइयां ही ज़िले में चल रही हैं. पिछले कुछ वर्षों के दौरान प्रतापगढ़ में आंवले के उत्पादन ने इस ज़िले को देश ही नहीं, विदेशों में भी पहचान दिलाई है. इस बीच यहां कुछ सवाल भी खड़े होते हैं कि प्रसंस्करण व्यवसाय से जुड़कर किसान कृषि उत्पादों के मूल्य संवर्धन का लाभ उठाने से वंचित क्यों रह जाते हैं? उन्हें फ़सलों का बेहतर मूल्य क्यों नहीं मिल पाता? कृषि आधारित अर्थव्यवस्था होने के बावजूद देश के विभिन्न दूरदराज के सर्वाधिक कृषि उत्पादक ज़िलों में एग्रो इंडस्ट्री क्यों नहीं पनप पाती? तकनीकी ज्ञान के प्रसार, गुणवत्ता एवं मार्केटिंग के अलावा प्रोसेसिंग इकाइयों की स्थापना और संचालन कर ग्रामोद्योगों को गति देने का काम इतना धीमा क्यों चल रहा है? खादी ग्रामोद्योग आयोग, सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम मंत्रालय एवं ग्रामीण विकास मंत्रालय के साथ–साथ ज़िला विकास अभिकरण जैसी तमाम एजेंसियां होने के बावजूद ग्रामीण उद्यमों की शक्ति स्थापना में अभी और कितना समय लगेगा? ऐसे कई सवाल प्रतापगढ़ आंवला उत्पादक किसानों एवं व्यवसायियों के मुरझाए चेहरों को देखकर उठते हैं.

प्रतापगढ़ में चिलबिला नामक कस्बे से सटा हुआ गांव गोड़े आंवला उत्पादन की मानो प्रयोगशाला ही बन चुका है. चारों तरफ़ आंवले से लदे वृक्ष एक मनोरम दृश्य प्रस्तुत करते हैं. वैसे तो उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़, रायबरेली, सुल्तानपुर, कानपुर, आगरा एवं मथुरा के अलावा देश के दूसरे हिस्सों जैसे महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं तमिलनाडु के समशीतोष्ण क्षेत्रों में भी आंवले की खेती होती है. यही नहीं, हरियाणा के अरावली एवं पंजाब के कांडी क्षेत्र के अलावा हिमाचल प्रदेश में भी इसकी खेती जोर पकड़ती जा रही है, लेकिन प्रतापगढ़ को आंवले के रिकॉर्ड उत्पादन के लिए जाना जाता है. प्रतापगढ़ के 17 ब्लॉकों में क़रीब 12,830 हेक्टेयर रकबे में आंवले का उत्पादन हो रहा है. एक अनुमान के मुताबिक़, देश के कुल आंवला उत्पादन में इस ज़िले की क़रीब 80 फ़ीसदी भागीदारी है. ज़िले में क़रीब 10,82,000 मीट्रिक टन आंवले का उत्पादन होता है.

रंजीतपुर चिलबिला निवासी वर्षों से आंवला उत्पादन एवं उसकी प्रोसेसिंग के काम में जुटे हैं. उनकी प्रोसेसिंग यूनिट में आंवले के मुरब्बे, जूस, कैंडी, पाउडर, चटनी, आचार, लड्डू एवं बर्फी जैसे उत्पाद तैयार किए जाते हैं. पैकिंग के बाद इन उत्पादों को विभिन्न स्थानों पर लगने वाले स्वदेशी मेलों के अलावा चंडीगढ़, लखनऊ एवं वाराणसी के बाज़ारों में भेजा जाता है. यही नहीं, मुंबई, अमृतसर, कोलकाता, दिल्ली, हैदराबाद एवं पटना के बाज़ारों में भी प्रतापगढ़ के आंवला उत्पाद भेजे जाते हैं. इंडिका, पुष्पांजलि, सौम्या एवं महाराज आदि आंवला उत्पाद की बड़ी कंपनियां हैं. इसके अलावा छोटी–बड़ी सौ आंवला प्रसंस्करण इकाइयां ज़िले में चल रही हैं. उत्पादन के मुक़ाबले इन इकाइयों की कम संख्या से इस पूरे कारोबार की दुर्दशा का अंदाज़ा लगाया जा सकता है.

दिनेश शर्मा बताते हैं कि आंवले में आमतौर पर लवण नहीं पाया जाता, लेकिन प्रतापगढ़ के पानी में लवणीय तत्व होने के कारण यहां उत्पादित होने वाला आंवला न केवल ठोस एवं चमकदार होता है, बल्कि इसमें विटामिन सी की भी भरपूर मात्रा पाई जाती है. जानकारी के मुताबिक़, वर्ष 1936 में इस ज़िले की मिट्टी में पहली बार आंवले ने अपनी जड़ें जमाई थीं और चिलबिला के गोड़े नामक गांव को इसकी उद्गम स्थली के तौर पर जाना जाता है. बताया जाता है कि आंवले पर विश्वविद्यालय स्तर पर जो कुछ भी शोध हुआ है, उसके केंद्र में इसी ज़िले से एकत्रित प्रजातियां रही हैं. इनमें फ्रांसिस, कंचन, एनए–6, एनए–10, संसार गोल्ड, नरेंद्र–7, लक्ष्मी एवं सीएन–21 आदि प्रमुख हैं. हालांकि किसानों का आरोप है कि आंवला प्रजातियों के विकास पर अब बहुत अधिक ध्यान नहीं दिया जा रहा है. 1991 में प्रतापगढ़ ज़िले में आंवला विभाग बनाकर आंवला विकास अधिकारी का पद सृजित किया गया था, लेकिन वर्ष 2003 में यह पद समाप्त करके इसकी ज़िम्मेदारी उद्यान विभाग को सौंप दी गई. इस तरह प्रतापगढ़ का आंवला कारोबार प्रशासनिक उपेक्षा की मार से भी बच नहीं पाया, जिसके कारण ज़िले में कृषि आधारित उद्यमों के पनपने की संभावनाओं पर पानी फिरता नज़र आ रहा है. बेहतर उत्पादन के बावजूद मार्केटिंग एवं परिवहन की उचित व्यवस्था न होने के कारण स्थानीय किसानों में मायूसी छाने लगी है. पिछले कुछ वर्षों में आंवले के उत्पादन में तो बढ़ोत्तरी हुई है, लेकिन प्रशासनिक विसंगतियों के कारण किसानों को उपज का सही दाम नहीं मिल पा रहा है. चौपई के गुरुप्रसाद तिवारी बताते हैं कि ज़िले के किसान एवं कारोबारी लंबे समय से आंवले का समर्थन मूल्य घोषित करने और सरकारी ख़रीद केंद्रों की स्थापना की मांग करते रहे हैं, लेकिन प्रशासनिक उदासीनता का आलम यह है कि आंवले को वनोपज श्रेणी में रखा गया है, जिसके कारण आंवला व्यवसायियों को मंडी समिति के साथ–साथ वन विभाग को भी टैक्स देना पड़ता है. जबकि वास्तविकता यह है कि प्रतापगढ़ में आंवला लोग अपने खेतों में लगाते हैं.

आंवला उत्पादों का मानक निर्धारण करने वाली कोई सर्टिफिकेशन एजेंसी न होने से उत्पादकों को अपना माल बेचने में दिक्कतों का सामना करना पड़ता है. उद्यान विभाग के अधिकारियों का कहना है कि आंवले के फलों की ग्रेडिंग किए बग़ैर उनकी बिक्री करना भी घाटे को बढ़ावा देता है. हालांकि घाटे से बचने के लिए किसानों को सह फ़सली खेती की सलाह भी समय–समय पर दी जाती है, लेकिन यहां गुणवत्तापूर्ण प्रसंस्करण, सर्टिफिकेशन एवं मार्केटिंग ज़्यादा बड़ी चुनौतियां हैं, जिनकी ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा. साथ ही यह भी विचार करना होगा कि इस व्यवसाय में संगठित जनसहभागिता कैसे सुनिश्चित की जाए, जिससे इसका पूरा लाभ मिल सके.

बहरहाल प्रतापगढ़ के आंवला कारोबार की ऐसी दयनीय स्थिति तब है, जबकि कुछ समय पूर्व भारत सरकार की पहल पर खादी ग्रामोद्योग आयोग की देखरेख में प्रतापगढ़ समेत उत्तर प्रदेश में 7 कलस्टर बनाए गए थे. जनपद के संडवा, चंडिका एवं मंगोरा ब्लॉकों को राज्य सरकार ने फ्रूट बेल्ट घोषित किया था और यहीं पर कलस्टर बनाए गए थे. प्रतापगढ़ के एग्रो आधारित कलस्टर को ख़ुद में अनूठा प्रयोग कहा जा रहा था. देश भर में इसी तरह के कुल 75 कलस्टर बनाए गए थे, जिनमें केवीआईसी की योजना एसएफयूआरटीआई की मदद से परंपरागत उद्यमों के जीर्णोद्धार की बात कही जा रही थी. उत्तर प्रदेश की 7 इकाइयों में प्रतापगढ़ के आंवले के अलावा कन्नौज का इत्र, गोरखपुर एवं वाराणसी की खादी, सुल्तानपुर के कंबल, बाराबंकी की पॉटरी और कानपुर की चमड़ा इंडस्ट्री को शामिल किया गया था.

अपने औषधीय गुणों के कारण दवा निर्माता कंपनियों एवं खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों में आंवले की खासी मांग रहती है. आंवला विटामिन सी का अच्छा स्रोत माना जाता है और इसके सूखे फल रक्तस्राव, डायरिया, रक्त की कमी एवं पीलिया समेत कई बीमारियों के इलाज में इस्तेमाल किए जाते हैं. त्रिफला एवं च्यवनप्राश आंवले से निर्मित प्रसिद्ध देसी औषधियां हैं. इसकी पत्तियों, छाल और बीज का उपयोग भी विभिन्न उद्देश्यों से किया जाता है. भारत की डाबर, बैद्यनाथ और झंडु जैसी कंपनियां अपने उत्पादों में आंवले का ख़ूब उपयोग कर रही हैं. यही कारण है कि आंवले की व्यवसायिक खेती को आमतौर पर काफी लाभप्रद माना जाता है, लेकिन प्रतापगढ़ के किसानों के लिए आंवले की खेती अब घाटे का सौदा साबित हो रही है, जिसके कारण यहां आंवले के बाग उजड़ने शुरू हो गए हैं. कुछ लोगों ने आंवले के बाग हटाकर पारंपरिक फ़सलों की खेती शुरू कर दी है.

आंवला व्यवसाय की इस दुर्दशा का कारण सरकारी नीतियां हैं. बिजली के अभाव में जेनरेटर से प्रसंस्करण के काम में पांच गुना ज़्यादा लागत उत्पादकों को लगानी पड़ती है. ऊपर से चीनी एवं मसालों की बढ़ी क़ीमतें भी एक बाधा के रूप में सामने आ रही हैं. आंवले की सर्वाधिक खपत च्यवनप्राश में होती है. भले प्रतापगढ़ में आंवले का रिकॉर्ड उत्पादन होता हो, लेकिन इसका गूदा तैयार करने के लिए स्थानीय स्तर पर कोई कारखाना नहीं है. आंवला ख़रीद, परिवहन, मार्केटिंग, तकनीकी प्रशिक्षण, बिजली आपूर्ति एवं सर्टिफिकेशन आदि सहूलियतें समय की मांग हैं. ऐसा न होने पर प्रतापगढ़ की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को गहरा धक्का लग सकता है. इस तरह के प्रयास देश भर में किए जाने चाहिए, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था को संबल प्रदान किया जा सके.

feedback@chauthiduniya.com

आंवले में आमतौर पर लवण नहीं पाया जाता, लेकिन प्रतापगढ़ के पानी में लवणीय तत्व होने के कारण यहां उत्पादित होने वाला आंवला न केवल ठोस एवं चमकदार होता है, बल्कि इसमें विटामिन सी की भी भरपूर मात्रा पाई जाती है. जानकारी के मुताबिक़, वर्ष 1936 में इस ज़िले की मिट्टी में पहली बार आंवले ने अपनी जड़ें जमाई थीं और चिलबिला के गोड़े नामक गांव को इसकी उद्गम स्थली के तौर पर जाना जाता है. बताया जाता है कि आंवले पर विश्वविद्यालय स्तर पर जो कुछ भी शोध हुआ है, उसके केंद्र में इसी ज़िले से एकत्रित प्रजातियां रही हैं.

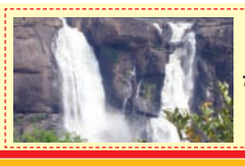

22 एवं 23 मार्च, 2010 को केएसईबी के अधिकारियों को वन एवं पर्यावरण मंत्रालय की एक्सपर्ट एप्रेजल कमेटी (ईएसी) के सामने अपना पक्ष रखने का मौक़ा मिला.

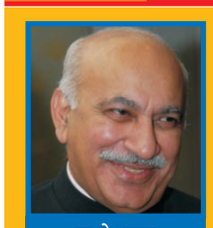

एम जे अकबर

पाकिस्तान समय सीमा तय करे

मई के इस महीने में एक ओर जहां मुंबई हमले के आरोपी अजमल कसाब को फांसी की सज़ा सुनाई गई, वहीं दूसरी ओर भारत और पाकिस्तान ने शांति प्रक्रिया में बातचीत के लिए एक नई मेज तलाश ली है, लेकिन क्या इसके लिए कोई समय सीमा भी तय की गई है? वास्तव में, मेजें तो कई तैयार हैं. थिंफू में बातचीत का मसौदा शर्म-अल-शेख के जैसा ही था. वैसे भी पिछले चार सालों से भारत वही करता आ रहा है, जो पाकिस्तान चाहता है. सितंबर, 2006 में मुशर्रफ़ के साथ बातचीत के दौरान प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने आतंकवाद को सबसे अहम मुद्दों की श्रेणी से हटाकर सामान्य मुद्दों की श्रेणी में ला खड़ा किया. पिछले साल 16 जुलाई को शर्म-अल-शेख में उन्होंने पाकिस्तान को आतंकवाद के मसले पर और राहत दे दी. वार्ता के बाद जारी किए गए संयुक्त बयान में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि आतंकवाद के ख़िलाफ़ कार्रवाई को दोनों देशों के बीच बातचीत की प्रक्रिया से जोड़कर नहीं, बल्कि अलग-अलग देखना चाहिए. थिंफू में मनमोहन सिंह और युसूफ रजा गिलानी के बीच वार्ता के बाद पाकिस्तान के विदेश मंत्री शाह महमूद कुरैशी ने आतंकवाद को द्विपक्षीय बातचीत के दायरे से ही बाहर कर दिया. कुरैशी ने स्पष्ट किया कि आतंकवाद एक वैश्विक समस्या है और इससे निपटने के लिए सामूहिक प्रयासों की ज़रूरत है. लब्बोलुवाब यह है कि अगली बार जब कोई अजमल कसाब पकड़ा जाएगा तो भारत को सीधे संयुक्त राष्ट्र से बातचीत करनी होगी.

अब इसकी तुलना वाशिंगटन द्वारा दबाव डाले जाने के बाद इस्लामाबाद की प्रतिक्रिया से करें. फैजल शहजाद को आतंकी वारदात अंजाम देने के प्रयास में 8 मई को न्यूयार्क में गिरफ़्तार किया गया. कुछ ही घंटों के अंदर लाहौर में संदिग्ध लोगों को हिरासत में ले लिया गया और एफबीआई अब तक उनसे पूछताछ भी कर चुकी होगी. जब वाशिंगटन बोलता है तो इस्लामाबाद सुनता है, लेकिन जब नई दिल्ली बोलती है तो इस्लामाबाद और ज़्यादा शोर करने लगता है. पाकिस्तान तो कसाब के मसले पर भी आंखें फेरने की कोशिश कर रहा है. उसने कहा है कि पाक अधिकारी विशेष अदालत द्वारा कसाब को सजा दिए जाने के फ़ैसले की समीक्षा करेंगे. ऐसा लगता है, जैसे मुंबई हमलों के दौरान ये लोग टेलीविज़न देखना ही भूल गए थे. सच तो यह है कि बातचीत की इस प्रक्रिया में आतंकवाद के मुद्दे की हालत एक ऐसे दस्तावेज़ की होकर रह गई है, जिसकी उपस्थिति अनिवार्य है, लेकिन जिसकी शक्ल कोई नहीं देखना चाहता. दूर के रिश्ते के चचेरे भाई की तरह उसे घर के एक कोने में धकेल दिया गया है. हम यह तो नहीं जानते कि मनमोहन सिंह माफी देना पसंद करते हैं या नहीं, लेकिन पुरानी बातों को भूलने में वह माहिर हैं, जो एक वार्ताकार के लिए आवश्यक भी होता है. थोड़े दिनों पहले पाकिस्तान के विदेश सचिव सलमान बशीर ने गृहमंत्री पी चिदंबरम पर छींटाकशी करते हुए कहा था कि लश्करे तैयबा और कसाब के पाकिस्तानी आकाओं के संबंध में भारत द्वारा सौंपा गया डॉजियर एक काग़ज़ के पुलिंदे से ज़्यादा कुछ नहीं है.

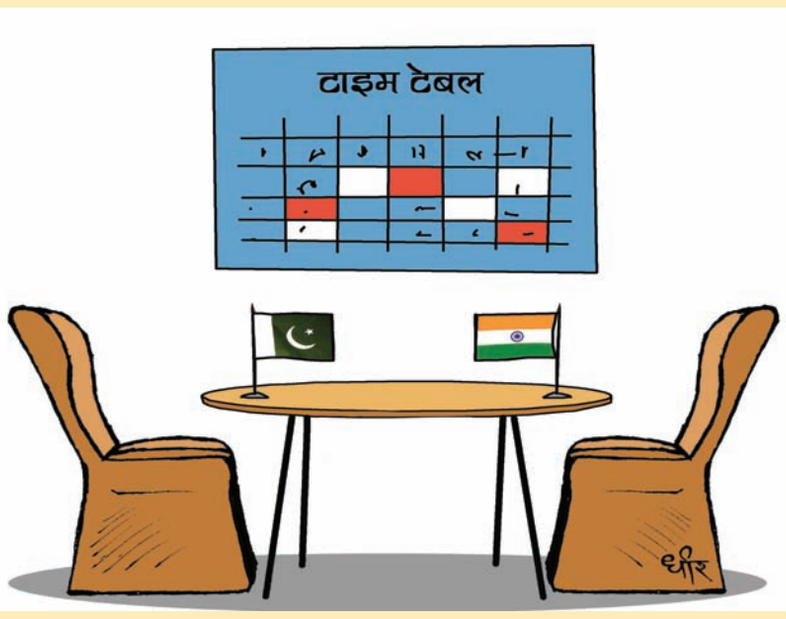

बातचीत के नए दौर की तैयारी में जुटी भारत सरकार ने इस बात को भी पूरी तरह भुला दिया है.

यदि पाकिस्तान का हृदय परिवर्तन हो रहा होता तो इन बातों को तार्किक ठहराया जा सकता था, लेकिन यहां तो हर ईंट का जवाब पत्थर से दिया जा रहा है. शर्म-अल-शेख के बाद से भारत पर बलूच अलगाववादियों को मदद पहुंचाने का आरोप लगाना पाकिस्तानी रणनीतिकारों का प्रिय शगल बन गया है. थिंफू में भारत को बातचीत के लिए मजबूर करने के बाद पाकिस्तान ने कश्मीर मुद्दे पर अपना रवैया फिर से बदल लिया है. देश की राष्ट्रीय असेंबली में बोलते हुए कुरैशी ने स्पष्ट रूप से कहा कि कश्मीर पर पाकिस्तान के ऐतिहासिक रुख़ में कोई बदलाव नहीं आया है. उन्होंने लीक से हटकर काम करने के लिए मुशर्रफ़ की जमकर आलोचना भी की. इस बीच भारत बातचीत की प्रक्रिया में लीक से हटकर चलने के फ़ायदों को गिन रहा है. हमारे रणनीतिकार अलादीन के चिराग को जोर-जोर से रगड़ते रहते हैं, इस उम्मीद में कि कोई आकर उनकी तीन नहीं, तो कम से कम एक ख्वाहिश ज़रूर पूरी कर देगा. बदले में उन्हें मिलता क्या है, भूतपूर्व अमेरिकी राजदूतों की एक झलक. अमेरिका नेहरू के जमाने में केनेडी के दूत रहे गेलब्रेथ को दोबारा खड़ा कर देता है, इसलिए नहीं कि वह बहुत ज़्यादा बुद्धिमान हैं, बल्कि इसलिए कि कश्मीर पर भारत और पाकिस्तान के सह-स्वामित्व का खाका उन्होंने तैयार किया था. गेलब्रेथ के फ़ार्मूले में भारत और पाकिस्तान के लिए अलग-अलग घर बने थे, जिनकी देखभाल और सुरक्षा की ज़िम्मेदारी अमेरिका की थी. यह फ़ार्मूला साठ के दशकों की यादों को ताज़ा कर जाता है.

बातचीत की मेज पर हर विकल्प उपलब्ध है, सिवाय उसके जो वास्तव में कारगर हो सकता है. यानी यथास्थिति को समस्या के समाधान की नींव के रूप में बदलने की प्रक्रिया. मुशर्रफ़ ने सीमा के दोनों ओर कड़ाई को कम करने की सलाह दी थी और ऐसा लगता है कि मनमोहन सिंह अब पछता रहे हैं कि उन्होंने तभी इसे मान क्यों नहीं लिया. लेकिन सीमा पर कड़ाई या ढिलाई तो तब होगी, जब कोई सीमा होगी और भारत एवं पाकिस्तान को किसी एक सीमा को स्वीकार करना होगा. पहले विश्व युद्ध के बाद अस्तित्व में आई वास्तविक नियंत्रण रेखा ने इसके बाद से तीन लड़ाइयां झेली हैं और अब तक बनी हुई है. यदि कुछ टूटा नहीं है, तो फिर उसके मरम्मत की क्या ज़रूरत है. भारत-पाकिस्तान के बीच बातचीत हो रही हो तो अमेरिका दोनों हाथों से काम करने लगता है. वह आधिकारिक रूप से कहीं नहीं होता, लेकिन हर जगह मौजूद रहता है. छुपी बातों को सार्वजनिक कर ख़ुश होने वाले पाकिस्तानी मीडिया ने यह बताने में थोड़ी भी देर नहीं लगाई कि दिल्ली में अमेरिकी दूतावास में बड़े अधिकारी रहे रॉबर्ट ब्लेक भी थिंफू में मौजूद थे. उसने यह ख़बर भी सार्वजनिक कर दी कि भारत में अमेरिका के मौजूदा राजदूत टिमोथी रोमर 4 मई को पाक राष्ट्रपति आसिफ अली जरदारी से मिले थे. अमेरिका की विदेश नीति बिल्कुल स्पष्ट है, जो उसके लिए ठीक है, वही बाक़ी दुनिया के लिए भी अच्छा है. यदि आपको अपनी व्यक्तिगत ज़रूरतें पूरी करनी हैं तो अमेरिकी ज़रूरतों के साथ उनका तारतम्य बैठाने की कोशिश कीजिए. ओबामा की पहली प्राथमिकता अफ़ग़ानिस्तान में निर्णायक जीत हासिल करना है. पाकिस्तान इस मामले में उसके हर आदेश को मानता रहा है, इस शर्त के साथ कि अमेरिका कश्मीर में भारतीय फौजों की मौजूदगी में कमी कराएगा और अफ़ग़ानिस्तान समस्या के समाधान में पाकिस्तान के लिए भी जगह होगी.

भारत भी अमेरिका के ख़िलाफ़ नहीं जाना चाहता. वाशिंगटन की ज़रूरतों को महसूस करते हुए पाकिस्तान और ज़्यादा बेलगाम होता जा रहा है. भारत के नज़रिए से बेहतर यही होगा कि वह कश्मीर मसले पर बातचीत को मोहरे के रूप में इस्तेमाल करे. इस मसले में इतने विरोधाभास हैं कि सारी परतें ख़ुद ही खुलती चली जाएंगी.

भारत ने बातचीत के लिए टेबल तैयार कर दी है. अब उसे पाकिस्तान के टाइम टेबल से निबटना होगा.

feedback@chauthiduniya.com

यूं ही बहता रहेगा अथिरापल्ली का पानी!

कांची कोहली

केरल में पश्चिमी घाट स्थित वझाचल के जंगलों में बहने वाली चलाकुडी नदी को छोड़ते हुए मैं जैसे-जैसे आगे बढ़ रही हूं. मेरे दिल में एक अजीब तरह की चिंता घर करती जा रही है. मैं जो लिख रही हूं, इसे पढ़ने वालों में कम लोग ही यहां तक आए होंगे. लेकिन, जो लोग मेरे अनुभवों के साझीदार हैं, वे इसकी अहमियत समझ सकते हैं. जैसे-जैसे मैं पारिस्थितिकी रूप से कमज़ोर हो चुके इस इलाक़े से दूर जा रही हूं, वैसे-वैसे मेरे हृदय पटल पर कई दृश्य अंकित होते जा रहे हैं. इनमें सबसे रोचक है बीस से भी ज़्यादा मॅकाकों (छोटी पूंछ वाले बंदरों की एक प्रजाति) को एक साथ देखना. शेर की तरह के पूंछ वाले बंदरों की यह प्रजाति पश्चिमी घाट के इलाक़ों में पाई जाती है, लेकिन इन बंदरों को यह नहीं पता कि उन पेड़ों का भविष्य क्या है, जिनकी डालियां पकड़ कर वे अठखेलियां करते हैं. इसका फ़ैसला तो दिल्ली में मौजूद सत्ता के गलियारों में होगा.

हालांकि यह समझना और भी ज़रूरी है कि अथिरापल्ली प्रोजेक्ट के ख़िलाफ़ पिछले एक दशक से कई तरह के अभियान चल रहे हैं. यह बांध एक ऐसी नदी पर बनाया जा रहा है, जिसका बिजली पैदा करने या सिंचाई कार्यों के लिए पहले ही जमकर दोहन किया जा चुका है. इसके बहाव क्षेत्र में पहले से ही छह प्रोजेक्ट चल रहे हैं.

पिछले क़रीब दो महीनों से वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के अंदर गर्मागर्म बहस छिड़ी हुई है कि इस प्रोजेक्ट को हरी झंडी दी जाए या नहीं. रोचक तथ्य यह है कि जनवरी, 2010 में मंत्रालय ने केरल स्टेट इलेक्ट्रिसिटी बोर्ड (केएसईबी) को एक कारण बताओ नोटिस जारी किया. नोटिस में केएसईबी से यह पूछा गया था कि प्रोजेक्ट को लेकर 2007 में दिए गए पर्यावरणीय क्लीयरेंस को वापस क्यों न ले लिया जाए. केएसईबी को यह क्लीयरेंस एक केंद्रीय क़ानून के तहत वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा ही दी गई थी. मंत्रालय ने यह नोटिस उन जानकारियों के आधार पर जारी किया है, जिसके मुताबिक़ 163 एमवी के अथिरापल्ली हाइड्रो इलेक्ट्रिक प्रोजेक्ट के निर्माण से इस इलाक़े में रहने वाली कादर जनजातियों पर बुरा असर पड़ेगा. इसके अलावा इससे इलाक़े की जैव विविधता भी प्रभावित होगी. मंत्रालय के इस नोटिस के बारे में जानकर मुझे ख़ुशी हुई. साथ ही यह आश्चर्य भी हुआ कि मंत्रालय को यह तर्क पहले क्यों नहीं सूझा.

हालांकि यह समझना और भी ज़रूरी है कि अथिरापल्ली प्रोजेक्ट के ख़िलाफ़ पिछले एक दशक से कई तरह के अभियान चल रहे हैं. यह बांध एक ऐसी नदी पर बनाया जा रहा है, जिसका बिजली पैदा करने या सिंचाई कार्यों के लिए पहले ही जमकर दोहन किया जा चुका है. इसके बहाव क्षेत्र में पहले से ही छह प्रोजेक्ट चल रहे हैं. इनमें से पांच केरल में स्थित हैं, जबकि एक तमिलनाडु में. जंगलों से होकर बहने वाली जलधाराओं के लिए अपने प्राकृतिक स्वरूप को बचाकर रखना वैसे ही मुश्किल होता है, इलाक़े के वनक्षेत्र में लगातार हो रही कमी से समस्या और गंभीर होती जा रही है. नतीजा यह है कि वझाचल क्षेत्र और चलाकुडी नदी के निचले इलाक़े में स्थित लोकप्रिय अथिरापल्ली जलप्रपात का इलाक़ा ही ऐसा बचा है, जहां नदी अपने पूरे वेग से बहती है. यदि नया बांध बन जाता है तो यही इलाक़ा सबसे ज़्यादा प्रभावित होगा. अथिरापल्ली प्रोजेक्ट के लिए प्रस्तावित जगह से बमुश्किल पांच किलोमीटर दूर नदी का अधिकांश हिस्सा पहले से बने बांधों के चलते स्थिर और ठहरा पड़ा है. कई जगहों पर नदी का पानी पाइपों से होते हुए प्रोजेक्ट के दूसरे हिस्सों तक पहुंचता है. यदि कुछ जगहों पर नदी का बहाव तेज़ भी नज़र

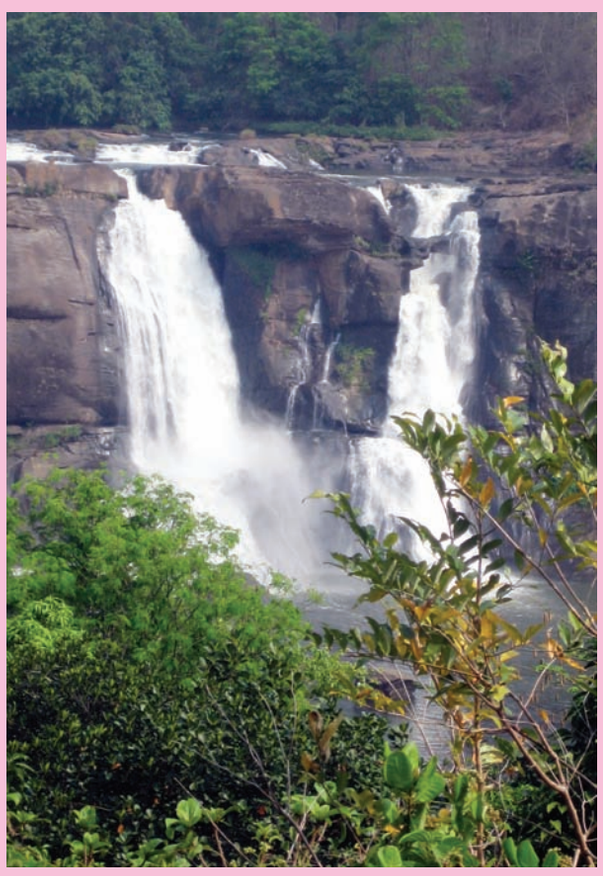

आता है तो इसकी वजह प्राकृतिक नहीं, बल्कि नदी के बहाव के ऊपरी क्षेत्र में स्थित बांधों से छूट रहे पानी का प्रवाह है.

यही वजह है कि स्थानीय कादर जनजाति और अथिरापल्ली इलाक़े में रहने वाले ग़ैर जनजातीय समुदायों ने प्रोजेक्ट के ख़िलाफ़ अदालत एवं उसके बाहर शांतिपूर्ण अभियान छेड़ रखा है. वर्ष 1998 में पहली बार क्लीयरेंस मिलने के बाद से प्रोजेक्ट के तकनीकी और वित्तीय पहलुओं को बार-बार चुनौती दी गई है. केरल उच्च न्यायालय के आदेश के आलोक में 2002 और 2006 में दो बार लोक अदालतें भी लगाई गई हैं. कम से कम दस स्थानीय निकाय संस्थाओं ने यह प्रस्ताव पारित किया है कि प्रोजेक्ट के निर्माण से पीने के पानी और सिंचाई की उनकी ज़रूरतों पर बुरा असर पड़ेगा. वर्ष 2005-06 और 2008-09 में पूरे देश से हज़ारों लोगों ने अथिरापल्ली में स्थानीय निवासियों द्वारा आयोजित सत्याग्रह में हिस्सा लिया था और प्रोजेक्ट के विरोध में अपनी आवाज़ बुलंद की थी. आश्चर्य की बात तो यह है कि तमाम विरोध के बावजूद केएसईबी ने वन मंत्रालय की नोटिस के जवाब में लिखा है कि प्रोजेक्ट के ख़िलाफ़ स्थानीय स्तर पर कोई विरोध नहीं है. इसे निरा झूठ और ग़ैर ज़िम्मेदार बयानबाज़ी से ज़्यादा कुछ नहीं कहा जा सकता. इसके विपरीत केएसईबी द्वारा प्रायोजित एन्वॉयरोंमेंट इंपैक्ट एसेसमेंट (ईआईए) रिपोर्ट में इन सब बातों की पूरी तरह अनदेखी की गई है. ईआईए की रिपोर्ट में कादर जनजाति के लोगों के गांव वझाचल पर पड़ने वाले प्रभाव की भी कोई चर्चा नहीं की गई है, जबकि यह गांव बांध निर्माण के प्रस्तावित स्थल से केवल 500 मीटर दूर स्थित है. 22 एवं 23 मार्च, 2010 को केएसईबी के अधिकारियों को वन एवं पर्यावरण मंत्रालय की एक्सपर्ट एप्रेजल कमेटी (ईएसी) के सामने अपना पक्ष रखने का मौक़ा मिला. लेकिन, बड़े दु:ख की बात है कि प्रोजेक्ट निर्माण के ख़िलाफ़ शांतिपूर्ण संघर्ष कर रहे स्थानीय लोगों एवं कार्यकर्ताओं को अभी तक यह मौक़ा नहीं मिला है, जबकि वे वर्षों से यह मांग कर रहे हैं. ख़ैर, यह तो हाल के दिनों की बात है.

इस बीच स्थानीय मीडिया में प्रोजेक्ट को लेकर कई तरह की अपुष्ट ख़बरें आ रही हैं. ऐसी ही एक ख़बर में बताया गया है कि केंद्रीय वन एवं पर्यावरण राज्यमंत्री जयराम रमेश ने ईएसी की रिपोर्ट पर तथ्यों की कमी के कारण दस्तखत करने से इंकार कर दिया है. चलाक्कुडी नदी के भविष्य का फ़ैसला करने वाली ताक़त उस जगह से सैकड़ों किलोमीटर दूर स्थित है, जहां यह नदी बहती है. मैं तो बस यही दुआ करती हूं कि इस नदी और यहां रहने वाले लोगों का सातवीं बार दोहन न हो और अथिरापल्ली नदी में पानी का प्रवाह इसी तरह बना रहे.

feedback@chauthiduniya.com

राजनीति की दुनिया का दोहरा चरित्र

10-16 मई के अंक की आवरण कथा-राजनीति की काली दुनिया बहुत अच्छी लगी. आलेख ने अवगत कराया कि किस तरह नेताओं की ग़लतफहमियों ने देश में राजनीतिक पतन का एक नया अध्याय लिख दिया. राजनीतिक दलों ने किस तरह गंदा खेल खेला, जिससे जनता का सिर शर्म से झुक गया. 27 अप्रैल, 2010 का दिन इतिहास बन चुका है, यह कई बातों के लिए याद किया जाएगा, बिल्कुल सही है. नेता किस तरह गिरगिट की तरह रंग बदलते हैं, यह इस दिन देखने को मिल गया. लेख से एक बात स्पष्ट हो गई कि राजनीति की दुनिया बाहर से जितनी उजली दिखती है, अंदर से उतनी ही काली है.

-गंगाधर पांडे, *जालंधर, पंजाब.*

बांग्लादेशी दुल्हनें

बिमल राय का लेख-बांग्लादेशी दुल्हनों का बाज़ार पढ़ा. जानकर आश्चर्य हुआ कि उत्तर भारत अनपढ़ और ग़रीब लड़कियों के व्यापार के मामले में सबसे आगे है. विश्व राजनीति में महाशक्ति बनने का दावा करने वाले देश के लिए यह वास्तव में दिल दहलाने वाला है. दु:ख की बात यह है कि शासन सब कुछ जानते हुए भी उदासीन है, क्योंकि वह कुछ करना ही नहीं चाहता.

-पवन कुमार, *हुगली, पश्चिम बंगाल.*

मुंबई पुलिस और विनीता काम्टे

आलेख-शहादत से उठते सवाल विचारोत्तेजक है. मुंबई हमले में शहीद हुए एडिशनल पुलिस कमिश्नर अशोक काम्टे की पत्नी विनीता द्वारा लिखी पुस्तक के बारे में जानकारी मिली. पता चला कि मुंबई पुलिस ने विनीता का कभी साथ नहीं दिया. आज भी मुंबई हमले के घाव हरे हैं. विनीता ने सारी सच्चाई जनता के सामने खोलकर रख दी कि किस तरह उनके पति की मौत हुई. इसी पृष्ठ पर प्रकाशित आलेख चाणक्य इस दौर में भी प्रासंगिक हैं, अच्छा लगा. चाणक्य के बारे में जानकारी मिली और आज भी लोग उनके विचारों पर अमल करते हैं, यह जानकर ख़ुशी हुई.

-हरीश चंद्र, *अलीगढ़, उत्तर प्रदेश.*

स्कूलों में बच्चों की सुरक्षा

10 मई-16 मई के अंक में प्रकाशित उमाशंकर का लेख-स्कूलों में बच्चों की सुरक्षा का सवाल एक ज्वलंत मुद्दे पर रोशनी डालता है. वाकई अब बच्चे स्कूल में सुरक्षित नहीं हैं, क्योंकि आएदिन किसी न किसी बच्चे के उत्पीड़न की ख़बर सुनने को मिल जाती है. सरकार और पुलिस दोनों वायदे तो करती हैं, इस तरह की घटनाओं को रोकने के लिए योजनाएं भी बनाई जाती हैं, लेकिन उन्हें अमलीजामा पहनाए जाने से पहले ही सारा उत्साह ठंडा हो जाता है.

-रीमा सेठ, *ई-मेल से.*

जानकारीपरक आलेख

साइबर अपराध और क़ानून के बारे में आपने जो सीरीज़ चलाई है, वह अच्छी और जानकारीपरक है. जस्टिस राजेश टंडन ने बड़ी बारीकी से विषय पर प्रकाश डाला है. जैसे-जैसे कंप्यूटर और इंटरनेट की लोकप्रियता बढ रही है, साइबर अपराधों की संख्या में भी तेज़ी से इज़ाफ़ होता जा रहा है. लेकिन वास्तविकता यह है कि अधिकांश लोग साइबर अपराधों के स्वरूप और प्रकृति से वाक़िफ़ नहीं हैं. ऐसे लेख जनसाधारण में जागरूकता पैदा करते हैं. इस लिहाज से आपका यह प्रयास वास्तव में सराहनीय है. उम्मीद है, ऐसी कोशिशें आगे भी जारी रहेंगी.

-सचिन सिंह, *छपरा, बिहार.*

सरदार सरोवर परियोजना की सच्चाई

सरदार सरोवर परियोजना पर आधारित आलेख ने सरकार के झूठे वायदों की पोल खोल दी. सरकार ने ग़रीब किसानों और मज़दूरों के लिए कई योजनाएं बनाईं, लेकिन वे कब बनीं और कब ख़त्म हो गईं, पता ही नहीं चला. अब देखना यह है कि खेतों एवं किसानों की प्यास कब बुझेगी.

-श्वेता तिवारी, *दिलशाद गॉर्डन, नई दिल्ली.*

धीर जी की मेरी दुनिया

मैं चौथी दुनिया का मेरी दुनिया कॉलम नियमित रूप से पढ़ता हूं. यह मुझे बहुत अच्छा लगता है. धीर जी के कार्टूनों का कोई जवाब नहीं है. मैंने ऐसे उम्दा कार्टून पहले कभी नहीं देखे.

-आशीष अग्रवाल, *सतना, मध्य प्रदेश*

कहानी-कविता भी छापें

आलेख शहादत से उठते सवाल पढ़ा. सरकार को पुस्तक में उठाए गए सवालों का जवाब देना चाहिए. इसके लिए निष्पक्ष रूप से जांच होनी चाहिए. मुन्नी मोबाइल सीरीज़ हर बार दिल को छू जाती है. आपसे गुज़ारिश है कि इसे कुछ और ज़्यादा स्थान दें, ताकि पुस्तक अंश अधिक से अधिक पढ़ा जा सके. राजनीति की काली दुनिया आलेख भी अच्छा है. आप कहानी, गज़ल एवं कविता आदि भी प्रकाशित किया करें.

-शिबली रामपुरी, *सहारनपुर, उत्तर प्रदेश.*

आप अपने स्वतंत्र विचार तथा प्रतिक्रियाएं हमें इसी पते पर भेजें.
संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर-11 नोएडा, (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

आईआरआरआई मुख्य रूप से दो काम करता है. यह विश्व भर के धान की किस्मों का जीन बैंक तैयार करता है. दूसरा काम धान की उपज से संबंधित मामलों में शोध करना है.

जब तोप मुक़ाबिल हो

संतोष भारतीय

जातिगत जनगणना क्यों उचित है

जब संसद में लालू यादव और मुलायम सिंह यादव ने यह मांग उठाई कि राष्ट्रीय जनगणना में जाति आधारित जनगणना होनी चाहिए तो देश में थोड़ी चिंता हुई. संसद में भाजपा से जुड़े अनंत कुमार ने तो लालू यादव पर हमला ही बोल दिया तथा उन्हें देशद्रोही जैसा साबित करने की कोशिश की. जो लोग देश में जाति व्यवस्था के ख़िलाफ़ हैं, उन्हें लगा कि कहीं इससे जाति व्यवस्था को बढ़ाने में मदद न मिले. लेकिन सरकार ने बाद में फ़ैसला लिया कि जाति आधारित जनगणना होनी चाहिए.

जाति आधारित जनगणना में कोई ऐसी बात नहीं है, जो असंवैधानिक या अव्यहारिक हो. डॉ. लोहिया कहा करते थे कि जाति बुरी चीज़ है, लेकिन जाति जैसी कठोर सच्चाई दूसरी नहीं है. और जाति तो एक ऐसा सच है, जिसका विश्व में कहीं और उदाहरण ही नहीं मिलता. हम जब चाहें तो अपना धर्म बदल सकते हैं, हिंदू से मुसलमान, मुसलमान से हिंदू या फिर ईसाई या सिख बन सकते हैं. लेकिन हम जितना चाहें, ब्राह्मण से ठाकुर, वैश्य से शूद्र या शूद्र से ठाकुर या ब्राह्मण नहीं बन सकते. जाति तो छोड़ दें, उपजाति में भी बदलाव की कोई गुंजाइश नहीं है. धर्म आसान है, जाति कठोर है.

हिंदू धर्म की इस वास्तविकता ने इस्लाम को भी अपनी जकड़ में ले लिया है. वहां भी शेख सैय्यद नहीं हो सकता, सिद्दीकी अंसारी नहीं हो सकता. बराबरी की बुनियाद पर खड़ा इस्लाम जाति व्यवस्था की वजह से ग़ैर बराबरी का शिकार हो गया है. अरब देशों में तो सब सुन्नी के रूप में जाने जाते हैं, पर जो लोग पुराने हिंदुस्तान से गए हैं, वे सब अपने साथ जातियां ले गए हैं. भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश इसकी मिसाल हैं.

इसलिए जब यहां मांग उठती है कि जाति आधारित जनगणना हो तो उसे इज़्ज़त देनी चाहिए. जनगणना दरअसल सही आंकड़ा जानने का एक माध्यम है. हमारे यहां योजनाएं ग़रीबी का आधार बनाकर, पिछड़ेपन का आधार बनाकर, दलित व अत्यंत ग़रीब आदिवासियों को आधार बनाकर बनाई जाती हैं. हिंदुस्तान में परंपरा से जो दलित, पिछड़े हैं वे आर्थिक रूप से भी कमज़ोर हैं. इनमें से कुछ आज भले आर्थिक रूप से मज़बूत हो गए हों, पर ज़्यादातर कमज़ोर हैं. बड़ी जातियों में भी ग़रीबी है. इसीलिए मांग उठ रही है कि आर्थिक रूप से ग़रीब तबकों को भी आरक्षण मिलना चाहिए. यह विषय महत्वपूर्ण है, पर इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण है कि हमें कम से कम पता तो चले कि किस जाति की कितनी जनसंख्या है. एक अंदाज़ा है कि सत्ताइस प्रतिशत पिछड़े हैं. अगर जनगणना में पता चलता है कि पिछड़ों की संख्या सत्ताइस प्रतिशत से कम है तो उनका आरक्षण प्रतिशत घटाया जा सकता है और अगर पता चलता है कि उनकी संख्या ज़्यादा है तो उनका प्रतिशत बढ़ाया जा सकता है. यह बाक़ी जातियों और वर्गों के साथ भी हो सकता है.

इसलिए अगर सही योजना बनानी है और उसका सही फ़ायदा उचित लोगों तक पहुंचाना है तो जाति आधारित जनगणना आवश्यक है. राजस्थान में गूजर अपने को दलित वर्ग में आरक्षित करने के लिए आंदोलन कर रहे हैं. ऐसी मांग दूसरी जातियां देश के कई हिस्सों में कर सकती हैं. ये मांगें भी इसीलिए उठ रही हैं, क्योंकि एक वर्ग को लगता है कि दूसरे वर्ग को जाति विशेष में होने का ज़्यादा फ़ायदा मिल रहा है. अगर जातियों की सही संख्या पता चलती है तो उनकी आर्थिक स्थिति का भी पता चल जाएगा. सबसे बड़ी बात यह होगी कि हिंदुस्तान की बुनियादी संरचना के आधार का पता चल जाएगा और हम आज़ादी के बाद सही योजना बनाने की शुरुआत कर सकेंगे.

यहीं पर सुप्रीम कोर्ट की बात भी करनी चाहिए. एक मांग उठ रही थी कि ईसाई व मुस्लिम धर्म मानने वाले लोगों में जो लोग वही काम कर रहे हैं, जो हिंदुओं में दलित वर्ग के लोग कर रहे हैं तो उन्हें वैसी सुविधाएं क्यों नहीं मिल रही हैं. यह सच्चाई है कि दलित जातियों से ईसाई व मुसलमान हुए लोग वहां भी वही काम कर रहे हैं, जो पहले करते थे. सुप्रीम कोर्ट ने सरकार से कहा कि वह रंगनाथ मिश्र आयोग से कहे कि वह ईसाई व मुस्लिम समाज में ऐसे लोगों की पहचान करे. अब रंगनाथ मिश्र कमीशन की रिपोर्ट आ गई है और रंगनाथ मिश्र ने कई सिफ़ारिशें की हैं. जाति आधारित जनगणना से यह भी पता चल जाएगा कि ईसाई व मुस्लिम समाज में वे जातियां कौन हैं, जिन्हें आरक्षण या अन्य सुविधाएं वैसी ही मिलनी चाहिए, जैसी हिंदू समाज की जातियों को मिलती हैं.

अगर जाति व्यवस्था समाप्त करनी है तो ऐसी विकास नीति बनानी होगी, जो सबसे पहले समाज के अंतिम आदमी को फ़ायदा पहुंचाए, फिर कमज़ोर वर्गों को. अगर देश का समग्र विकास होता है और सबसे कमज़ोर तबकों, दलितों, पिछड़ों को फ़ायदा मिलता है तो संभवत: बीस-पच्चीस वर्षों के बाद जाति व्यवस्था से ऊपर उठकर सोचने वालों की तादाद शायद बढ़े.

इसीलिए कई लोग इस तरह की जनगणना का विरोध कर रहे हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि उनके हिस्से की सुविधाएं बांटने कई और लोग आ जाएंगे. जबकि सोच यह होना चाहिए कि हम सब मिल बांट कर खाएंगे. आज कमी है, पर संसाधन बढ़ाने की कोशिश तो की जा सकती है. इसका बुनियादी आधार भी हमें जाति आधारित जनगणना से मिल जाएगा.

जाति समाप्त होनी चाहिए, देश के सामाजिक आंदोलन कई बार यह मांग उठा चुके हैं. बड़े राजनैतिक नेता भी इसकी मांग करते रहे हैं. जाति व्यवस्था को देश के विकास के लिए सामाजिक अवरोध बताने वाले भी कम नहीं हैं. जाति को सत्ता प्राप्ति का साधन बनाने के लिए कई लोग कोशिश करते भी हैं और सफल भी होते हैं. इसका फिर इलाज क्या है. इस पर सोचने की शुरुआत यहां क्यों नहीं होती.

अगर जाति व्यवस्था समाप्त करनी है तो ऐसी विकास नीति बनानी होगी, जो सबसे पहले समाज के अंतिम आदमी को फ़ायदा पहुंचाए, फिर कमज़ोर वर्गों को. अगर देश का समग्र विकास होता है और सबसे कमज़ोर तबकों, दलितों, पिछड़ों को फ़ायदा मिलता है तो संभवत: बीस-पच्चीस वर्षों के बाद जाति व्यवस्था से ऊपर उठकर सोचने वालों की तादाद शायद बढ़े. आज तो जाति आधारित समाज में भी ऐसे लोगों की कमी हो गई है, जो अपनी जाति के ग़रीबों के बारे में सोचते हों.

भारत में जाति और वर्ग एक दूसरे के पर्याय जैसे हो रहे हैं. ऐसे राजनैतिक नेतृत्व की ज़रूरत है, जो देश के सभी वर्गों व जातियों के बारे में सोचे. न सोचने का ही नतीजा है कि देश में अपराध, छीनाझपटी व नक्सलवाद बढ़ रहा है. इसे सोचने के लिए किसी सुकरात या तुलसीदास की ज़रूरत नहीं है. आज का राजनैतिक नेतृत्व यह कर सकता है, बशर्ते वह करना चाहे. आशा अच्छे की करनी चाहिए.

संपादक
editor@chauthiduniya.com

धान हमारा, आईआरआरआई कौन?

शालिनी भूटानी

यह बात उस चावल के बारे में है, जो हम खाते हैं. दुनिया में धान के कुल उत्पादन का 90 प्रतिशत से ज़्यादा हिस्सा एशियाई किसानों द्वारा उपजाया जाता है. उपज के लिए इस्तेमाल होने वाले धान का बीज ख़ुद किसान ही बचाकर रखता है और इसकी क़िस्में भी वही होती हैं, जो किसानों के पास होती हैं या शोध संस्थाओं द्वारा परिवर्द्धित होती हैं. बीजों के इस विस्तृत बाज़ार में अपनी उपस्थिति मज़बूत करने के लिए निजी क्षेत्र बीजों का बाज़ारीकरण करना चाहता है, ताकि उसे फ़ायदा हो. निजी क्षेत्र की इन गतिविधियों से धान उपजाने के किसानों के परंपरागत तरीक़ों पर गंभीर ख़तरा मंडराने लगा है. हैरत की बात यह है कि सबसे बड़ा ख़तरा कृषि शोध संस्थानों के चलते पैदा हो रहा है.

द इंटरनेशनल राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट (आईआरआरआई) का गठन 1960 में किया गया था. इसकी स्थापना का प्रमुख उद्देश्य विकासशील देशों के ग़रीब किसानों और उनके शोध संस्थानों एवं कृषि विकास केंद्रों को फ़ायदा पहुंचाना था. दिसंबर, 1959 में न्यूयॉर्क में फोर्ड फाउंडेशन, रॉकफेलर फाउंडेशन और फिलीपींस सरकार ने जिस दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर किए थे, उसके मुताबिक़ लोस बानोस में स्थापित होने वाले आईआरआरआई का अस्तित्व अगले पचास सालों तक ही बना रहना था. अप्रैल, 1960 में साउथ इस्ट एशियन आइलैंड नेशन ऑफ फिलीपींस में इसे एक चैरिटेबल ट्रस्ट के रूप में पंजीकृत किया गया. साल 2001 के सितंबर माह में यूनिवर्सिटी ऑफ द फिलीपींस लोस बानोस, जो आईआरआरआई की सहयोगी एवं संरक्षक है, ने इसे दी गई ज़मीन की लीज 30 जून, 2025 तक बढ़ा दी. हालांकि ऐसा कोई वाकया याद नहीं आता, जब एशिया या कहीं और के धान किसानों ने इसके लिए मांग की हो. फिर भी, आईआरआरआई के कार्यकाल को बढ़ा दिया गया. अब सवाल यह है कि किसानों की हितैषी संस्था के घोषित उद्देश्य के साथ स्थापित यह संगठन निजी क्षेत्र के लिए और उसके साथ मिलकर कैसे काम कर पाएगा.

आईआरआरआई मुख्य रूप से दो काम करता है. यह विश्व भर के धान की किस्मों का जीन बैंक तैयार करता है. इसका दूसरा काम धान की उपज से संबंधित मामलों में शोध करना है. वर्तमान समय में आईआरआरआई के पास 125 से भी ज़्यादा देशों के धान की 109,189 किस्मों का जीन बैंक मौजूद है. इनमें से क़रीब 80 प्रतिशत किस्में ऐसी हैं, जो किसानों द्वारा उपजाई जाती हैं और इन्हें खेतों से ही जमा किया गया है. आईआरआरआई के जीन बैंक में सबसे ज़्यादा योगदान भारत का ही है. अन्य अंतरराष्ट्रीय जीन बैंकों की तरह आईआरआरआई भी धान की इन किस्मों को इंटरनेशनल पब्लिक गुड (आईपीजी) की तरह सुरक्षित रखने के लिए क़ानूनी रूप से ज़िम्मेदार है. इसका तात्पर्य यह है कि किसी भी पेटेंट अधिकार (आईपीआर) से मुक्त है. किसान धान को अपनी निजी संपत्ति नहीं मानते. अनौपचारिक बीज तंत्रों के काम करने का यही तरीक़ा है, खेती के सामानों का बंटवारा और बीज की किस्मों का आदान-प्रदान. लेकिन, 1960 के बाद से अब तक कृषि क्षेत्र में शोधों की दशा और दिशा काफी हद तक बदल चुकी है. विकास की प्रक्रिया में निजी क्षेत्र का प्रवेश और कृषि तकनीकों का व्यापक विस्तार एवं तमाम तरह के पेटेंट अधिकार (आईपीआर)-जैसे पौधों की प्रजातियों का पेटेंट. दो सबसे महत्वपूर्ण बदलाव देखने को मिले हैं. पेटेंट अधिकारों से बीज तकनीक पर भी असर पड़ता है और यही वजह है कि आईआरआरआई जैसी संस्थाएं ख़ुद पौधों के जीनों का आईपीआर हासिल करने पर विचार करने को मजबूर हो रही हैं. लेकिन, आईआरआरआई ने संयुक्त राष्ट्र के फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइज़ेशन के साथ जो क़रार किया है, उसमें स्पष्ट लिखा है कि वह पौधों की जीन बैंकिंग का काम एक ट्रस्ट के रूप में करेगा. क़ानून के मुताबिक़, किसी संपत्ति का ट्रस्टी उससे कोई लाभ हासिल नहीं कर सकता, वह केवल लाभार्थी को ही मिल सकता है. इस मामले में लाभार्थी दुनिया भर के किसान हैं. इतना ही नहीं, आईआरआरआई यदि किसी बीज कंपनी को धान का कोई जीन देता है तो उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि उक्त कंपनी संबद्ध जीन के पेटेंट अधिकार हासिल करने की कोशिश नहीं करेगी. यदि उक्त कंपनियां किसी तीसरे पक्ष को जीन देती हैं तो उन्हें भी ऐसा ही करना होगा, लेकिन समस्या यह है कि आईआरआरआई जिन बीज कंपनियों के साथ मिलकर काम कर रहा है, वे आईपीआर की मांग करती हैं. आईआरआरआई का दूसरा महत्वपूर्ण काम शोध करना है. शोध का लक्ष्य किसानों एवं कृषि विकास केंद्रों को फ़ायदा पहुंचाना है. इस साल जब आईआरआरआई अपनी पचासवीं सालगिरह मना रहा है, छोटे किसान पिछले पांच दशकों में इसके कामकाज पर सवालिया निशान खड़े कर रहे हैं.

आईआरआरआई एशिया महाद्वीप में हरित क्रांति का शरणस्थली था. इस क्रांति ने ज़्यादा पैदावार वाली संकर प्रजातियों को बढ़ावा दिया, जिनकी लागत ज़्यादा थी और जिनसे मानवीय एवं पारिस्थितिकीय स्वास्थ्य की क़ीमत पर रासायनिक पदार्थों के इस्तेमाल का प्रचलन भी बढ़ा. पिछले कुछ दशकों से धान की संकर किस्मों से छोटे किसान ख़ुश नहीं हैं. फिर भी, आईआरआरआई इन किस्मों को बढ़ावा दे रहा है, क्योंकि एक तो इससे धान की खेती पर उसका नियंत्रण बना रहता है और दूसरा इससे बीज एवं कृषि-रासायनिक कंपनियों को फ़ायदा होता है. आईआरआरआई कॉरपोरेट घरानों के साथ मिलकर धान की अनुवांशिक रूप से परिवर्द्धित (जीएम) प्रजातियों का भी विकास कर रहा है. भारत में तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय धान की जीएम प्रजातियों पर शोध कर रहा है. आईआरआरआई 2009 से लेकर 2012 तक इंडियन काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च (आईसीएआर) के साथ मिलकर काम करेगा और इसके लिए धन बिल एवं मलिंडा गेट्स फाउंडेशन द्वारा उपलब्ध कराया जा रहा है. भारत के डॉ. एम एस स्वामीनाथन 1982 से 1988 के बीच आईआरआरआई के महानिदेशक रह चुके हैं. आईसीएआर के पूर्व मुखिया डॉ. मंगला राय अभी भी इसके बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज में शामिल हैं. भारत में मॉनसेंटो की प्रमुख सहयोगी माहिको इंडिया लिमिटेड की उपनिदेशक-बायोटेक्नोलॉजी डॉ. उषा बरवाले भी इसके बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज में शामिल हैं. इस लिहाज़ से देखा जाए तो आईआरआरआई के शोध की दिशा का निर्धारण करने वाली कमेटी में भारत की कृषि क्षेत्र की शीर्ष संस्था और देश में सक्रिय बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रतिनिधि भी शामिल हैं. भारत के उड़ीसा में स्थित सेंट्रल राइस रिसर्च इंस्टीट्यूट धान की ऐसी प्रजाति का प्रयोग कर रहा है, जो पानी में डूबने के बाद भी ख़राब नहीं होती. स्वर्ण सुब-1 नामक इस प्रजाति को जैव तकनीक के सहारे विकसित किया गया है.

सच्चाई यह है किसानों की संपत्ति औद्योगिक घरानों का कच्चा माल है, जबकि ख़ुद किसान ही बीज निर्माता कंपनियों के लक्षित ग्राहक हैं. निजी क्षेत्र की कंपनियां उन देशों में बीजों के व्यवसायिक उत्पादन पर स्वामित्वपूर्ण अधिकार की मांग कर रही हैं, जहां वे सक्रिय हैं. 2008 में आईआरआरआई ने अपने हाइब्रिड राइस रिसर्च एंड डेवलपमेंट कंसोर्टियम (एचआरडीसी) की घोषणा की. एचआरडीसी के संस्थापक सदस्यों में सात देशों की 19 निजी कंपनियां शामिल हैं, जिनमें एडवांटा, बेयर, डीसीएम श्रीराम, ड्यूपॉन्ट, पायोनियर और सिग्नेटा का नाम लिया जा सकता है. इसके अलावा भारत, चीन, इंडोनेशिया, ईरान, मलेशिया, फिलीपींस, श्रीलंका और वियतनाम के 15 सार्वजनिक क्षेत्रों के संस्थान भी इसमें शामिल हैं. एचआरडीसी का मतलब आईआरआरआई द्वारा संबद्ध देशों में बीजों के व्यवसायिक उत्पादन और उनके विक्रय का अधिकार निजी क्षेत्र की कंपनियों को हस्तांतरित करना है. इसके बदले में इन कंपनियों को भुगतान करना होगा. एचआरडीसी के लिए जारी किए गए नए दिशानिर्देश इस साल एक जनवरी से प्रभावी हो गए हैं. जनवरी 2010 से आईआरआरआई द्वारा विकसित धान की छह नई संकर प्रजातियां भी एचआरडीसी के सदस्यों के लिए उपलब्ध हैं. सार्वजनिक प्रतिष्ठानों के लिए कंसोर्टियम की सदस्यता नि:शुल्क है, जबकि निजी क्षेत्र की कंपनियों को इसके लिए शुल्क देना होता है. सदस्यता शुल्क से प्राप्त होने वाली राशि आईआरआरआई को दी जाएगी. स्पष्ट है कि एक ओर आईआरआरआई किसानों के बीजों का निजी कंपनियों के साथ व्यवसायिक इस्तेमाल कर रहा है, मुनाफ़ा कमा रहा है तो दूसरी ओर धान की खेती पर किसानों के बजाय अपना नियंत्रण बनाए रखने में कामयाब हो रहा है.

धान किसान आज ख़ुद को ठगा हुआ महसूस कर रहे हैं. एशियाई किसानों की राय में आईआरआरआई अपने अब तक के पचास सालों के कार्यकाल में बुरी तरह विफल रहा है. वे आज भी इसे बंद किए जाने की मांग कर रहे हैं. अप्रैल महीने के पूर्वार्द्ध में कई किसान समूहों ने फिलीपींस में इसके मुख्यालय के सामने विरोध प्रदर्शन किया था.

धान किसान आज ख़ुद को ठगा हुआ महसूस कर रहे हैं. एशियाई किसानों की राय में आईआरआरआई अपने अब तक के पचास सालों के कार्यकाल में बुरी तरह विफल रहा है. वे आज भी इसे बंद किए जाने की मांग कर रहे हैं. अप्रैल महीने के पूर्वार्द्ध में कई किसान समूहों ने फिलीपींस में इसके मुख्यालय के सामने विरोध प्रदर्शन किया था. निगम के रूप में अपने नए अवतार में आईआरआरआई अपने मूल उद्देश्यों से और दूर हो जाएगा. इससे दुनिया भर के धान किसानों के प्रति इसके क़ानूनी, सामाजिक और नैतिक दायित्व भी पृष्ठभूमि में चले जाएंगे, जबकि धान के संवर्द्धन और संरक्षण का सबसे बड़ा काम किसान ही करते हैं. बेहतर यही होगा कि आईआरआरआई धान से जुड़े ऐसे सभी कामों को किसानों के सुरक्षित हाथों में ही छोड़ दे.

(लेखिका ग़ैर सरकारी संस्था ग्रेन से जुड़ी हैं)

feedback@chauthiduniya.com

शोधकर्ताओं का कहना है कि कम सोना ख़राब स्वास्थ्य का प्रमुख कारण बन सकता है. अंततः यह समय पूर्व मौत का कारण भी बन सकता है, जबकि अधिक सोना ख़राब स्वास्थ्य की निशानी पहले से ही मानी जाती है.

कब होगी न्यायालय की अवमानना

पिछले अंक में हमने आपको तीसरे पक्ष के बारे में बताया था. हम उम्मीद करते हैं कि आगे से जब कभी भी आपको लोक सूचना अधिकारी की तरफ़ से ऐसा जवाब मिले कि तीसरे पक्ष से जुड़े होने के कारण आपको अमुक सूचना नहीं दी सकती है, तब आप चुपचाप नहीं बैठ जाएंगे, बल्कि लोक सूचना अधिकारी को पत्र लिखकर या व्यक्तिगत रूप से मिलकर यह समझाने की कोशिश करेंगे कि कैसे आपके द्वारा मांगी गई सूचना को सार्वजनिक करने से जनसाधारण को लाभ पहुंचेगा. और, अगर फिर भी लोक सूचना अधिकारी आपकी बातों से सहमत नहीं होता है, तब आप आपने तर्कों के साथ प्रथम या द्वितीय अपील ज़रूर करेंगे. इसके आगे इस अंक में हम आपको ऐसी सूचना के प्रकटीकरण से संबंधित बातें बता रहे हैं, जिसका संबंध न्यायालय से है या जिसके बारे में कहा जाता है कि अमुक सूचना को सार्वजनिक करने से न्यायालय की अवमानना होती है. हम आपको बता दें कि लोक सूचना अधिकारी न्यायालय की अवमानना की बात कहकर भी कई बार सूचना देने से मना कर देते हैं. हो सकता है कि कई बार यह तर्क सही भी हो, लेकिन ज़्यादातर मामलों में देखा गया है कि लोक सूचना अधिकारी इस तर्क का ग़लत इस्तेमाल करते हैं. इसलिए यह ज़रूरी है कि आवेदक को न्यायालय की अवमानना की सही परिभाषा के बारे में जानकारी हो. इस अंक में हम आपको उदाहरण सहित यह बता रहे हैं कि न्यायालय की अवमानना कब और कैसे होती है और किन–किन परिस्थितियों में आपको सूचना देने से मना किया जा सकता है और किन–किन परिस्थितियों में नहीं. हमें उम्मीद है कि आप जमकर आरटीआई क़ानून का इस्तेमाल कर रहे होंगे और दूसरों को भी इसके लिए प्रोत्साहित करते होंगे. अगर कोई समस्या या परेशानी हो तो हमें ज़रूर बताएं, हम हर क़दम पर आपको मदद देने के लिए तैयार हैं.

सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 की धारा 8(1)(बी) में ऐसी सूचनाएं, जिनके प्रकाशन पर किसी न्यायालय या अधिकरण द्वारा अभिव्यक्त रूप से प्रतिबंध लगाया गया हो या जिसके प्रकटन से न्यायालय की अवमानना होती हो, उसके सार्वजनिक किए जाने पर रोक लगाई गई है. अगर कोई मामला किसी कोर्ट में निर्णय के लिए विचाराधीन है तो उसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि उससे संबंधित कोई सूचना नहीं मांगी जा सकती. विचाराधीन मामलों के संबंध में कोई सूचना सार्वजनिक किए जाने से कोर्ट की अवमानना हो, यह ज़रूरी नहीं है. हां, कोई विशेष सूचना, जिसे कोर्ट ने स्पष्ट तौर पर सार्वजनिक किए जाने पर रोक लगा दी हो, अगर उसे सार्वजनिक किए जाने की बात होगी तो कोर्ट की अवमानना ज़रूर होगी. गोधरा जांच के दौरान उच्च न्यायालय ने अपने एक फ़ैसले में रेल मंत्रालय को विशेष तौर पर निर्देश दिए थे कि वह गोधरा नरसंहार की जांच रिपोर्ट संसद के समक्ष प्रस्तुत न करे. न्यायालय ने रिपोर्ट के सार्वजनिक किए जाने पर रोक लगा दी. यह सूचना दिए जाने से कोर्ट की अवमानना भी हो सकती थी और धारा 8 (1)(बी) का उल्लंघन भी. ऐसे मुद्दों पर अधिकारियों को केवल वही सूचनाएं देने से मना करना चाहिए, जिन्हें न्यायालय ने स्पष्ट तौर पर सार्वजनिक किए जाने से निषिद्ध कर रखा हो. कुछ मामलों में देखने में आया है कि सरकारी अधिकारी इस धारा का इस्तेमाल सूचना न देने के बहाने के रूप में धड़ल्ले से कर रहे हैं. अफरोज ने एम्स और दिल्ली पुलिस से बाटला हाउस मुठभेड़ के दौरान मारे गए तथाकथित आतंकियों की पोस्टमार्टम रिपोर्ट, एफआईआर की कॉपी एवं दिल्ली में हुए सीरियल धमाकों की तफ्तीश के दौरान गिरफ़्तारी आदि की जानकारी मांगी थी. जवाब में बताया गया कि मामला न्यायालय में विचाराधीन है और सूचना नहीं दी जा सकती, जबकि कोर्ट द्वारा सूचना सार्वजनिक न किए जाने के संबंध में दिया गया ऐसा कोई भी आदेश प्रकाश में नहीं आया.

ऐसे में सूचना आयुक्तों की ज़िम्मेदारी बहुत बढ़ जाती है, जिसे उन्होंने बख़ूबी निभाया है.

क्या कहता है क़ानून

सूचना के अधिकार क़ानून में कोर्ट की अवमानना को परिभाषित नहीं किया गया है. इसे समझने के लिए न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 का सहारा लिया जा सकता है. अधिनियम की धारा 2(ए) (बी) और (सी) में बताया गया है कि–

ए– दीवानी या फौजदारी दोनों तरह से कोर्ट की अवमानना हो सकती है.

बी– यदि किसी कोर्ट के निर्णय, डिक्री, आदेश, निर्देश, याचिका या कोर्ट की किसी प्रक्रिया का जानबूझ कर उल्लंघन किया जाए या कोर्ट द्वारा दिए गए किसी वचन को जानबूझ कर भंग किया जाए तो यह कोर्ट की दीवानी अवमानना होगी.

सी– किसी प्रकाशन, चाहे वह मौखिक, लिखित, सांकेतिक या किसी अभिवेदन या अन्य किसी माध्यम या कृत्य द्वारा –

1. बदनाम या बदनाम करने की कोशिश या अभिकरण या कोर्ट को नीचा दिखाने की कोशिश की जाए.
2. किसी न्यायिक प्रक्रिया में पक्षपात या हस्तक्षेप.
3. न्याय व्यवस्था में किसी प्रकार से हस्तक्षेप या उसे बाधित करना या बाधित करने की कोशिश करना न्यायालय की अवमानना हो सकती है.

यदि आपने सूचना क़ानून का इस्तेमाल किया है और अगर कोई सूचना आपके पास है, जिसे आप हमारे साथ बांटना चाहते हैं तो हमें वह सूचना निम्न पते पर भेजें. हम उसे प्रकाशित करेंगे. इसके अलावा सूचना का अधिकार क़ानून से संबंधित किसी भी सुझाव या परामर्श के लिए आप हमें ई-मेल कर सकते हैं या हमें पत्र लिख सकते हैं. हमारा पता है :

चौथी दुनिया
एफ–2, सेक्टर–11, नोएडा
(गौतमबुद्ध नगर) उत्तर प्रदेश
पिन –201301
ई-मेल : rti@chauthiduniya.com

ज़रा हट के

कम सोना सेहत के लिए ख़तरनाक

कहते हैं, *अति सर्वत्र वर्ज्यते*. मतलब यह कि कोई भी काम अधिक नहीं करना चाहिए. नहीं तो, शरीर पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है. इसलिए कोई भी काम सीमा के अंदर ही करें. जिसका फ़ायदा आपको हमेशा मिलता रहेगा. इससे जुड़ा एक मामला सामने आया है कि अधिक सोना ख़तरनाक है और कम सोना भी.

अगर आप रोज़ छह घंटे से कम सोते हैं तो आपकी जान को ख़तरा है. ब्रिटेन एवं इटली के वैज्ञानिकों का कहना है कि जो लोग कम सोते हैं, उनकी सामान्य नींद लेने वालों की तुलना में 25 साल पहले ही मौत हो जाने का ख़तरा 12 फ़ीसदी अधिक होता है. हालांकि अधिक सोना कमज़ोर स्वास्थ्य का प्रतीक हो सकता है और इसका लोगों के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है. इस अध्ययन के नतीजे स्लीप जर्नल में प्रकाशित किए गए हैं. शोध में पंद्रह लाख लोगों को शामिल किया गया था. ब्रिटेन, अमेरिका, यूरोप और पूर्वी एशियाई देशों में किए गए अध्ययनों की तुलना करते हुए इसमें नींद और मौत के बीच के संबंधों को देखा गया है.

ब्रिटेन एवं इटली के शोधकर्ताओं का कहना है कि कम सोना ख़राब स्वास्थ्य का प्रमुख कारण बन सकता है. अंततः यह समय पूर्व मौत का कारण भी बन सकता है, जबकि अधिक सोना ख़राब स्वास्थ्य की निशानी पहले से ही मानी जाती है. ब्रिटेन के वारिक विश्वविद्यालय के नींद, स्वास्थ्य एवं सामाजिक कार्यक्रम विभाग के प्रोफेसर फ्रांसिस्को कैप्रूचिओ कहते हैं, आधुनिक समाज के लोगों की औसत नींद में लगातार कमी देखी जा रही है, यह पूर्णकालिक काम करने वाले लोगों में एक सामान्य सी बात है. वहीं दूसरी ओर हमारे स्वास्थ्य में गिरावट अक्सर सोने के समय में बढ़ोत्तरी से जुड़ी होती है. यदि सोने में कमी और मौत के बीच संबंध सही है तो इसे ब्रिटेन में 16 साल तक के 63 लाख लोगों की मौतों से जोड़ा जा सकता है.

उन्होंने कहा कि इस मसले को सही ढंग से समझने के लिए अभी और अध्ययन करने की ज़रूरत है. लाफबूरा के नींद शोध केंद्र के प्रोफेसर जिम हार्ने कहते हैं कि नींद के अलावा भी समय से पहले मौत के कई और कारण हो सकते हैं. वह कहते हैं कि मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए नींद लिटमस पेपर है. नींद पर बीमारियों और अवसाद जैसी परिस्थितियों का भी प्रभाव पड़ता है. उन्होंने कहा कि नींद के घंटे बढ़ने से किसी व्यक्ति का स्वास्थ्य बेहतर नहीं होता और वह अधिक समय तक नहीं जीता है, लेकिन एक रात में पांच घंटे से कम सोना शायद ठीक नहीं है.

बिल्ली को पहनाई वरमाला

जर्मनी के एक शख्स ने सेसेलिया से शादी रचाकर सनसनी फैला दी. आप भी सोच में पड़ गए होंगे कि इसमें सनसनी फैलने वाली कौन सी बात है? शादी तो सभी करते हैं. अरे जनाब, उसने किसी महिला से नहीं, बल्कि सेसेलिया नामक बिल्ली से शादी की है, जबकि जर्मनी में जानवरों से शादी करना ग़ैरक़ानूनी है. अब इसे आप क्या कहेंगे, किसी जानवर के प्रति उनका अगाध प्रेम या कुछ अलग करने की विलक्षण प्रतिभा! ख़ैर, आप इसे कुछ भी कहें, वह इस शादी से बेहद ख़ुश है. शादी करने की वजह भी काफी रोचक है. उवे मित्जसचेर्लिच नामक इस युवक ने यह क़दम इसलिए उठाया, क्योंकि उसकी बिल्ली मरने की हालत में है. इससे भावुक होकर उसने बिल्ली से शादी कर ली. बड़े ही धूमधाम से दोनों की शादी हुई और मेहमानों के मनोरंजन के लिए वहां की प्रसिद्ध अदाकारा को भी बुलाया गया.

मित्जसचेर्लिच की 15 वर्षीय बिल्ली सेसेलिया उम्र के अंतिम पड़ाव पर बीमार रहने लगी है और उसकी मौत कभी भी हो सकती है. सेसेलिया से असीम प्रेम करने वाला मित्जसचेर्लिच इसी वजह से परेशान है. वह चाहता था कि सेसेलिया की मौत से पहले उन दोनों के बीच एक नायाब रिश्ता बन जाए. इसलिए क़ानून और लोगों की परवाह किए बग़ैर उसने बिल्ली से शादी करने का फ़ैसला किया.

विवाह समारोह की शोभा बढ़ाने के लिए उन्होंने 300 यूरो (1,74,000 रुपये) देकर एक टीवी अभिनेत्री को बुलाया. शादी के दौरान मित्जसचेर्लिच हैट और सफ़ेद रंग की पोशाक पहने हुए थे, जबकि सेसेलिया नामक बिल्ली को सफ़ेद ड्रेस पहनाई गई थी. दूल्हे के जुड़वा भाई एरिक शादी के गवाह बने.

शादी के बाद ड्रेसडेन शहर के 39 साल के पोस्टमैन मित्जसचेर्लिच ने कहा सेसिलिया बेहद भरोसेमंद है. हम दोनों हमेशा खेलते रहते हैं और वह हमेशा मेरे साथ बिस्तर पर सोती रही है. उन्होंने शादी के बाद मानसिक सुकून और लोगों को ध्यान तो हासिल कर लिया है, लेकिन हो सकता है कि आगे उन्हें अब क़ानूनी उलझनों से गुज़रना पड़े.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

राशिफल

दिल्ली, 24 मई–30 मई 2010

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)
व्यवसायिक क्षेत्र में तरक़्क़ी के योग हैं. वित्तीय फायदे हो सकते हैं. परिवार का सही समय पर सहयोग मिलेगा, जो आपके लिए फ़ायदेमंद साबित होगा. परिवार एवं दोस्तों के साथ कोई आयोजन हो सकता है. स्वास्थ्य पर ध्यान दें.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)
परिवार से जुड़े ख़र्चे तेज़ी से बढ़ेंगे. तनाव के समय धैर्य से काम लेना होगा. हफ्ते का अंत दिक़्क़त से भरा होने की आशंका है. पेट से संबंधी शिक़ायत हो सकती है. आय के नए रास्ते खुलेंगे.

मिथुन (21 मई से 20 जून)
रचनात्मक दिशा में किया जा प्रयास सफल साबित होगा. इस समय आपको अपने स्वास्थ्य पर ख़ास ध्यान देने की ज़रूरत है. इस के तहत फैटी फूड खाने से परहेज करें. यात्रा से बचें, क्योंकि उसमें देरी होगी या फिर वह निराशा से भरी होगी.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)
आप अपने लव पार्टनर के साथ अच्छा समय बिताएंगे. आपको कई जगह से लोगों का आशीर्वाद मिलेगा. अपने वित्तीय मामलों में सावधानी बरतने की ज़रूरत है, तभी आप अपने काम में सफलता पा सकेंगे. एक साथ दो स्वास्थ्य गतिविधियों को लेकर चिंता में रहेंगे.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)
आपका ज़्यादातर समय परिवार के साथ मौजमस्ती में बीतेगा. अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए मेहनत करेंगे. बाहर जाने का कार्यक्रम बनने की संभावना है. किसी के काम में दख़ल देने से बचें, अन्यथा विवाद पैदा हो सकता है.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)
यात्रा करने से बचें. अगर जाना ज़रूरी हो तो किसी भी तरह के विवाद से दूर रहने की कोशिश करें. व्यवसायिक देरी आपको परेशान करेगी. संतान के संबंध में कोई सुखद समाचार मिल सकता है.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर)
मेडिटेशन और दूसरों के सहयोग से आपके कई ऐसे काम आसानी से संपन्न हो जाएंगे, जो पहले खासे मुश्किल साबित हो रहे थे. वाणी में मधुरता बनाए रखें, अन्यथा विवाद की स्थिति पैदा हो सकती है.

वृश्चिक (21 अक्टूबर से 20 नवंबर)
नया काम शुरू करने से पहले अच्छी तरह सोच–विचार लें, लाभ होगा. शेयर्स और प्रॉपर्टी से अच्छे लाभ की उम्मीद है. पुराने मित्र मिलेंगे. किसी काम में अधीनस्थ कर्मचारी का सहयोग मिल सकता है.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)
व्यापारिक मामलों में जोखिम से बचें, हानि हो सकती है. मेहमानों की आवाजाही बनी रहेगी. दौड़धूप की अधिकता रहेगी. व्यापारिक सौदे लाभदायी रहेंगे. जल्दी धन कमाने के चक्कर में ग़लत जगह पैसा अटक सकता है.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)
कारोबारी यात्रा लाभदायी रहेगी. पारिवारिक समस्या का समाधान होने के आसार हैं. आयात–निर्यात के कारोबार में लाभ के योग हैं. पारिवारिक रिश्तों में मधुरता का एहसास होगा. अपने ज़िद्दी स्वभाव के कारण आप अकेले पड़ सकते हैं.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)
आप लक्ष्य को छोड़ कर अनावश्यक कार्यों में समय बर्बाद करेंगे. दुविधा और अनिर्णय की स्थिति में पड़ जाएंगे. अपनी कमियों को सुधारने का प्रयास करेंगे. पुरानी बीमारी से छुटकारा मिलेगा. अधिकारियों से कहासुनी हो सकती है. करियर के लिए अच्छे प्रस्ताव मिलेंगे.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)
नई योजना में कुछ बदलाव करना पड़ सकता है, लेकिन यह आपके लिए फ़ायदेमंद साबित होगा. मन में तरह–तरह के विचार उठेंगे. उच्च अध्ययन के लिए अनुकूल समय है. योजनाओं को फिर से संभालेंगे. मांगलिक कार्यों में किया जा रहा प्रयास सफल होगा.

पंडित सुदर्शन
feedback@chauthiduniya.com

गद्दी से बेदख़ल किए जाने के बाद आम नागरिक की हैसियत से रह रहे ज्ञानेंद्र जहां कहीं भी जाते हैं, जनता का हुजूम उनके पीछे उमड़ पड़ता है.

नेपाल : राजशाही वापसी की राह पर

रविशंकर प्रसाद साह

मुल्क की राजनीति आज दोराहे पर खड़ी है. राजशाही को ख़त्म हुए दो साल होने वाले हैं, लेकिन नए संविधान का कहीं कोई नामोनिशान नहीं है. राजनीतिक दल अपने व्यक्तिगत स्वार्थों में इस कदर उलझे हैं कि राष्ट्रहित की बातें कहीं पृष्ठभूमि में खो गई हैं. ग़रीबी-बेरोज़गारी से त्रस्त लाचार और बेबस जनता उनकी इन कारगुज़ारियों से इतनी निराश है कि उसे राजशाही के पुराने दिन याद आने लगे हैं.

नेपाल उबल रहा है. राजनीतिक दलों एवं सरकार की हठधर्मिता के चलते जनता का मोहभंग हो रहा है और देश में अकेली पड़ी राजशाही को अपने लिए नई संभावनाएं दिखने लगी हैं. नए संविधान के गठन की समय सीमा नज़दीक आती जा रही है, लेकिन संविधान का कोई नामोनिशान भी अब तक नज़र नहीं आ रहा. देश की संसद अवरुद्ध है. संविधान के निर्माण के लिए चुनी गई संसद में राजनीतिक दल अभी तक नए संविधान के प्रारूप पर भी पूरी तरह एकमत नहीं हो पाए हैं. 22 दलों के गठबंधन वाली माधव कुमार नेपाल की सरकार इतनी लुंज-पुंज है कि देश के कई हिस्सों पर उसका कोई नियंत्रण नहीं है. इन इलाक़ों में माओवादियों का राज चलता है, जिनकी अपनी सेना है, अपना न्यायिक तंत्र है और सबसे बढ़कर अपना अलग एजेंडा है. राजशाही को ख़त्म करने के बाद देश में पैदा हुआ जोश का माहौल अब कहीं नज़र नहीं आता. नज़र आता है तो केवल बंद, हड़ताल, सड़कों पर लाशें और चारों ओर बढ़ती आपराधिक घटनाएं. जनता भ्रमित है. उसे लगता है कि उसे बरगलाया गया है, उसके साथ धोखा हुआ है. क़रीब दो साल पहले यही जनता देश में बदनाम हो चुकी राजशाही को ख़त्म करने के लिए सड़कों पर उतर आई थी, लेकिन आज हालात पूरी तरह बदल चुके हैं.

प्रधानमंत्री माधव कुमार नेपाल

गद्दी से बेदख़ल किए जाने के बाद आम नागरिक की हैसियत से रह रहे ज्ञानेंद्र जहां कहीं भी जाते हैं, जनता का हुजूम उनके पीछे उमड़ पड़ता है. एक बार फिर जनता को राजशाही में ही अपना भविष्य नज़र आने लगा है. उसे लगने लगा है कि यदि उक्त राजनीतिक दल नया संविधान भी नहीं बना सकते तो देश का शासन कैसे चलाएंगे, उनके भविष्य को सुरक्षित कैसे रख पाएंगे. पिछले चुनावों में माओवादियों को क़रीब चालीस प्रतिशत सीटों पर जीत हासिल हुई थी. राजशाही के ख़िलाफ़ चले देशव्यापी अभियान में माओवादियों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया था. उनके साथ देश की अन्य पार्टियां भी थीं. इन पार्टियों ने जनता से तमाम तरह के वायदे किए थे, उसे बेहतर भविष्य के ऐसे सब्जबाग दिखाए गए कि ढेरों उम्मीदें अंगड़ाइयां लेने लगीं. चुनाव के बाद पहले माओवादियों की ही सरकार बनी, लेकिन प्रचंड के नेतृत्व में बनी यह सरकार सत्ता और विपक्षी पार्टी के बीच फ़र्क़ नहीं कर पाई. रही-सही कसर उनके तानाशाही रवैये ने पूरी कर दी. जनसंघर्ष के सहारे राजशाही के ख़िलाफ़ माहौल बनाने में कामयाब रहे माओवादियों की जनता में एक जुझारू छवि बनी थी. सत्ता में आने के बाद भी वे यह नहीं समझ पाए कि अब उनका काम मांग करना नहीं, बल्कि जनता की मांगों को पूरा करना है. अपनी स्वाभाविक आंदोलनकारी छवि से बाहर निकलना माओवादियों के लिए इतना मुश्किल हो गया कि वे जनता तो क्या, ख़ुद अपनी भी उम्मीदों पर खरे नहीं उतर पाए. नतीजा नौ महीने के अंदर ही प्रचंड को इस्तीफ़ा देना पड़ा.

करीब बाइस दलों के गठबंधन से प्रधानमंत्री पद पर पहुंचे माधव कुमार नेपाल की सरकार ने मोर्चा संभाला तो उनके सामने बड़ी चुनौतियां थीं. जनता अभी भी उनकी ओर उम्मीद भरी निगाहों से देख रही थी, क्योंकि माओवादियों के अलावा लगभग हर छोटी-बड़ी पार्टी का समर्थन उन्हें हासिल था. लेकिन, इतने बड़े गठबंधन के आपसी मतभेदों को संभालने में ही नेपाल की सारी ऊर्जा ख़त्म होती रही. आज हालत यह है कि हर पार्टी अपनी डफली-अपना राग अलाप रही है. कई पार्टियां ऐसी हैं, जो सरकार में रहकर भी सरकारी फ़ैसलों पर खुलेआम उंगली उठाती हैं. माओवादी फिर से विद्रोह पर उतारू हैं. उन्हें पता है कि संविधान निर्माण का काम उनके सहयोग के बिना पूरा नहीं हो सकता और यदि हो भी गया, तो वे इसे मानेंगे नहीं. ऐसा नहीं लगता कि किसी को देश की चिंता है. और, जनता की निराशा की यही वजह है. राजनीतिक दलों के इस ग़ैर ज़िम्मेदार और अड़ियल रवैये के चलते सरकार के प्रति उसका मोहभंग होने लगा है, उम्मीदें धराशायी हो चुकी हैं, भविष्य का कोई रास्ता नहीं दिख रहा है. यह नेपाल के लिए अच्छा नहीं है, क्योंकि ऐसी परिस्थितियां राजशाही के फिर से वापस लौटने की पृष्ठभूमि तैयार करती दिख रही हैं.

नेपाल में राजा के पक्ष में बनता यह माहौल पिछले दिनों बार-बार देखने को मिला है. क़रीब एक महीने पहले की बात है. पूर्व राजा ज्ञानेंद्र विक्रम शाह काठमांडू के क़रीब स्थित असन में ऐतिहासिक काली पूजा में शरीक होने आए. हर बारहवें वर्ष आयोजित होने वाले इस समारोह में परंपरागत रूप से राजा को ही मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया जाता रहा है. ज्ञानेंद्र अब राजा नहीं हैं, उनकी हैसियत एक आम नेपाली नागरिक की है, लेकिन जब वह वहां पहुंचे तो लाखों लोगों की भीड़ जमा हो गई और चारों ओर एक ही शोर सुनाई देने लगा, राजशाही वापस लौटे. ऐसा पहली बार नहीं हुआ है. क़रीब तीन महीने पहले पनूती के मेले में भी ऐसा ही हुआ था. ज्ञानेंद्र के आने की ख़बर सुनते ही हज़ारों लोग उनके पीछे चल पड़े. वहां भी वे एक स्वर से यही मांग कर रहे थे, राजा आएं, शांति लाएं. हिंसा और अशांति के माहौल से त्रस्त आम लोगों को लगता है कि प्रजातांत्रिक व्यवस्था में अभिभावक के रूप में राजा की भी भूमिका हो तो राजनीतिक दलों को अपनी ज़िम्मेदारियों का अहसास कराया जा सकता है. नेपाली जनता परंपरागत रूप से राजा को अपने अभिभावक के रूप में देखती रही है. अभिभावक से भी ज़्यादा उन्हें विष्णु का अवतार माना जाता है, जो हर हाल में उनकी भलाई के लिए ही सोचते हैं. दो साल पहले जब राजशाही को समाप्त किया गया था तो जनता की नज़रों में उनकी इज़्ज़त कुछ कम हो गई थी. ज्ञानेंद्र ने 2005 में जब लोकतांत्रिक ढंग से चुनी गई सरकार को बर्खास्त करके सारे अधिकार अपने हाथ में ले लिए थे तो राजनीतिक पार्टियों ने इसे उनके तानाशाही रवैये के रूप में प्रचारित किया था. इसके अलावा तमाम तरह की ख़बरें मीडिया में आईं. राजकुमार पारस को लेकर भी कई तरह की अफवाहें उड़ीं. इन सबसे जनता के मन में यह बात बैठने लगी कि राजशाही भ्रष्ट और सत्तालोलुप हो चुकी है. उसे माओवादियों और अन्य राजनीतिक दलों में नया जोश दिखा, नई उम्मीद नज़र आई, लेकिन आज वे सारी उम्मीदें टूट चुकी हैं. राजनीतिक पार्टियां ख़ारिज होती जा रही हैं और जनता फिर से राजशाही की ओर देखने को मजबूर है. लेकिन क्या वास्तव में ऐसा हो सकता है? क्या नेपाल की राजनीतिक व्यवस्था में राजशाही के लिए दोबारा जगह बन सकती है? कम से कम मौजूदा संविधान के दायरे में तो ऐसा नहीं हो सकता, लेकिन जनता की भावनाओं की ज़्यादा देर तक अनदेखी भी नहीं की जा सकती. सत्ता सुख के लोभ में राजनीतिक पार्टियों ने एक साजिश के तहत राजा को शासन व्यवस्था से दूर कर दिया, लेकिन वे ख़ुद जनता की उम्मीदों पर खरी नहीं उतर पाईं. नेपाल की हालत दिन-प्रतिदिन और भी बदतर होती जा रही है. जनता इन्हीं सब बातों से परेशान है. उसे पुराने दिन याद आ रहे हैं, जब नेपाल को एक शांतिपूर्ण राष्ट्र के रूप में गिना जाता था.

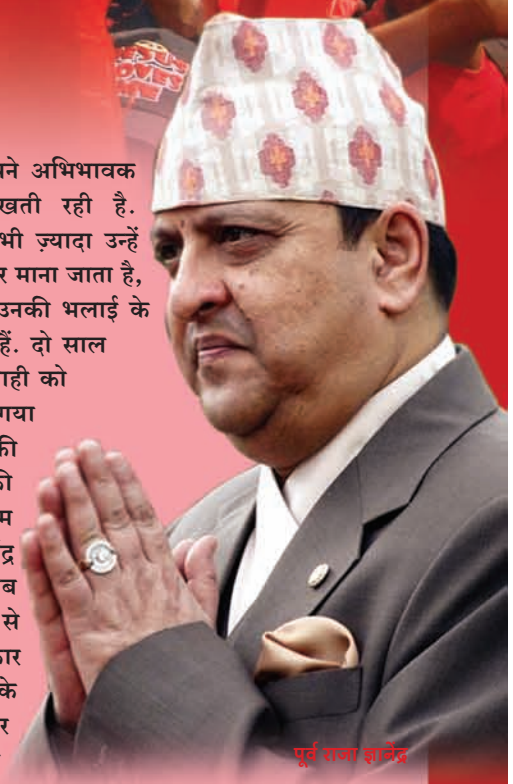

पूर्व राजा ज्ञानेंद्र

पूर्व प्रधानमंत्री पुष्प कमल दहाल प्रचंड

(लेखक नेपाल के राजनीतिक विश्लेषक हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

शिरडी के साई बाबा एक ऐसे संत हैं, जिन्होंने अपना पूरा जीवन दूसरों के दुःख-दर्द को मिटाने में गुज़ार दिया.

साई भक्त परिवार क्यों?

क्या होता है परिवार? परिवार यानी कुछ लोग जिनके साथ हमारा जीवन भर का संबंध होता है. फिर चाहे जीवन भर साथ रहें या नहीं, लेकिन संबंध नहीं टूटते. दुःख-सुख के मौक़ों पर परिवार ही याद आता है. परिवार वह है जो हमें सहारा देता है और ज़रूरत के समय सही सलाह भी. हमारे जीवन में परिवार के हर सदस्य का योगदान होता है. लेकिन बदलते समाज और टूटते परिवारों ने हमें बहुत अकेला और बेसहारा कर दिया. हम अकेले इस जीवन को जीने के लिए तैयार ही नहीं थे. इसीलिए साई भक्त परिवार की स्थापना हुई. शिरडी के साई बाबा एक ऐसे संत है जिन्होंने अपना पूरा जीवन दूसरों के दुख दर्द को मिटाने में गुज़ार दिया. बाबा ने जीवन में दो वाक्यों- श्रद्धा, सबूरी और सबका मालिक एक के ज़रिए हर दुखी आत्मा को गले लगाया और उस दर्द को दूर किया. साई भक्त परिवार आम लोगों को जोड़ता है. धर्म, जाति और देश की सीमाओं को तोड़ता हुआ यह परिवार लगातार आगे बढ़ता जा रहा है. यहां आने वाला हर व्यक्ति किसी अदृश्य शक्ति से खिंचा चला आता और यहां पहुंच कर सुकून का अनुभव करता है. यह परिवार साई बाबा की शिक्षा और उनकी भावनाओं को जन जन तक पहुंचाने का प्रयास करता है. बाबा की प्रेरणा से लिखा उनका साई सच्चरित्र आज भी करोड़ों लोगों के सवालों का जवाब देता है. आप जीवन के किसी भी मुश्किल दौर से गुज़र रहे हैं, चाहे वह मुश्किलें, भविष्य, सेहत, रिश्तों या आर्थिक मामलों से जुड़ी हो. आपको तुरंत सटीक जवाब मिलता है. ज़रूरत सिर्फ़ इस बात की है कि उस समय हमारा नाता साई के साथ जुड़ा हो.

720 तक सोचे गए किसी नं.पर लिखे जवाब को जब आप देखते हैं तो हैरान रह जाते हैं. बाबा के साई सच्चरित्र का वह जवाब आप ही के लिए होता है. ऐसा लगता है जैसे आपकी पुकार कहीं ज़रूर पहुंचती है. एक बार हम बाबा को अपने आसपास या अपने जीवन में होने का अनुभव कर लेते हैं, फिर तो ज़िंदगी आसान हो जाती है. ऐसा महसूस होता है जैसे अपना कोई बड़ा बुजुर्ग है जो अथाह प्रेम करता है. हमारी अंगुली पकड़ कर हमारा मार्ग दर्शन करता है. आज हम ग़लत रास्ते पर चलना नहीं चाहते लेकिन सही रास्तों का अंदाज़ा नहीं है. मूल्यों में आई गिरावट का अहसास हम सबको है लेकिन इस चक्रव्यूह से निकलने का रास्ता नहीं मिल पा रहा है. यह समझना और स्वीकारना बहुत ज़रूरी है कि आज अगर हम आर्थिक तंगी में हैं, सेहत गिर रही है और रिश्ते टूट रहे हैं तो ज़िम्मेदार भी हम ही हैं. परंतु अब चक्रव्यूह इतना सघन है कि कोई रास्ता नज़र नहीं आता. ऐसे में कोई बाहरी ताक़त ही प्रेम के बल पर हमें उठाकर एक बार फिर उन रास्तों पर चलना सिखा सकती है.

साई की ताक़त ही वह ताक़त है जो आपको जागृत करती है. आपको अपने अंदर की शक्ति को पहचानने की दिशा देती है. साई भक्त परिवार इस प्रेम, उल्लास, और उत्सव की ओर बढ़ने का प्रयास है. आप सबका इस परिवार में आमंत्रण है. आप इस परिवार का हिस्सा बनें और जीवन की हर कमी को दूर करने का मार्ग पाएं. साई भक्त परिवार का हिस्सा बनने के लिए कृपया 09999313918 पर एसएमएस करें. ॐ साई राम.

बाबा के जीवन से

शिरडी के साईबाबा जहां अपने भक्तों के लिए सरल और सहज व्यक्ति थे वहीं उनकी बहुत सी बातें लोगों को रहस्यमयी लगती थीं. एक बार शिरडी के आसपास के गांव में हैजा फैला. भयंकर बीमारी चारों तरफ़ फैलने लगी. घर घर में मौत होनी तय थी. शिरडी में भी लोग डरे हुए थे. एक दिन सुबह सुबह लोगों ने देखा, बाबा उठकर चक्की में गेहूं पीस रहे थे और बहुत गुस्से में थे. औरतें दौड़ी दौड़ी आईं और बाबा के हाथ से चक्की का हत्था पकड़ने लगीं. बाबा ने गुस्से में उनका हाथ झटक दिया और फिर से चक्की पीसने लगे. लोग हैरान थे. बाबा तो मांगकर खाना खाते थे. यह आटा किसके लिए पीस रहें हैं, किसी को भी समझ में नहीं आ रहा था. औरतों ने सोचा शायद बाबा उनकी किसी बात पर नाराज़ हो गए हैं. इसलिए अब ख़ुद खाना बनाएंगे. जब गेहूं पूरी तरह पिस गया तो बाबा उठे. कई लोगों ने सोचा शायद बाबा पिसा हुआ उन्हें दें और औरतों ने उसके हिस्से करने शुरू कर दिए. बाबा ने नाराज़गी ज़ाहिर करते हुए सभी औरतों को आटा छूने से मना कर दिया. सारा आटा उठा वह शिरडी की सीमा की ओर चल पड़े. लोग भी उनके पीछे पीछे हो लिए. कुछ बुदबुदाते हुए बाबा ने गांव की सीमा पर आटा डालना शुरू कर दिया. देखते देखते उस आटे से शिरडी की सीमा बंध गई. कुछ देर बाद द्वारकामाई पहुंच कर बाबा शांत हुए. फिर बाबा ने बताया कि शिरडी अब हैजे के प्रकोप से सुरक्षित है. और सच में ऐसा ही हुआ. शिरडी में हैजा पहुंचा ही नहीं. ऐसा था बाबा का प्रेम और बिना कुछ कहे सब कुछ कर देने का भाव. ॐ साई राम.

ऑसिम खेत्रपाल
feedback@chauthiduniya.com

कृष्ण की नगरी में आपका अपना घर!

Giriraj Sai Hills

Sai Vihar Township
Spiritual home... away from home

- Fully Furnished and Spacious Studio Apartments.
- One Bedroom Apartments.
- Two bedroom Apartments.
- Fully Fumished Villas.

STARTING FROM RS. 9.65 LAKHS*

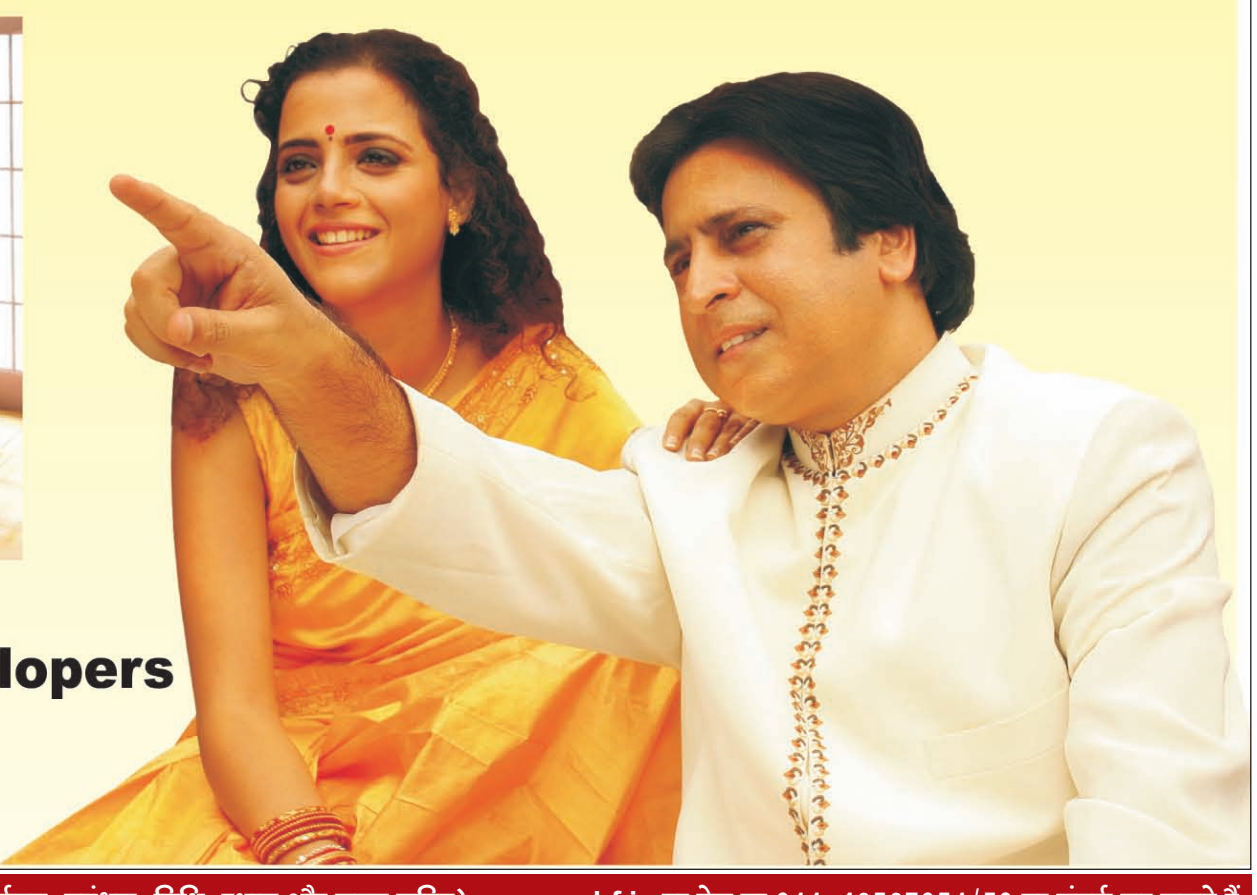

AUM Infrastructure & Developers

Aum Infrastructure & Developers
Tel: 011-46594226 / 46594227
www.girirajsaihills.in

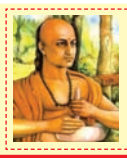

गुरु चाणक्य ने कई सूत्र दिए है. उन्होंने एक जगह लिखा है- विद्या धनमधनानाम. आशय यह कि विद्या अधनों यानी निर्धनों का धन है.

शीला दीक्षित, श्लाका और छीछालेदार

अनंत विजय

हिंदी के वरिष्ठ और बेहद प्रतिष्ठित लेखक कृष्ण बलदेव वैद के अपमान का संगीन इल्ज़ाम झेल रही दिल्ली की हिंदी अकादमी ने आख़िरकार अपना पुरस्कार वितरण समारोह आयोजित कर ही लिया, लेकिन इस बार के समारोह में भव्यता और लोगों की सहभागिता नदारद थी. राजधानी के किसी बड़े ऑडिटोरियम में आयोजित होने वाला अकादमी का यह सालाना समारोह इस बार दिल्ली सचिवालय के एक कमरे में आयोजित हुआ. सब कुछ बेहद सरकारी और गुपचुप तरीक़े से किया गया. हिंदी अकादमी की यह परंपरा रही है कि वह किसी भी कार्यक्रम के लिए दिल्ली के लेखकों-पत्रकारों को आमंत्रित करती है. अकादमी की अपनी एक मेलिंग लिस्ट है, जिन्हें हर कार्यक्रम में आमंत्रित किया जाता है, लेकिन इस बार ऐसा कुछ नहीं हुआ. यहां तक कि अकादमी की गवर्निंग बॉडी के सदस्यों तक को सिर्फ़ कार्ड भेजकर रस्म अदायगी कर ली गई. नतीजा यह हुआ कि जन कार्यक्रम होने के बजाय यह आयोजन सरकारी कार्यक्रम में तब्दील होकर रह गया. वरिष्ठ साहित्यकार एवं हंस के संपादक ने बेहद सटीक टिप्पणी की और कहा कि अगर अकादमी को पुरस्कार वितरण की रस्म अदायगी ही करनी थी तो वह लेखकों को कुरियर से चेक और स्मृति चिन्ह भेज देती. समारोह में मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने हिंदी अकादमी की स्वायत्तता को लेकर बड़ा लंबा-चौड़ा भाषण दिया, लेकिन अकादमी की स्वायत्तता का जिस तरह से गला घोंटा गया, उसके लिए शीला दीक्षित ही ज़िम्मेदार हैं. दरअसल हिंदी अकादमी अब पूरी तरह से सरकार का भोंपू बनकर रह गई है. हिंदी के प्रचार-प्रसार की आड़ में सरकार के मंत्रियों एवं विधायकों को ख़ुश करने और जनता के बीच उनकी छवि बनाने का काम होता है. इसके अलावा बड़े और रसूखदार लोगों की साहित्यिक लिप्सा को भी दिल्ली की हिंदी अकादमी संतुष्ट करती है. इसका एक उदाहरण आपको देते चलें. इसी पुरस्कार वितरण समारोह में हिंदी अकादमी की पत्रिका इंद्रप्रस्थ भारती के एक अंक का लोकार्पण भी किया गया. इस अंक में एक बड़े बिल्डर को ख़ुश करने के लिए उनकी कविता अंत समय में हिंदी के एक वरिष्ठ कवि की कविता को हटाकर प्रमुखता से छाप दी गई. इस खेल का अंदाज़ तो पाठक स्वयं लगा सकते हैं कि बिल्डर की कविता को अंत समय में क्यों शामिल किया गया. अगर कविता उतनी ही अच्छी थी तो क्या अगले अंक का इंतज़ार नहीं किया जा सकता था. अकादमी में जिस तरह के खेल चल रहे हैं, उन्हें देखते हुए यह कहने में मुझे तनिक भी संकोच नहीं कि ये सरकार की छवि को बिगाड़ने का काम ज़्यादा कर रहे हैं, बनाने का कम.

दरअसल इस पूरे विवाद को समझने के लिए हमें थोड़ा पीछे जाना होगा. वर्ष 2008-09 के लिए अकादमी की कार्यकारिणी ने हिंदी के वरिष्ठ एवं प्रतिष्ठित लेखक कृष्ण बलदेव वैद को श्लाका सम्मान देने की संस्तुति की थी. उसके बाद अकादमी की अध्यक्ष की हैसियत से दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने तत्कालीन कार्यकारिणी के फैसले पर मुहर लगा दी थी, लेकिन बाद के दिनों में हिंदी अकादमी में प्रशासनिक अराजकता की वजह से उस वर्ष के सम्मान नहीं दिए जा सके. अब जब अकादमी ने वर्ष 2009-10 के पुरस्कारों के साथ 2008-09 के पुरस्कारों का ऐलान किया तो 2008-09 के श्लाका सम्मान के लिए किसी का नाम घोषित नहीं किया गया. सूची से कृष्ण बलदेव वैद का नाम ग़ायब था. बताया जा रहा है कि एक अनाम से कांग्रेसी नेता ने अकादमी की अध्यक्ष एवं दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित को पत्र लिखकर कृष्ण बलदेव वैद को श्लाका सम्मान न देने का अनुरोध किया था. कांग्रेसी नेता का आरोप है कि वैद के उपन्यास नसरीन में कई जगह अश्लील शब्दों और स्थितियों का चित्रण किया गया है. कांग्रेसी नेता की आपत्ति को तरजीह देते हुए शीला दीक्षित की अध्यक्षता वाली कमेटी ने वैद जी का नाम रोक दिया.

हिंदी के लेखक सरकारी लाभ का चाहे जितना विरोध करें, लेकिन वे इसका लोभ संवरण नहीं कर पाते हैं. छोटे-मोटे फ़ायदे के लिए बड़े सिद्धांतों को तिलांजलि देने में इन्हें वक़्त नहीं लगता. वैद जी का अपमान पूरे साहित्य जगत का अपमान है और हिंदी समाज को पूरी ताक़त के साथ इसका विरोध करना चाहिए था. अफसोस की बात है कि हिंदी के लेखक पुरजोर तरीक़े से शीला दीक्षित सरकार का विरोध नहीं कर सके और सरकार ने अपनी मनमानी कर ली.

कृष्ण बलदेव वैद को श्लाका सम्मान न दिए जाने पर हिंदी साहित्य में विरोध के स्वर उठने लगे थे. हिंदी के आलोचक पुरुषोत्तम अग्रवाल की चिट्ठी के बाद 2009-10 के श्लाका कवि केदारनाथ सिंह ने भी पुरस्कार लेने से इंकार कर दिया. केदार जी के इस क़दम के बाद तो जैसे पुरस्कार ठुकराने वालों की लाइन लग गई. कवि-पत्रकार विमल कुमार, कवि पंकज सिंह, कवयित्री एवं स्वर्गीय निर्मल वर्मा की पत्नी गगन गिल एवं रेखा जैन ने भी हिंदी अकादमी द्वारा घोषित पुरस्कार लेने से मना कर दिया है. हैरानी की बात यह है कि पहले सार्वजनिक तौर पर विरोध जताने के बाद भी गगन न केवल समारोह में पहुंचीं, बल्कि उन्होंने मंच पर शीला दीक्षित के हाथों पुरस्कार भी ग्रहण किया. तमाम हिंदी दैनिकों ने गगन गिल की तस्वीर को प्रमुखता से छापा. गगन गिल का वहां पहुंचना हैरानी की बात थी, क्योंकि उन्हें अशोक वाजपेयी खेमे का माना जाता है और वैद जी भी उसी के स्कूल ऑफ राइटर्स हैं. गगन के अलावा असगर वजाहत भी पुरस्कार लेने पहुंचे. असगर वजाहत ने शुरू से ही अपना स्टैंड साफ रखा था, इस वजह से उनकी मौजूदगी को लेकर किसी को हैरानी नहीं हुई.

इस पुरस्कार वितरण समारोह के आयोजन से कुछ बेहद अहम और बड़े सवाल हिंदी साहित्य और साहित्यकारों के सामने खड़े हो गए हैं. हिंदी लेखकों का ढुलमुल चरित्र एक बार फिर से उजागर हुआ है. अकादमी के कर्ताधर्ताओं को यह मालूम है कि हिंदी के लेखकों का विरोध फौरी होता है और वे ज़्यादा समय तक अपने स्टैंड पर कायम नहीं रह सकते हैं. इस बात को ज़्यादा दिन नहीं बीते हैं, जब अशोक चक्रधर को हिंदी अकादमी का उपाध्यक्ष बनाने पर कई वरिष्ठ लेखकों ने घोर आपत्ति जताई थी, अशोक चक्रधर को मसखरा और मंचीय कवि कहकर खिल्ली उड़ाई थी, लेकिन चंद दिनों बाद वही साहित्यकार अशोक चक्रधर के सानिध्य में मंचासीन नज़र आने लगे थे. चाहे वह राजेंद्र यादव हों या फिर नामवर सिंह या फिर कोई और वरिष्ठ लेखक. वजह यह भी थी कि अशोक चक्रधर सत्ता प्रतिष्ठान के क़रीब हैं, हिंदी अकादमी के उपाध्यक्ष के अलावा वह केंद्रीय हिंदी संस्थान के भी कर्ताधर्ता हैं. हिंदी के लेखक सरकारी लाभ का चाहे जितना विरोध करें, लेकिन वे इसका लोभ संवरण नहीं कर पाते हैं. छोटे-मोटे फ़ायदे के लिए बड़े सिद्धांतों को तिलांजलि देने में इन्हें वक़्त नहीं लगता. वैद जी का अपमान पूरे साहित्य जगत का अपमान है और हिंदी समाज को पूरी ताक़त के साथ इसका विरोध करना चाहिए था. अफसोस की बात है कि हिंदी के लेखक पुरजोर तरीक़े से शीला दीक्षित सरकार का विरोध नहीं कर सके और सरकार ने अपनी मनमानी कर ली, लेकिन इससे दिल्ली सरकार की जमकर किरकिरी हुई. आज नहीं तो कल, शीला दीक्षित को इस बात का एहसास होगा, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होगी.

(लेखक आईबीएन-7 से जुड़े हैं)

feedback@chauthiduniya.com

पुस्तक अंश मुन्नी मोबाइल

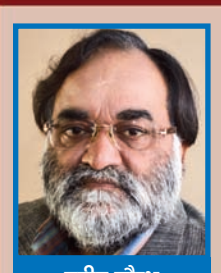

प्रदीप सौरभ

अगली सुबह! आनंद भारती के लिए नई सुबह थी. सब अपना- अपना सा लग रहा था उन्हें. अंदर-अंदर ख़ुश थे. मियां मिर्ची की अहमदाबाद के लिए विदाई भी देनी थी. गाड़ी उठाकर पहले वह नई दिल्ली रेलवे स्टेशन गए. मियां मिर्ची को छोड़ना उनके लिए भावुक क्षण था. जाने वाले को तो जाना था. मियां मिर्ची को छोड़कर वह सीधा पत्रकारपुरम पहुंचे. फ्लैट का मुआयना किया. आसपड़ोस में काम करने वाले ठेकेदार से बात की. कहां क्या होना है, उसे बताया. एक लाख रुपये में ठेका तय हुआ. समय दिया पच्चीस दिन.

दिल्ली ऑफिस में ज्वाइनिंग भी करनी थी. सो वह सीधे दिल्ली रवाना हो गए. ऑफिस में सबने उनका स्वागत किया. हर ज़ुबान पर गुजरात था. सब उनके मुंह से वहां का हालचाल जानना चाहते थे. जलती लाशों के दृश्यों से वह अपना पीछा छुड़ाना चाहते थे, लेकिन उन्हें उसे बार-बार दोहराना पड़ा. यह सिलसिला ऑफिस से लेकर प्रेस क्लब तक कई दिनों तक चलता रहा. आनंद भारती की ज़िंदगी नए ढर्रे पर चल रही थी. रोज जल्दी उठकर फ्लैट में काम की प्रगति को देखना और फिर ऑफिस जाना. ऑफिस का काम भी नया था. अख़बार के एक नए संस्करण की इंचार्जी का काम मिला था उन्हें. टीम नौसिखियों की थी. उनके साथ ख़ूब जूझना पड़ रहा था. वह इस कोशिश में थे कि दिल्ली से जुड़े इलाक़ों से निकलने वाले संस्करणों में उनका नोएडा संस्करण तीन माह में नंबर एक हो जाए. यही उनकी ख़ास बात थी. काम कैसा भी हो, वह उसे चुनौती की तरह लेते थे.

फ्लैट सजकर चमचम हो रहा था. गृह प्रवेश तय हो गया. छोटी- मोटी पार्टी की. कुछ ख़ास दोस्तों को बुलाया. जश्न हुआ और अपनी छत के नीचे सोने का दिन आ गया. इसी के साथ एक बड़ी समस्या थी आनंद भारती के सामने. घर तो हो गया था, घर को संभालने वाला कोई नहीं था. न सफाई करने वाला और न ही कपड़े-लत्ते धोने वाला. खाना भी एक समस्या थी. सफाई के लिए पड़ोस में काम करने वाली एक महिला को उन्होंने रख लिया. उसका नाम पुष्पा था. बड़े नखरे के बाद वह सफाई के लिए मानी थी. कपड़े धोने से उसने साफ मना कर दिया था. पैसे का लालच देने पर भी वह नहीं मानी. बाद में

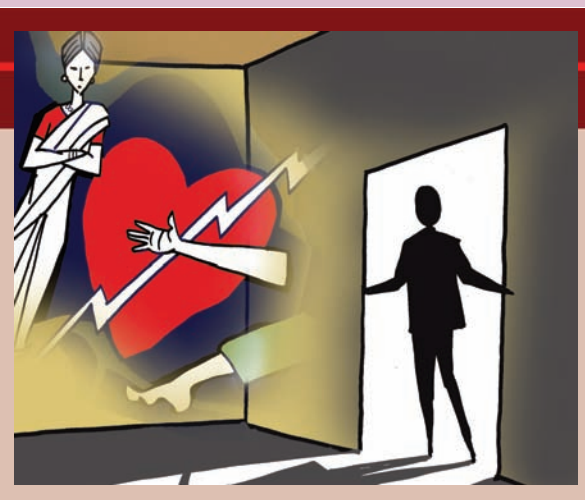

उन्हें पता लगा कि बर्तन, घर की सफाई और कपड़े के लिए इस इलाक़े में अलग-अलग काम वाली मिलती हैं. पूरा पैकेज कोई नहीं देता. पुष्पा से ही उन्होंने किसी कपड़े धोने वाली का इंतज़ाम करने के लिए कहा. वह एक दिन कपड़े धोने वाली को ले आई. उसका नाम रेखा था.

काम वाली तो पत्रकारपुरम में बहुत थीं, लेकिन छड़े आदमी के घर में काम के लिए वे तैयार नहीं होती थीं.कभी-कभी आनंद भारती खाना ख़ुद बनाते. बाहर का खाना उन्हें अच्छा

गतांक से आगे

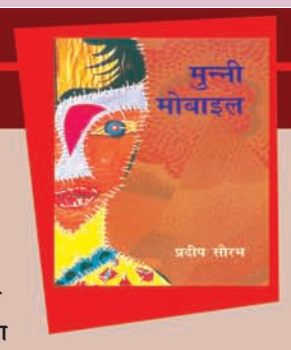

नहीं लगता था. खाना बनाने में उन्हें कोई कष्ट नहीं था. वह उनके शौक का हिस्सा था. तरह-तरह के व्यंजन बनाना उनके शगल का हिस्सा था. यही नहीं, बनाकर दूसरों को खिलाना उन्हें और ज़्यादा पसंद था. लेकिन बर्तन धोने में उन्हें आलस्य होता था. खाना बनाना और फिर बर्तन साफ करना उनके लिए बहुत भारी था. उस दिन की बात है कि वह अपनी कार निकाल रहे थे. तभी उन्हें एक काम करने वाली महिला दिखी. अचानक ही वह उससे पूछ बैठे कि घर में बर्तन साफ करोगी. उसने कहा, अभी जल्दी में हूं. कल सुबह आकर बात करूंगी. आप अपना फ्लैट नंबर बता दीजिए.

334, उन्होंने नंबर बता दिया. उनकी आंखों में चमक उभर आई थी. उन्हें लग रहा था कि अब बर्तन साफ करने वाली भी मिल जाएगी.

अगले अंक में जारी...

सफलता के लिए कार्यकुशल होना बहुत ज़रूरी

जीवन में सफल होने के लिए यह बेहद ज़रूरी है कि इंसान कार्यकुशल हो. जो जितना कार्यकुशल होता है, वह उतना ही सफल होता है. यही वजह है कि कोई व्यक्ति कम श्रम करके भी ज़्यादा सफल होता है और कोई अथक परिश्रम के बाद भी उतना सफल नहीं हो पाता, जितना उसे होना चाहिए. इससे कार्यकुशलता का महत्व साफ है. जीवन में अगर थोड़ी सी सावधानी और सजगता हो तो इंसान अपने अंदर यह क्षमता विकसित कर सकता है. कार्यकुशलता की अहमियत को समझते हुए आचार्य चाणक्य ने कई सूत्र दिए हैं. उनमें से एक है-पूर्वं निश्चित्य पश्चात कार्यमारभेत. मतलब यह कि पहले निश्चय करें, फिर कार्य आरंभ करें.

आचार्य चाणक्य की यह बात हर क्षेत्र में समान रूप से लागू होती है. कोई चाहे किसी भी क्षेत्र में काम कर रहा हो, लेकिन अगर उसने अपने कार्य की शुरुआत ग़लत वक़्त में की है तो उसे कामयाबी से दूर ही रहना पड़ता है. यानी जो व्यक्ति अपने कार्य और उसके मक़सद को लेकर उसे शुरू करने से पहले स्पष्ट या निश्चित नहीं रहता है, उसके सफल होने की संभावना घट जाती है. इसलिए कामयाबी की चाह रखने वालों के लिए इस बात का बड़ा महत्व है कि वे कार्य शुरू करने से पहले यह विचार कर लें कि उस कार्य को कैसे पूरा करेंगे. उन्हें इस बात का भी विचार कर लेना चाहिए कि इस कार्य को करने से क्या और कितना लाभ होगा. जिस मक़सद के साथ वे कार्य की शुरुआत कर रहे हैं, वह पूरा भी हो पाएगा या नहीं. इस कार्य को पूरा करने में कितना समय लगेगा और इससे किसी को कोई नुक़सान तो नहीं होगा. अगर इन बुनियादी सवालों पर विचार करके कार्य की शुरुआत की जाए, तब तो सफलता मिल पाती है. ऐसा न करने पर वह कार्य जी का जंजाल बन जाता है और फिर उसमें कामयाबी मिलना तो दूर, तरह-तरह की परेशानियां पैदा होती हैं और इंसान उसमें उलझता ही चला जाता है. जिस इंसान के पास अपने कार्यक्षेत्र से संबंधित जितना ज्ञान होता है, उसके लिए अपने कार्यों को अंजाम दे पाना उतना ही सहज हो जाता है. ज़ाहिर है, वह कार्यों को बेहतर तरीक़े से अंजाम देता है और क़दम दर क़दम सफलता हासिल करता चला जाता है. इसलिए ज्ञान हासिल करने को लेकर हर इंसान को गंभीर होना चाहिए, क्योंकि किसी भी क्षेत्र में सफलता हासिल करने के लिए यह एक प्राथमिक शर्त है.

जब आपके पास ज्ञान ही नहीं होगा, तो ज़ाहिर है कि आप अपने क्षेत्र के कार्यों को सही तरह से अंजाम नहीं दे पाएंगे. इसी बात को समझते हुए मैनेजमेंट गुरु चाणक्य ने कई सूत्र दिए है. उन्होंने एक जगह लिखा है- विद्या धनमधनानाम. आशय यह कि विद्या अधनों यानी निर्धनों का धन है. यह सूत्र कितना अहम है, इसे चाणक्य के जीवन से भी समझा जा सकता है. उनके पास बहुत ज़्यादा धन नहीं था. वह एक बेहद सामान्य परिवार में पैदा हुए थे. लेकिन उनकी विद्या ने पूरी दुनिया में उनका लोहा मनवाया. ऐसे उदाहरणों से देश का इतिहास भरा पड़ा है. सामान्य परिवार में पैदा होने और बेहद सामान्य परिवेश में पलने-बढ़ने वाले लोग अपनी विद्या यानी ज्ञान के बूते पर बेहद सफल रहे हैं. ऐसे उदाहरण आपके आसपड़ोस में बहुतेरे मिल जाएंगे. अहम बात यह है कि इससे सबक लेना चाहिए. धन तो नश्वर चीज़ है. आज है, संभव है कि कल न रहे. बहुत बड़े-बड़े धनी समय की मार को बर्दाश्त नहीं कर पाते और अपना धन गंवा बैठते हैं. कहा भी जाता है कि धन किसी का नहीं होता. धन का स्वभाव ही चंचल होता है. इसलिए धन की चिंता ज़्यादा न करते हुए विद्या यानी ज्ञान अर्जित करने पर अधिक जोर देना चाहिए. ज्ञान एक ऐसी चीज है, जो बीतते वक़्त के साथ नष्ट नहीं होता और न ही इसे कोई चुरा सकता है, इसलिए कामयाबी पाने की इच्छा रखने वालों के लिए यह बेहद ज़रूरी है कि वे ज़्यादा से ज़्यादा उपयोगी ज्ञान हासिल करने का प्रयास करते रहें. कहा भी गया कि ज्ञान कभी बेकार नहीं जाता. जब हर व्यक्ति साथ छोड़ देता है, तब अपना ज्ञान ही काम आता है. अपने ज्ञान एवं हुनर के बूते व्यक्ति किसी भी देश और काल में कामयाबी का परचम लहरा सकता है. इसलिए हर पल कुछ नया सीखने के लिए लालायित रहना चाहिए. यह एक सफल व्यक्ति की पहचान होती है.

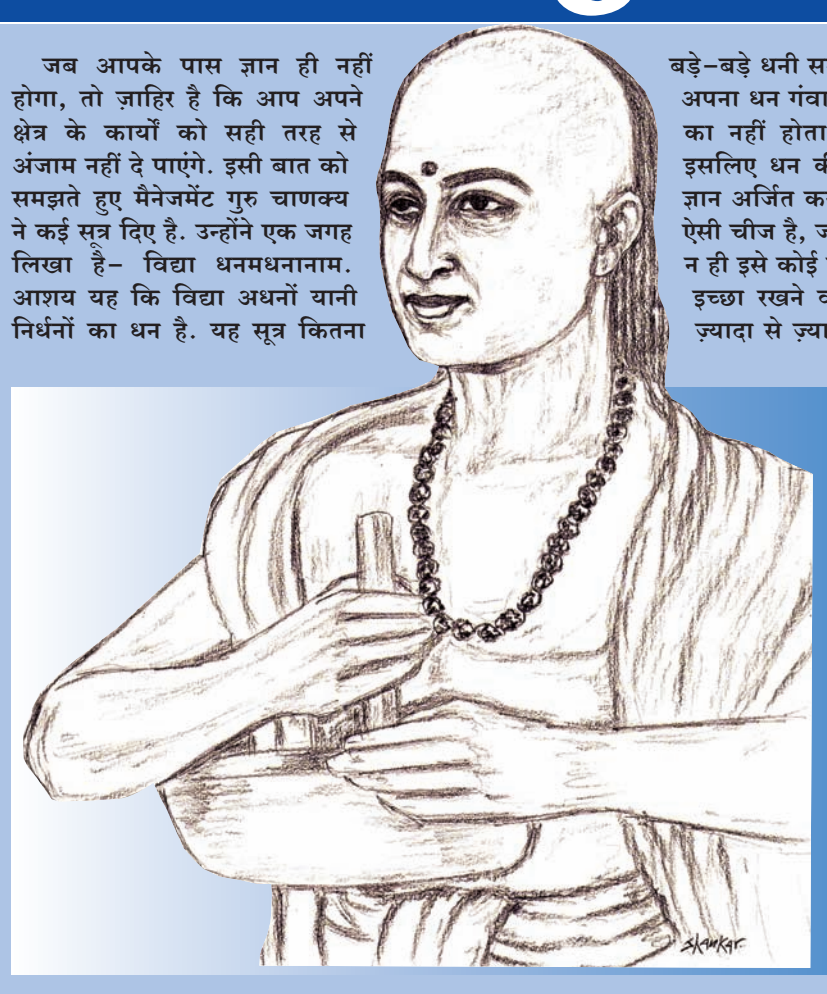

जब आपके पास ज्ञान ही नहीं होगा तो ज़ाहिर है कि आप अपने क्षेत्र के कार्यों को सही तरह से अंजाम नहीं दे पाएंगे. इसी बात को समझते हुए मैनेजमेंट गुरु चाणक्य ने कई सूत्र दिए है.

हां, इस बात का विशेष तौर पर ख्याल रखना चाहिए कि कभी भी अपने ज्ञान का घमंड ख़ुद के अंदर न आए. ऐसा होना बेहद ख़तरनाक है और इंसान के सारे किए-धरे को मिट्टी में मिला देता है. इस बात को एक उदाहरण के ज़रिए समझना ज़्यादा आसान और व्यवहारिक होगा. एक युवा देश-विदेश का भ्रमण करके वहां के ग्रंथों का ज्ञान लेकर जब अपने देश लौटा तो सबके पास जाकर इस बात की शेखी बघारने लगा कि उसके समान ज्ञानी एवं विद्वान दूसरा कोई है ही नहीं. उसके पास जो भी व्यक्ति जाता, वह उससे प्रश्न करता कि क्या उसने उससे बढ़कर कोई विद्वान देखा है? बात भगवान बुद्ध के कानों में भी जा पहुंची. वह ब्राह्मण वेश धारण करके उसके पास गए. उस युवा ने उनसे पूछा, तुम कौन हो? अपनी देह और मन पर जिसका पूर्ण अधिकार है, मैं एक ऐसा तुच्छ मनुष्य हूं. बुद्धदेव ने जवाब दिया. वह अहंकारी बोला, सही तरह से स्पष्ट करो. मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आया.

इस पर बुद्धदेव बोले, जिस तरह कुम्हार घड़े बनाता है, नाविक नौकाएं चलाता है, धनुर्धर बाण चलाता है, गायक गीत गाता है, वादक वाद्य बजाता है और विद्वान वाद-विवाद में भाग लेता है, उसी तरह ज्ञानी इंसान ख़ुद पर ही शासन करता है. उस युवा ने सवाल किया, ज्ञानी पुरुष भला स्वयं पर शासन कैसे करता है? इस पर भगवान बुद्ध ने कहा, लोगों द्वारा स्तुति-सुमनों की वर्षा किए जाने अथवा निंदा के अंगार बरसाने पर भी ज्ञानी पुरुष का मन शांत ही रहता है. उसका मन सदाचार, दया और विश्व प्रेम पर ही केंद्रित रहता है. अतः प्रशंसा या निंदा का उस पर कोई असर नहीं पड़ता. यही वजह है कि उसके चित्तसागर में शांति की धारा बहती रहती है.

भगवान बुद्ध की बात सुनकर जब उस युवा ने अपने बारे में सोचा तो उसे आत्मग्लानि हुई. वह बुद्धदेव के चरणों में गिर पड़ा और बोला, स्वामी, अब तक मैं भूल में था. मैं स्वयं को ही ज्ञानी समझता था, लेकिन आज मैंने जाना कि मुझे आपसे बहुत कुछ सीखना है. भगवान बुद्ध ने कहा, हां, ज्ञान का प्रथम पाठ आज ही तुम्हारी समझ में आया है बंधु. और, वह है नम्रता. तुम मेरे साथ आश्रम चलो और आगे का पाठ वहीं ग्रहण करना. इस प्रेरक घटना से साफ है कि कभी भी अपने अंदर ज्ञान का अभिमान नहीं पालना चाहिए. ऐसा करना बेहद ख़तरनाक है. इससे भी बड़ी बात यह है कि जब अपने ज्ञान के खोखलेपन का पता चले तो किसी से भी कुछ सीखने में हिचकिचाना नहीं चाहिए, चाहे वह कोई भी हो. क्योंकि, ज्ञान कोई ऐसी चीज़ नहीं है, जिसे कोई छीन सके या फिर कोई उसे आपके पास से चुरा ले.

हिमांशु शेखर
feedback@chauthiduniya.com

ओजोन स्किन केयर उत्पाद प्राकृतिक स्रोतों से निकाले गए हैं, जो विषैले तत्वों एवं भारी कणों से मुक्त हैं.

घटिया क्वालिटी के मोबाइल से बचें

पुरानी कहावत है, क्वालिटी नेवर कम्स चीप. यानी सस्ते में अच्छी चीज़ें नहीं मिलती हैं. अच्छा खाना, अच्छे कपड़े और अच्छी ज्वेलरी पाने के लिए अच्छी क़ीमत अदा करनी पड़ती है. ठीक ऐसे ही जब तकनीकी चीज़ों की क्वालिटी मेंटेन नहीं की जाती है तो उसके हानिकारक परिणाम देखने को मिलते हैं. तकनीक जहां ज़िंदगी को सुलभ बनाने का काम करती है, वहीं इसके हानिकारक प्रभाव भी देखे गए हैं. मोबाइल फोन संचार का सुलभ माध्यम है. इन दिनों बाज़ार में मोबाइल कंपनियों की बाढ़ आ गई है. जब से सरकार ने क्वालिटी डिफेक्ट के मद्देनज़र चाइनीज़ सेलफोन के इस्तेमाल पर प्रतिबंध लगा दिया है, तबसे रजिस्टर्ड कंपनियों ने चोरबाज़ारी का धंधा अपना लिया है. कम दाम के चाइनीज़ मोबाइल फोन की लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए इन कंपनियों ने कम दामों पर मोबाइल फोन की भरमार कर दी है. बेहतरीन फीचर्स से लैस उक्त सस्ते मोबाइल लोगों को आकर्षित करते हैं, लेकिन सस्ते फोन की क्वालिटी की पुष्टि कंपनी न ख़ुद करती है और न लैब से कराती है. आपको याद होगा, कुछ दिनों पहले एक प्रसिद्ध मोबाइल फोन कंपनी ने दो–चार शिक़ायतें मिलते ही अपनी एक सीरीज़ की बैट्रियां बाज़ार से वापस उठवा ली थीं. यह है अच्छी कंपनी के भरोसे का फ़ायदा. लेकिन, आए दिन बाज़ार में आती मोबाइल फोन कंपनियों के मोबाइल फोन क्वालिटी की कोई गारंटी नहीं है. चाइनीज़ मोबाइल सेटों और नई छोटी–मोटी कंपनियों की कई शिक़ायतें आ चुकी हैं, लेकिन वे उन पर कोई ध्यान नहीं दे रहे हैं. इन कंपनियों के मोबाइल फोन बेहद कम क़ीमत पर आकर्षक फीचर्स मसलन म्यूज़िक, कैमरा, मेमोरी, ब्लूटुथ आदि के साथ उपलब्ध हैं, इसलिए उनकी लोकप्रियता दिनोंदिन बढ़ती जा रही है, लेकिन ग्राहकों को इस बात का ज़रा भी इल्म नहीं है कि इससे उनके स्वास्थ्य को भारी नुक़सान झेलना पड़ सकता है. महंगा रोए एक बार, सस्ता रोए बार–बार वाली कहावत भी आप बख़ूबी जानते होंगे. सस्ते मोबाइल फोन अपनी क़ीमत आपके स्वास्थ्य से वसूलते हैं. दिल्ली मेडिकल एसोसिएशन के डा. अनिल बंसल बताते हैं कि अच्छी क्वालिटी के फोन में रेडिएशन यानी हानिकारक किरणें इस तरह से निकलती हैं, जिससे शरीर को नुक़सान न के बराबर होता है. लेकिन निम्न क्वालिटी के मोबाइल फोन में रेडिएशन ख़तरनाक तरीक़े से निकलता है, जिससे शरीर को काफी नुक़सान पहुंचता है. इसके अलावा इनमें आवाज़ भी सही नहीं आती है, जिससे आपको बार–बार जोर–जोर से बोलना पड़ता है, यह भी नुक़सानदायक है. मोबाइल हमारी जीवनशैली का एक ज़रूरी अंग है. लेकिन, आवाज़ ख़राब होने की वजह से जब आप बात करते हैं तो संचार सही ढंग से नहीं हो पाता है. दिल्ली स्थित बतरा अस्पताल के डॉ. राहुल चंदोक कहते हैं कि मोबाइल आधुनिक जीवनशैली का ऐसा हिस्सा है जिसमें उपभोक्ता को कई बार व्यवहारिक तौर पर परेशानी होती है उन्हें कई बार ऐसा लगता है कि उनका फोन बज रहा है या उन्होंने कॉल मिस किया है. ऐसे में जब संचार ख़राब हो तो यह परेशानी काफी हद तक बढ़ जाती है. इससे दिमाग़ में तनाव पैदा होने लगता है. और जब स्वभाव में तनाव घर कर जाता है, तो उसके दूसरे डिसऑर्डर होते हैं. घटिया क्वालिटी के मोबाइल फोन से कुछ देर तक लगातार बात करने से कनपटी का हिस्सा गर्म हो जाता है, जिससे हड्डियों, मांसपेशियों और श्रवण शक्ति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है. यही नहीं, सिरदर्द और कान संबंधी अन्य परेशानियां भी हो सकती हैं.

इसके अलावा नेटवर्क न मिलना एक आम समस्या है. निम्न क्वालिटी के फोन सिग्नल पकड़ने में भी दिक्कत करते हैं. ऐसे में आवाज़ सही नहीं मिलती और कभी–कभी क्रॉस कनेक्शन या रॉन्ग नंबर लग जाता है. विश्व में हर जगह तकनीक का इस्तेमाल वातावरण के हिसाब से किया जाता है. जैसे अमेरिका ठंडा देश है, वहां मोटोरोला कंपनी के मोबाइल फोन ज़्यादा स्वीकार्य हैं क्योंकि वहां के वातावरण के हिसाब से उसके सेट उपयुक्त हैं. इसी तरह नोकिया एवं सैमसंग आदि के मोबाइल फोन भारत के वातावरण के अनुकूल हैं. कई बार बारिश या ज़्यादा धूप होने की वजह से इस तरह के फोन के फटने की घटनाएं हो चुकी हैं. हाल ही में चंडीगढ़ में एक महिला ने बारिश के दौरान फोन चार्जिंग पर लगाकर छोड़ दिया. इसी बीच अचानक बिजली कड़की और फोन ब्लास्ट हो गया. तकनीकी सिस्टम बेहतर न होने की वजह से वह अचानक कड़की बिजली झेल नहीं पाया. इसलिए बढ़िया और भरोसेमंद कंपनियों के फोन ख़रीदें और अपना जीवन सुरक्षित रखें. बड़ी कंपनियों ने भी कम दामों के फोन बाज़ार में उतारे हैं, जिनमें मनोरंजक फीचर्स कम होते हैं, पर तकनीकी तौर पर वे बेहतर हैं.

रीतिका सोनाली
ritika@chauthiduniya.com

परिवहन को सस्ता और सुलभ बनाने के लिए बजाज ऑटो मोबाइल कंपनी ने ऑटो रिक्शा के दो नए मॉडल लांच किए हैं.

सवारी के सस्ते रूप

महंगाई के इस दौर में लोगों का ध्यान सस्ती चीज़ों की ओर जा रहा है. खाने, पहनने और इस्तेमाल की हर चीज़ में लोग पैसे की बचत के बारे में सोच रहे हैं. कुछ इसी तरह परिवहन को सस्ता और सुलभ बनाने के लिए बजाज ऑटो मोबाइल कंपनी ने ऑटो रिक्शा के दो नए मॉडल लांच किए हैं. दोनों मॉडल आरई 205-डी एवं आरई 205-एम सीएनजी और एलपीजी इंजन में उपलब्ध हैं, जिससे दोनों काफी किफ़ायती साबित होंगे और इनकी परफॉर्मेंस भी अच्छी रहेगी. इन मॉडलों में बीएस-3 फीचर्स लगे हैं, जो इको फ्रेंडली यानी वातावरण के अनुकूल हैं. इसके 200 सीसी इंजन में मौजूद ऑयल कूलर वाहन की उम्र बढ़ाता है. आरई 205-डी में दो विभाजित फ्रंट सस्पेंशन, दो हैलोजन हेडलैंप, दो शॉक ऑब्जर्वर और कंफर्टेबल ड्राइवर सीट है. यह मॉडल सीएनजी और एलपीजी इंजन में उपलब्ध है. इसकी वारंटी एक साल या फिर 40,000 किलोमीटर है. कंपनी ने आरई 205-डी की क़ीमत 1,27,300 और आरई 205-एम की क़ीमत 1,36,840 रुपये रखी है. आरई 205-एम 40 किलोमीटर प्रति लीटर का माइलेज देता है. इसमें मौजूद दो हेडलाइट एवं सिंगल विंड स्क्रीन पावरफुल हैलोजन हेडलैंप देर रात और अंधेरी सड़कों पर ऑटो चलाने में सहायक हैं. इसमें भी एलपीजी और सीएनजी दोनों इंजन लगाए जा सकते हैं. कंपनी के कमर्शियल वाहन विभाग के सीईओ आर सी माहेश्वरी ने कहा कि ऑटो की नई आरई रेंज बेहतर ख़ूबियों से लैस और भरोसेमंद सवारी है. कंपनी ने कमर्शियल वाहन के उत्पादन के क्षेत्र में अधिक से अधिक ध्यान देने की कोशिश की है. कंपनी पर्यावरण के अनुकूल वाहन बनाने के लिए भी वचनबद्ध है.

कमाल है नेटबुक

माइक्रो स्टार इंटरनेशनल (एमएसआई) ने अपनी नेटबुक सीरीज़ में नवीनतम हाई फैशन वाले संस्करण एमएसआई विंड यू-160 के भारत में उपलब्ध होने की घोषणा की है. अल्ट्रालाइट यू-160 का वजन बैट्री समेत एक किलोग्राम से कम है और इसे एक डिज़ाइन आइकन के रूप में मान्यता मिली है. हाल ही में इसके ग्लोबल लांच के मौक़े पर जर्मनी में इसे इनोवेशन फाउंडेशन डिज़ाइन अवार्ड भी मिला है. एमएसआई का नया नेटबुक इंटेल के पाइन ट्रायल प्लेटफॉर्म पर आधारित है और इसमें बेहद एकीकृत एन-450 एम एटम प्रोसेसर है. इसकी बैट्री 15 घंटे तक चलती है. यू-160 देखने में आकर्षक है, साथ ही स्लिम और हल्के डिज़ाइन वाला है. इसमें एक इंच से कम चौड़ाई वाले विंड यू-160 के बाहरी शेल पर एमएसआई की अनूठी कलर फ़िल्म प्रिंट टेक्नोलॉजी की परत है. इसमें दो रंग फैंसी गोल्ड और जेट ब्लैक हैं. यूजर्स का हाथ चेसिस के जिस हिस्से पर टिकता है, उस पर खरोंचरोधी, ज़्यादा चलने वाली कलर फ़िल्म की परत चढ़ी हुई है. यू-160 में नवीनतम रॉड टाइप स्क्रीन हिंज डिज़ाइन का उपयोग किया गया है और पावर स्विच हिंज के अंत में है. पोर्टेबिलिटी के बावजूद बिजली की बचत करने वाला विंड यू-160 का 10 इंच का लेड डिसप्ले सिर्फ़ 8 मिली सेकेंड के रिएक्शन टाइम का दावा करता है. यह किसी भी अन्य नेटबुक के मुक़ाबले तेज़ है. इसके अनूठे चिकलेट की- बोर्ड पर स्थिरता और शांति से काम किया जा सकता है. विंड यू-160 के लिए एमएसआई ने एक चौड़ा टच पैड डिज़ाइन किया है, जिसकी सतह पर आम की-पैड के मुक़ाबले 20 प्रतिशत ज़्यादा जगह है. इससे उंगली चलाने में काफी आसानी होती है. इस नेटबुक में एमएसआई द्वारा विकसित इको एनर्जी सेविंग तकनीक डाली गई है, जिससे इसकी बैट्री ख़ूब चलती है और लंबे समय तक पावर सप्लाई मिलती रहती है. उपयोगकर्ता पांच तरह के पावर सप्लाई मोड में अपनी ज़रूरत के अनुसार विकल्प चुन सकते हैं, ताकि ज़रूरत के अनुसार पावर सप्लाई की जा सके. उक्त पांच पावर सप्लाई मोड गेमिंग, मूवी, प्रेजेंटेशन, डॉक्यूमेंट और टर्बो बैट्री हैं. विंड यू-160 व्यापक वायरलेस नेटवर्किंग फंक्शनलिटी की पेशकश करता है, क्योंकि इसमें बिल्ट इन 802.11 बी/जी/एन क्षमता, ब्लूटुथ वी-2.0 ईडीआर है और यह 3.5 जी मोबाइल कम्युनिकेशन को सपोर्ट करता है. विंड यू-160 से उपयोगकर्ता सुविधाजनक, उच्च रफ्तार वाले वायरलेस इंटरनेट संचार का मज़ा कहीं भी ले सकते हैं और दूरी की बाधा से मुक्त हो सकते हैं. स्टाइलिश लुक और एक्सट्रीम पोर्टेबिलिटी से युक्त एमएसआई विंड यू-160 फैशन तलाशने वालों और मोबाइल उपभोक्ताओं को लक्ष्य करके पेश किया गया है. यह उन लोगों के लिए सबसे उपयुक्त है, जिन्हें बेहद मोबिलिटी की आवश्यकता होती है और सूचनाएं अपने साथ लेकर चलना जिनके लिए ज़रूरी होता है. जैसे हमेशा आते-जाते रहने वाले सेल्सपर्सन या छात्र. इस ख़ास नेटबुक की क़ीमत 23,999 रुपये है.

ओजोन का नया मेकअप किट

ओजोन ब्रांड की इस नई रेंज में त्वचा को जवां, ख़ूबसूरत और सुंदर बनाए रखने के लिए नया प्रयोग किया गया है.

फैशन के इस दौर में जब सौंदर्य एवं त्वचा की देखभाल के लिए बाज़ार में उत्पादनों की भरमार है, ओजोन ग्रुप ऑफ कंपनीज ने स्किन केयर प्रोफेशनल एवं व्यक्तिगत उपयोग के लिए नवीनतम श्रेणी के उत्पादों की एक विस्तृत रेंज लॉन्च की है. इस मान्यता के साथ कि त्वचा किसी भी व्यक्ति के स्वास्थ्य एवं मन:स्थिति का प्रतिबिंब होती है. इस तथ्य को मद्देनज़र रखते हुए ओजोन ने विभिन्न आयु वर्गों के लोगों के लिए कॉस्मेटिक प्रोडेक्ट बनाए हैं. इस मौक़े पर कंपनी के चेयरमैन एवं प्रबंध निदेशक एस सी सहगल ने कहा कि उम्र बढ़ने के साथ-साथ मानव त्वचा में महत्वपूर्ण बदलाव आते हैं.

शरीर के आंतरिक भागों पर उम्र का प्रभाव पड़ने से त्वचा भी प्रभावित होती है. त्वचा के स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों में आहार, धूप एवं फ्री रेडिकल्स का सामना, भारी धातुएं और ऑक्सीडेंट शामिल हैं. ओजोन के नए उत्पाद विशेषज्ञों द्वारा तैयार किए गए हैं. ओजोन ब्रांड की इस नई रेंज में त्वचा को जवां, ख़ूबसूरत और सुंदर बनाए रखने के लिए नया प्रयोग किया गया है. इस रेंज के प्रोडक्ट ऑरगेनिक हैं यानी जैविक. इससे त्वचा को नुक़सान नहीं के बराबर होता है. इस रेंज में एक्ने हीलिंग ट्रीटमेंट, कंपलेक्शन ब्राइटनिंग ट्रीटमेंट, परफेक्ट स्किन टोन ट्रीटमेंट, रिंकल कॉम्बेट ट्रीटमेंट, नॉरिशिंग स्किन एसेंशियल ट्रीटमेंट आदि शामिल हैं. रेंज की प्रत्येक किट में एक विशेष सेरूमॉयड उत्पाद है, जो त्वचा को सर्वाधिक प्रभावी एवं उपयुक्त तालमेल से सक्रिय प्राकृतिक घटकों को स्वीकार करने के लिए तैयार करता है. ऐसा दुनिया में पहली बार हो रहा है कि कॉस्मेटिक एवं कॉस्मोस्युटिकल्स में सेरूमॉयड की अवधारणा का प्रयोग किया गया है.

ओजोन स्किन केयर उत्पाद प्राकृतिक स्रोतों से निकाले गए हैं, जो विषैले तत्वों एवं भारी कणों से मुक्त हैं. रोजमर्रा के इस्तेमाल के लिए बनी ख़ास रेंज में इंटेंसिव केयर, लिप बाम, फेसवॉश, नहाने का सोप, इंटेंसिव फुट सॉफ्टनर और क्लासिक लाइन किट में क्लींजर, मॉस्चराइजर, टोनर एवं कंडीशनर आदि शामिल हैं. इन सभी उत्पादों की 100 ग्राम की ट्यूब की क़ीमत नब्बे रुपये से शुरू होती है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : email : advt@chauthiduniya.com

अफसोस कि क्रिकेट के हमारे रहनुमाओं को यह बात समझ में नहीं आती. लगातार दूसरे साल ऐसा हुआ है, जब भारतीय खिलाड़ी आईपीएल के ठीक बाद टी-20 वर्ल्ड कप खेलने गए थे और दोनों ही बार टीम का एक जैसा हश्र हुआ.

टी-20 वर्ल्ड कप

धोनी नहीं हैं ज़िम्मेदार

लगातार दूसरी बार चित्त हो गए धोनी के धुरंधर. टी-20 वर्ल्ड कप के सुपर 8 मुक़ाबलों में भारतीय टीम एक भी मुक़ाबला नहीं जीत पाई और सेमीफाइनल में पहुंचने से पहले ही टूर्नामेंट से बाहर हो गई. लगातार दूसरी बार इस महत्वपूर्ण टूर्नामेंट में टीम इंडिया के सलामी बल्लेबाज़ एवं गेंदबाज़ टीम का हिस्सा नहीं बन पाए और लगातार दूसरी बार टीम ने इस शर्मनाक प्रदर्शन के लिए आईपीएल को ज़िम्मेदार ठहराया. कप्तान महेंद्र सिंह धोनी ने स्पष्ट तौर पर कहा कि आईपीएल के दौरान देर रात तक चलने वाली पार्टियों के कारण खिलाड़ियों का प्रदर्शन प्रभावित हुआ. वहीं टीम के कोच गैरी कर्स्टन ने खिलाड़ियों के साथ-साथ भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड (बीसीसीआई) के रवैये पर उंगली उठाई है, लेकिन बीसीसीआई के आला अधिकारी चुपचाप बैठे हैं. हर मुद्दे पर अपनी राय रखने वाले चयन समिति के अध्यक्ष के श्रीकांत की ज़ुबान को जैसे ताला लग गया है. जनता आक्रोशित है, उसे लग रहा है कि उसे ठगा गया है. वह सवाल पूछ रही है, लेकिन जवाब नहीं मिल रहा. सवाल यह है कि इसके लिए कौन ज़िम्मेदार है. इस प्रतिष्ठित टूर्नामेंट में टीम के शर्मनाक प्रदर्शन के लिए खिलाड़ी या कप्तान अपनी ज़िम्मेदारियों से बच नहीं सकते, लेकिन क्या बीसीसीआई की कोई ज़िम्मेदारी नहीं बनती है? यदि टीम के खिलाड़ी अनफिट हैं, शॉर्ट पिच गेंदबाजी के खिलाफ उनकी बल्ले की धार कुंद पड़ जाती है, तो इसके लिए धोनी भला कैसे जिम्मेदार हो सकते हैं? फिर भी, आज धोनी के सिर पर बेवजह तलवार लटक रही है तो बीसीसीआई और उसकी चयन समिति की बर्खास्तगी की चर्चा क्यों नहीं हो रही?

वेस्टइंडीज में खेले गए तीसरे टी-20 वर्ल्ड कप में भारतीय टीम के ख़राब प्रदर्शन के लिए कोई एक कारण नहीं दिया जा सकता, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि आईपीएल इसकी एक बड़ी वजह है. आईपीएल के फाइनल मुक़ाबले के ठीक पांच दिन बाद वर्ल्ड कप का पहला मैच खेला गया. क़रीब डेढ़ महीने तक चलने वाले आईपीएल में क्रिकेट के अलावा भी बहुत सारी चीज़ें होती हैं. रोज मुक़ाबले होते हैं और इसके साथ होती हैं देर रात तक चलने वाली पार्टियां, जिनके चलते खिलाड़ी थककर चूर हो जाते हैं. वैसे भी आईपीएल क्रिकेट से ज़्यादा इंटरटेनमेंट है, जिसमें ढेर सारा पैसा है, ग्लैमर है, बड़े-बड़े कॉरपोरेट घराने हैं. पैसे के लोभ में हमारे खिलाड़ी आईपीएल में अपने क्लबों के लिए जी-जान लगा देते हैं, लेकिन जब बात राष्ट्रीय टीम और देश की प्रतिष्ठा की आती है तो उनके पैर जवाब देने लगते हैं, हौसला टूटने लगता है और टीम की मिट्टी पलीद हो जाती है.

अफसोस कि क्रिकेट के हमारे रहनुमाओं को यह बात समझ में नहीं आती. लगातार दूसरे साल ऐसा हुआ है, जब भारतीय खिलाड़ी आईपीएल के ठीक बाद टी-20 वर्ल्ड कप खेलने गए थे और दोनों ही बार टीम का एक जैसा हश्र हुआ. आईपीएल के समर्थकों का दावा है कि इससे घरेलू खिलाड़ियों को अंतरराष्ट्रीय एक्सपोजर मिलता है और टीम इंडिया के लिए नए खिलाड़ी तैयार होते हैं, लेकिन यहां तो इसका उल्टा हो रहा है. सच तो यह है कि लीग में भागीदारी के चलते स्थापित खिलाड़ी भी अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में शामिल ही नहीं हो पाते और होते भी हैं तो अपने प्रदर्शन का स्तर बरक़रार नहीं रख पाते. पिछले साल भी आईपीएल में लगी चोट के चलते वीरेंद्र सहवाग टी-20 वर्ल्ड कप में भारतीय टीम का हिस्सा नहीं बन पाए थे. इस बार भी ऐसा ही हुआ. हैरत की बात तो यह है कि सहवाग आईपीएल में अपनी टीम दिल्ली डेयरडेविल्स के हर मुक़ाबले में शामिल थे. फिर एक सप्ताह के अंदर ऐसा क्या हो गया कि उन्हें टीम से बाहर रहने को मजबूर होना पड़ा? यही बात प्रवीण कुमार और जहीर ख़ान के लिए कही जा सकती है. पिछले साल जहीर आईपीएल के दौरान ही चोटिल हुए थे, जिसके चलते टी-20 वर्ल्ड कप के कुछेक मैचों में ही वह भारतीय टीम के लिए खेल पाए थे. इस बार उनकी चोट इतनी गंभीर तो नहीं थी, लेकिन उनकी परेशानी को मैदान पर उनके प्रदर्शन और हावभाव से समझा जा सकता है. बेदम गेंदबाज़ी, बुझा-बुझा सा चेहरा और तीन मैचों में क़रीब दस की रन गति से केवल दो विकेट. मजबूर होकर कप्तान महेंद्र सिंह धोनी को उन्हें श्रीलंका के ख़िलाफ़ सुपर 8 के आख़िरी मुक़ाबले में टीम से बाहर करना पड़ा. प्रवीण कुमार केवल दो मैच खेलने के बाद पहले ही स्वदेश वापस लौट चुके थे. टीम मैनेजमेंट भले ही कहे कि प्रवीण वेस्टइंडीज पहुंचने के बाद चोटिल हुए थे, लेकिन इस बात में कितनी सच्चाई है, यह इसी से स्पष्ट हो जाता है कि दो मुक़ाबलों में प्रवीण ने सिर्फ़ चार ओवर ही गेंदबाज़ी की थी. ज़ाहिर है, ऊपर से भले कुछ और नज़र आता हो, लेकिन सच्चाई यही है कि आईपीएल का जिन्न भारतीय क्रिकेट को अंदर से खोखला करता जा रहा है.

फिर भी वर्ल्ड कप में ख़राब प्रदर्शन के बाद सारा दोष आईपीएल के सिर मढ़ देने भर से काम नहीं चलेगा. सारी बातें तो हम-आप पहले से ही जानते हैं, उन्हें दोहराने से क्या फ़ायदा. अब यह बात और है कि बीसीसीआई को कोई बात समझ में नहीं आती, वरना लगातार दूसरे साल वर्ल्ड कप से ठीक पहले आईपीएल के आयोजन को मंज़ूरी न दी गई होती. यही वजह है कि आईपीएल की देर रात तक चलने वाली पार्टियों को टी-20 वर्ल्ड कप में टीम के ख़राब प्रदर्शन के लिए ज़िम्मेदार ठहराने के कप्तान महेंद्र सिंह धोनी के दावे को भी कमज़ोर बहानेबाज़ी के सिवा और कुछ नहीं कहा जा सकता. पिछले साल इसी तरह का बयान कोच गैरी कर्स्टन ने दिया था. मतलब यह है कि टीम मैनेजमेंट आईपीएल के ख़तरे से पहले ही वाक़िफ़ था. तो फिर उसने यह बात बीसीसीआई को क्यों नहीं बताई? कहीं ऐसा तो नहीं कि पैसे के लालच में खिलाड़ी जानबूझ कर राष्ट्र की प्रतिष्ठा के साथ समझौता करने को तैयार हो गए? धोनी के इस बयान के बाद भारतीय क्रिकेट के प्रशंसक तो कम से कम यही सोच रहे होंगे. वैसे यह भी सच्चाई है कि वर्ल्ड कप में धोनी एक कप्तान के रूप में अच्छा प्रदर्शन करने में नाकाम रहे हैं. इस टूर्नामेंट के दौरान उनके फ़ैसलों में न तो कोई स्पष्ट रणनीति दिखी और न ही दूरदर्शिता. लेकिन हमें यह याद रखना होगा कि क्रिकेट के मैदान पर कप्तान की भूमिका एक लीडर की होती है, जो टीम के लिए रणनीति तैयार करता है और टीम के खिलाड़ी उसे अंजाम देते हैं, लेकिन यहां तो सबसे बड़ा सवाल टीम के चयन का है. कोच गैरी कर्स्टन का कहना है कि टी-20 वर्ल्ड कप के लिए चुनी गई टीम में कई खिलाड़ी ऐसे थे, जो अंतरराष्ट्रीय क्रिकेट तो क्या, किसी भी स्तर के क्रिकेट के लिए फिट नहीं थे. कर्स्टन ने खिलाड़ियों के एटीट्यूड पर भी सवाल उठाए हैं.

किसी भी महत्वपूर्ण टूर्नामेंट में अच्छे प्रदर्शन के लिए ज़रूरी है कि टीम में ऐसे खिलाड़ियों को शामिल किया जाए, जो सर्वश्रेष्ठ हों और अच्छी फॉर्म में हों, लेकिन बीसीसीआई की चयन समिति ने टी-20 वर्ल्ड कप के लिए चुनी गई टीम में कम से कम तीन ऐसे खिलाड़ियों को शामिल किया, जो लंबे समय से अपनी खोई लय पाने की कोशिश में लगे हैं. इनमें गौतम गंभीर, युवराज सिंह और रवींद्र जडेजा का नाम लिया जा सकता है. गंभीर आईपीएल के दौरान भी अपनी टीम के लिए अच्छा प्रदर्शन नहीं कर पाए थे, जबकि युवराज पिछले एक साल से चोट और ख़राब फॉर्म के शिकार हैं. बल्लेबाज़ी एवं गेंदबाज़ी के अलावा अपनी जानदार फील्डिंग के बल पर दुनिया के सर्वश्रेष्ठ क्षेत्ररक्षकों में गिने जाने वाले युवराज की बॉडी लैंग्वेज देखने से ही महसूस किया जा सकता है कि वह दबाव में हैं और उनका ध्यान कहीं और है. सबसे रोचक किस्सा तो रवींद्र जडेजा का है. जडेजा अनुशासनात्मक कारणों से आईपीएल में भी नहीं खेल पाए थे, फिर उन्हें किस आधार पर टीम में शामिल किया गया, यह आम लोगों की समझ से परे है. हालांकि चयन समिति के सामने विकल्पों की कोई कमी नहीं थी. यदि आईपीएल में प्रदर्शन के आधार पर ही खिलाड़ियों को चुना गया तो सौरव तिवारी, अंबाती रायडू, रॉबिन उथप्पा, अशोक डिंडा, प्रज्ञान ओझा और अमित मिश्रा को मौक़ा मिल सकता था, लेकिन ऐसा नहीं हुआ और टीम को इसका खामियाज़ा भुगतना पड़ा. चयन समिति ने खिलाड़ियों का चुनाव उनके प्रदर्शन नहीं, बल्कि उनकी प्रतिष्ठा के आधार पर किया. आज चारों ओर से खिलाड़ियों के ख़िलाफ़ आवाज़ें उठ रही हैं तो बीसीसीआई के अधिकारियों को हटाने की चर्चा क्यों नहीं हो रही? चयन समिति को बर्खास्त करने की दिशा में क़दम क्यों नहीं उठाए जा रहे, जबकि सच बात तो यह है कि इस वर्ल्ड कप में भारतीय टीम के ख़राब प्रदर्शन के लिए सबसे ज़्यादा ज़िम्मेदार बीसीसीआई और उसकी चयन समिति ही है.

भारतीय क्रिकेट के साथ समस्या यह है कि हम अपनी ग़लतियों से भी सबक नहीं लेना चाहते. शॉर्ट पिच गेंदबाज़ी के ख़िलाफ़ हमारे बल्लेबाज़ों को परेशानी होती है, यह सब जानते हैं, लेकिन इस कमज़ोरी को दूर कैसे किया जाए, यह कोई नहीं सोचता. चयनकर्ताओं को पता है कि आईपीएल के प्रदर्शन के आधार पर खिलाड़ियों का टीम इंडिया में चुना जाना ठीक नहीं है, लेकिन वे फिर भी ऐसा ही करते हैं. बीसीसीआई भी जानती है कि आईपीएल के थकाऊ शेड्यूल के ठीक बाद किसी बड़े टूर्नामेंट में खेलना खिलाड़ियों के लिए मुश्किल है, फिर भी बोर्ड इस ओर कोई ध्यान नहीं देता. हर कोई अपने व्यक्तिगत स्वार्थों को साधने में लगा है. क्रिकेट को अपना धर्म मानने वाले देश में यदि खेल प्रशासकों का यही हाल रहा तो हालात में किसी बड़े बदलाव की उम्मीद करना बेकार है. क्रिकेट के इन कर्ताधर्ताओं को यह याद रखना होगा कि जनता सब कुछ समझती है. जनता यह भी जानती है कि चयन समिति की बैठकों में किस तरह कोटा सिस्टम चलता है. वह यह भी जानती है कि बीसीसीआई किस तरह अपनी कमाई बढ़ाने के चक्कर में खिलाड़ियों को बेवजह के टूर्नामेंट और सीरीज खेलने को मजबूर करता है. क्रिकेट के इन मोटी चमड़ी वाले आकाओं को यह बात समझनी होगी कि वे चाहकर भी अपनी ज़िम्मेदारियों से भाग नहीं सकते. यदि जनता के धैर्य ने जवाब दे दिया तो उनके लिए भागने को शायद ही कोई रास्ता बचे.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

चयनकर्ताओं को पता है कि आईपीएल के प्रदर्शन के आधार पर खिलाड़ियों का टीम इंडिया में चुना जाना ठीक नहीं है, लेकिन वे फिर भी ऐसा ही करते हैं. बीसीसीआई भी जानती है कि आईपीएल के थकाऊ शेड्यूल के ठीक बाद किसी बड़े टूर्नामेंट में खेलना खिलाड़ियों के लिए मुश्किल है, फिर भी बोर्ड इस ओर कोई ध्यान नहीं देता.

चौथी बार शतरंज के बेताज बादशाह बने विश्वनाथन आनंद

11 मई का दिन देश की खेलप्रेमी जनता के लिए एक साथ ख़ुशी और दुःख दोनों की सौगात लेकर आया. इस दिन जहां भारतीय क्रिकेट टीम कैरीबियाई धरती पर श्रीलंका के हाथों हारकर टी-20 वर्ल्ड कप से बाहर हो गई, वहीं विश्वनाथन आनंद ने विश्व शतरंज चैंपियनशिप का खिताब जीतकर देशवासियों के गम को काफी हद तक कम कर दिया. आनंद ने कड़े मुक़ाबले में बुल्गारिया के वेसलिन तोपलोव को हराकर विश्व शतरंज चैंपियनशिप का खिताब चौथी बार जीत लिया. बुल्गारिया की राजधानी सोफिया में खेले गए इस मुक़ाबले में आख़िरी राउंड से पहले तक दोनों खिलाड़ी 5.5 अंकों के साथ बराबरी पर थे, लेकिन आख़िरी बाज़ी में काले मोहरों से खेल रहे आनंद ने तोपलोव को आत्मसमर्पण के लिए मजबूर कर दिया और ताज अपने नाम कर लिया. विशी के नाम से मशहूर आनंद इससे पहले वर्ष 2000, 2007 और 2008 में भी यह खिताब जीत चुके हैं. शतरंज की दुनिया के महानतम खिलाड़ियों में शुमार किए जाने वाले 40 वर्षीय आनंद केवल पांच ऐसे खिलाड़ियों में शामिल हैं, जिन्होंने फिडे रेटिंग में 2800 अंकों का आंकड़ा पार किया है. अप्रैल 2007 में 37 साल की उम्र में पहली बार शीर्ष वरीयता हासिल कर यह कारनामा करने वाले वह सबसे ज़्यादा उम्र के खिलाड़ी बने. बचपन में अपनी मां से शतरंज के गुर सीखने वाले आनंद केवल 15 साल की उम्र में इंटरनेशनल मास्टर बनने वाले सबसे कम उम्र के भारतीय खिलाड़ी भी हैं. 1987 में वर्ल्ड जूनियर चेस चैंपियनशिप जीतने वाले भी वह पहले भारतीय हैं. 1997, 1998, 2003, 2004, 2007 और 2008 में चेस ऑस्कर जीत चुके आनंद के साथ इतनी उपलब्धियां जुड़ी हैं कि शायद ही कोई और खिलाड़ी उनकी बराबरी कर सके. यही वजह है कि भारत सरकार ने 18 साल की छोटी उम्र में ही उन्हें पद्मश्री की उपाधि से सम्मानित किया. इसके अलावा उन्हें 2000 में पद्मभूषण, 2007 में पद्मविभूषण और 1991-92 में पहले राजीव गांधी खेल रत्न पुरस्कार से भी नवाजा चुका है.

शतरंज की दुनिया के महानतम खिलाड़ियों में शुमार किए जाने वाले 40 वर्षीय आनंद केवल पांच ऐसे खिलाड़ियों में शामिल हैं, जिन्होंने फिडे रेटिंग में 2800 अंकों का आंकड़ा पार किया है. अप्रैल 2007 में 37 साल की उम्र में पहली बार शीर्ष वरीयता हासिल कर यह कारनामा करने वाले वह सबसे ज़्यादा उम्र के खिलाड़ी बने.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 24 मई–30 मई 2010

फ़िल्म रब ने बना दी जोड़ी में नॉन ग्लैमरस भूमिका में नज़र आई अनुष्का शर्मा फ़िल्म बदमाश कंपनी में ग्लैमरस सेक्सी गर्ल के किरदार में ख़ूब जमी हैं.

मुग्धा गोडसे की परेशानी

फ़िल्म *फैशन, ऑल द बेस्ट* एवं *जेल* में सशक्त भूमिका निभा चुकी अदाकारा मुग्धा गोडसे इन दिनों मौसम की वजह से परेशान हैं. मुंबई की गर्मी से परेशान मुग्धा कहती हैं कि इस वर्ष गर्मी कुछ ज़्यादा पड़ रही है. जब भी वह गर्मियों से होने वाली परेशानियों के बारे में सोचती हैं, तो उनकी आंखों के आगे बिकनी, शार्ट्स, गंजी, फ्रेश लाइम जूस, बर्फ के रंग बिरंगे गोले आदि ठंडक देने वाली चीज़ें घूमने लगती हैं. गर्मियों के दिनों में उन्हें समुद्र के किनारे जाना और घूमना अच्छा लगता है. बचपन के दिनों की यादें ताज़ा करते हुए मुग्धा बताती हैं कि उनकी मां उन्हें स्कूल के दिनों में होली मनाने नहीं देती थीं, क्योंकि अप्रैल में परीक्षाएं होती थीं. और इस माह में उन्हें दोहरी गर्मी झेलनी पड़ती थी. पहले के दो सप्ताह वार्षिक परीक्षा और बाकी के दो सप्ताह रिजल्ट के इंतजार में बीत जाते थे. मैं एक होनहार स्टूडेंट थी और अपने परीक्षाफल के प्रति चिंतित रहती थी. परिवार वाले मुझसे हमेशा अच्छे परिणाम की अपेक्षा रखते थे. रिजल्ट वाले दिन मैं पहले पूरे परिवार के साथ मंदिर जाती थी और फिर रिजल्ट लेने स्कूल जाती थी. उसके बाद मई के महीने में होली की कसर दोस्तों के साथ पानी से खेलकर निकाला करती थी. मुग्धा बताती हैं कि तब मेरे घर में एयरकंडीशन नहीं हुआ करता था. परिवार बिजली कटौती के दौरान पंखे की हवा के लिए भी तरस जाता था. आम बच्चों की तरह मुझे बचपन में आइसक्रीम एवं फल जैसे तरबूज और आम बेहद पसंद थे. इसके अलावा कच्चे आम यानी हरी कैरी में नमक–मिर्च लगाकर खाना भी पसंद था. उन दिनों मां छत पर सूखने के लिए इमली रख आया करती थीं, जिसे मैं दोस्तों के साथ चोरी करके खा लिया करती थी. मैं वही कपड़े पहनती थी, जो गर्मी से राहत दिलाते थे. गर्मी की छुट्टियों में कहीं दूर घूमने जाने का कार्यक्रम नहीं बन पाता था, क्योंकि सभी रिश्तेदार मुंबई के क़रीब पुणे के आसपास ही रहते थे. उन दिनों मेरी सबसे पसंदीदा जगह महाबलेश्वर हुआ करती थी. वहां मई में भी मौसम सुहावना रहता था. मैं मई के अंत या जून के प्रथम सप्ताह में सिंहगढ़ फोर्ट जाना पसंद करती थी. खंडाला भी मुझे पसंद है. दूर की जगहों में मनाली बहुत ख़ूबसूरत है, लेकिन इन गर्मियों में मौक़ा मिला तो मैं बाली जाना पसंद करूंगी.

नेहा धूपिया का स्टाइल स्टेटमेंट

नेहा धूपिया कुछ हिट-कुछ फ्लॉप फ़िल्मों के बाद बड़े पर्दे से लगभग ग़ायब हो गई हैं. अवार्ड्स नाइट और स्टेज शो में हिस्सा लेने में इन दिनों वह ज़्यादा व्यस्त हैं. इसके अलावा वह इस ब्रेक के दौरान बाक़ी हॉट गर्ल्स की तरह अपना वार्डरोब बदलने में लगी हैं. नेहा कहती हैं कि उन्हें सनग्लासेज और फुटवियर इतने पसंद हैं कि उनके पास इनकी कितनी जोड़ियां हैं, यह उन्हें ख़ुद नहीं मालूम. उन्हें खुले स्लीपर्स से लेकर घुटने तक हाई हील बूट पसंद हैं और उनके कलेक्शन में सभी डिजाइन के लेटेस्ट फुटवियर हैं. उनका मानना है कि फुटवियर व्यक्ति के मूड को प्रदर्शित करते है और सनग्लासेज व्यक्तित्व में चार चांद लगा देते है. अलग-अलग तरह के सनग्लासेज अलग-अलग लुक देते हैं और इससे आपका स्टाइल भी बदलता रहता है. नेहा कभी भी अपनी ड्रेस से मैचिंग फुटवियर नहीं पहनती हैं. उनका मानना है कि ड्रेस की रंग से अलग फुटवियर लोगों की नज़र में आते हैं और इससे उनका स्टाइल स्टेटमेंट भी पता चल जाता है. गर्मियों में उन्हें बाहर आने-जाने के लिए सफ़ेद कुर्ता-चूड़ीदार पजामा पसंद है और घर में टी-शर्ट और शॉर्ट्स. वार्डरोब में ज़्यादातर ड्रेस ग्रे, व्हाइट और ब्लैक रंग की हैं, जो कि उनके पसंदीदा कलर्स हैं.

जहान बलोच का स्वाभिमान

मेहुल कुमार की बेटी जहान बलोच को बतौर लीड रोल बॉलीवुड में ब्रेक मिला उनके पिता की फ़िल्म *क्रांतिवीर* के सिक्वल से. इस फ़िल्म में उन्होंने डिंपल कपाड़िया और नाना पाटेकर की बेटी का रोल अदा किया है. वह इस फ़िल्म को लेकर काफी उत्साहित हैं, क्योंकि ऐसी फ़िल्म का सिक्वल करना आसान नहीं है. इसमें वह एक पत्रकार की भूमिका अदा कर रही हैं, जो भ्रष्टाचार, आतंकवाद और हिंसा के ख़िलाफ़ खड़ी होती है. बतौर लीड यह उनकी पहली फ़िल्म है, लेकिन इससे पहले भी वह बॉलीवुड की कुछ अच्छी फ़िल्मों में बतौर बाल कलाकार काम कर चुकी हैं. दस साल पहले उन्होंने फ़िल्म *कोहराम* में अमिताभ बच्चन एवं जयाप्रदा की बेटी का किरदार निभाया था. इसके अलावा उन्होंने फ़िल्म *मृत्युदंड* और *आंसू बने अंगारे* में भी काम किया है. फ़िल्म उनका पैशन है और वह प्रोडक्शन के काम में भी माहिर हैं. वह पटकथा लेखन और संपादन में भी अपने हाथ आजमाती रहती हैं. कई बार उन्होंने शूटिंग फ्लोर पर कोआर्डिनेशन का काम भी किया है. दरअसल, उनका पूरा परिवार फ़िल्म से जुड़ा है. वह कहती हैं कि ऐक्टिंग उनके ख़ून में है और उन्हें किसी प्रकार की ट्रेनिंग लेने की ज़रूरत नहीं है. वह हमेशा से अभिनेत्री बनना और फ़िल्म निर्माण को क़रीब से देखना एवं समझना चाहती थीं, इसलिए पिता मेहुल कुमार के साथ उनकी फ़िल्मों के सेट पर जाती थीं. उनका सपना था कि बॉलीवुड में बतौर लीड एक्ट्रेस उनकी पहली फ़िल्म पिता ही डायरेक्ट करें. इसलिए जहान *क्रांतिवीर* को लेकर काफी ख़ुश हैं. वह कहती हैं कि पिता मेहुल कुमार और निर्देशक मेहुल कुमार में बहुत फ़र्क़ है. सेट पर काम करते समय मेहुल कुमार काफी गंभीर रहते हैं. जबकि घर में सबसे छोटी और लाडली बिटिया होने की वजह से मेहुल का उनके साथ व्यवहार बिल्कुल अलग है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

फ़िल्म रिव्यू

बदमाश कंपनी

आधुनिकता और पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित होने वाले युवाओं की कहानी पर आधारित फ़िल्म *बदमाश कंपनी* दरअसल आजकल के युवाओं की मानसिकता को प्रदर्शित करती है. भारतीय समाज में युवाओं को विदेशी रहन-सहन की आदतें और खोखले मूल्य तेजी से ग्रहण करते हुए देखा जा रहा है. ऐसे में संभ्रांत वर्ग के युवाओं पर ज़्यादा फ़र्क़ नहीं पड़ता, जबकि मध्यमवर्गीय परिवार में पलने-बढ़ने वाले युवा इस जीवनशैली का फ़ायदा कम और ख़ामियाज़ा अधिक उठाते हैं. भारतीय समाज का मध्यम वर्ग इज़्ज़त और ईमानदारी को अपनी सबसे बड़ी दौलत समझता है, जबकि आजकल के युवा इन मूल्यों को रौंदते हुए अय्याशी, मौजमस्ती के साथ आगे बढ़ना चाहते हैं. इस आकर्षण से बंधे युवाओं को ज़िंदगी में किन परेशानियों का सामना करना पड़ता है

और इस रास्ते पर चलते हुए अपने जीवन की किन ख़ास चीज़ों को वे खो देते हैं, इसी को फ़िल्म *बदमाश कंपनी* में दिखाया गया में दिखाया गया है. मध्यमवर्गीय परिवार से ताल्लुक रखने वाले चार दोस्त शाहिद (करण), अनुष्का (बुलबुल), मियांग चांग (जींग) और वीर दास (चंदू) कम समय में ज़्यादा पैसा कमाना चाहते हैं. करण अपने तेज़तर्रार दिमाग़ और बड़े आइडिया के सहारे अपने दोस्तों की मदद से अमीर बन जाता है. इन्हीं चारों दोस्तों की बदमाश कंपनी बड़े-बड़े कारनामे करती है. फ्रेंड्स एंड कंपनी इतनी अमीर हो जाती है कि वे ख़ुद को भगवान मानने लगते हैं. इस वजह से उनका लालच और बढ़ता ही जाता है. यह लालच उनमें आपसी दरार पैदा कर देता है. लेकिन अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता है, ज़्यादा पैसे कमाने के चक्कर में मध्यमवर्ग की पूंजी यानी इज़्ज़त और ईमानदारी दोनों घुल जाती है. आख़िरकार लौट के बुद्धू घर को आए वाली हालत होती है. फ्रेंड्स एंड कंपनी के इस खेल को बेहद ख़ूबसूरती से दर्शाया गया है. सीधे ट्रैक पर कहानी चलती है और कहीं भी कंफ्यूज़ नहीं करती. कहानी में कई जगह दिया गया सस्पेंस काफी रोमांचक और मज़ेदार है. बीच-बीच में दिया गया हास्य का पुट बेहद अच्छा है. शाहिद कपूर और अनुष्का शर्मा ने काफी अच्छी एक्टिंग की है. फ़िल्म में चांग के नॉर्थ ईस्ट लुक की वजह से चंदू उसे बार-बार चीनी कहकर चिढ़ाता है, यह आम भारतीयों की दोहरी भावना को दर्शाता है. चांग की यह पहली फ़िल्म होने के बावज़ूद वह अपने रोल में बिल्कुल फिट बैठे हैं. निर्देशक परमीत सेठी ने अपनी पहली ही फ़िल्म में कलाकारों को बेहतरीन तरीक़े से गाइड किया. युवाओं को ध्यान में रखकर बनाई गई इस फ़िल्म में अभिनय, हास्य, गंभीरता और विषय बिल्कुल सटीक हैं. कहानी और ट्रीटमेंट के लिहाज़ से फ़िल्म युवाओं को ज़रूर पसंद आएगी.

रीतिका सोनाली
ritika@chauthiduniya.com

- कलाकारः शाहिद कपूर, अनुष्का शर्मा, वीर दास, म्यांग चांग, अनुपम खेर, किरण जुनेजा, पवन मल्होत्रा.
- निर्देशक : परमीत सेठी
- निर्माता : आदित्य चोपड़ा
- पटकथा : परमीत सेठी
- संगीत : प्रीतम चक्रवर्ती

चौथी दुनिया

बिहार झारखंड

दिल्ली, 24 मई–30 मई 2010

www.chauthiduniya.com

नीतीश जी, यह ख़तरे की घंटी है

किसान महापंचायत में उमड़ी भीड़ नीतीश की विदाई चाहती है. बटाईदारी के मुद्दे को गांव-गांव जाकर गरमाने का काम जारी रहेगा और साथ ही राजनीतिक तार जोड़ने का काम भी चलेगा. कांग्रेस के साथ तालमेल एवं रामविलास को साथ लाने का ख़ाका खींचा जा रहा है. लालू और नीतीश के गणित को फेल करने की पूरी तैयारी है. महापंचायत के नेताओं ने अपनी ताक़त का एहसास करा दिया है. पहली बार एक बड़ी राजनीतिक चुनौती ने मुख्यमंत्री नीतीश के दरवाजे पर दस्तक दी है.

सरोज सिंह

नौ मई को बिहार के लोगों की निगाहें पटना के गांधी मैदान पर टिकी थीं. बटाईदारी को लेकर बुलाई गई महापंचायत में आने वाली भीड़ पर हर दल के नेताओं और राजनीतिक विश्लेषकों की नजर थी. महापंचायत में शामिल नेता चिलचिलाती धूप एवं जाम की बातों से बेचैन होकर गांधी मैदान में अपने समर्थकों को तलाश रहे थे. इन नेताओं ने ढाई बजे के आसपास मंच पर पहुंचने का फ़ैसला किया और देखते ही देखते समर्थकों का हुजूम गांधी मैदान में उमड़ने लगा. लगभग चार बजे आशंकाओं की घड़ियां ख़त्म हो गईं और एक लाख से भी ज़्यादा की भीड़ ने महापंचायत के नेताओं को बिहार में एक नए राजनीतिक विकल्प का रास्ता तैयार करने की हरी झंडी दे दी.

महापंचायत की सफलता से उत्साहित नेता जल्द से जल्द नया विकल्प देने की बात तो कर रहे हैं, लेकिन इसे लेकर अभी तीन धाराएं चल रही हैं. पहली राय यह है कि किसी छोटी व पुरानी पार्टी को जिंदा कर उसके झंडे तले चुनाव लड़ा जाए. आगामी विधानसभा चुनाव में कांग्रेस पार्टी के साथ भी तालमेल किया जा सकता है और संभव हो तो रामविलास पासवान को भी इस मोर्चे में शामिल किया जा सकता है. राज्यसभा एवं विधान परिषद चुनाव या उसके ठीक बाद इस राय को कसौटी पर कसा जा सकता है. बताया जा रहा कि राज्यसभा एवं विधान परिषद चुनाव में कुछ ऐसे राजनीतिक हालात पैदा हो सकते हैं या फिर किए जा सकते हैं, जिससे लालू एवं नीतीश के ख़िलाफ़ एक नए विकल्प की ठोस बुनियाद रखी जा सकती है. बताया जा रहा है कि यह मोर्चा अगर बना तो अगड़ी जातियों के अलावा दलितों एवं मुसलमानों का झुकाव भी इस तरफ होगा और लालू एवं नीतीश का चुनावी गणित फेल हो जाएगा. महापंचायत के ज़्यादातर नेता इसी तरह का मोर्चा बनाने की राय रखते हैं. इन नेताओं की राय है कि केंद्र में कांग्रेस की नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार है. इसलिए बिहार के लोग राज्य के तेज़ी से विकास के लिए इस नए मोर्चे को स्वीकार कर करेंगे. लेकिन, महापंचायत के कुछ नेता चाहते हैं कि तालमेल की बजाय अलग से चुनाव लड़ा जाए और चुनाव बाद कोई समझौता किया जाए. कुछ नेता कांग्रेस में शामिल होने की भी राय रखते हैं, मगर महापंचायत की सफलता के बाद ज़्यादातर नेताओं ने पहली राय पर मंथन शुरू कर दिया है. चूंकि महापंचायत में जो भीड़ उमड़ी थी, वह हर हाल में नीतीश की विदाई चाहती है. समर्थकों की राय ने महापंचायत के नेताओं की ज़िम्मेदारी बढ़ा दी. इस कारण अब वे ऐसा गणित फिट करना चाहते हैं, जिससे नीतीश सरकार के हटने का रास्ता साफ़ हो सके. कोई चूक न रह जाए, इस कारण फूंक-फूंककर क़दम रखे जा रहे हैं.

महापंचायत की सफलता ने यह साफ़ कर दिया कि नीतीश सरकार से ख़फ़ा लोग बिहार में एक नया राजनीतिक विकल्प चाहते हैं. महापंचायत से जुड़े दिग्गज नेता भी यही चाहते हैं, लेकिन कोई भी फ़ैसला लेने से पहले वे अपने समर्थकों का फ़ैसला सुनना चाहते थे. जब महापंचायत का फ़ैसला आ गया तो नेताओं ने भी देर नहीं की और ऐलान कर दिया कि चिंता की कोई बात नहीं है. हम हर हाल में नया विकल्प देंगे और इस विकल्प में लालू प्रसाद एवं नीतीश कुमार के लिए कोई जगह नहीं होगी. लालू एवं नीतीश से दूरी की बात बार-बार दोहराई गई, ताकि जो नया विकल्प बने, उसकी चाल, चरित्र एवं चेहरे को लेकर लोगों में कोई भ्रम की स्थिति न रहे. ललन सिंह एवं प्रभुनाथ सिंह को लेकर यह बात फैलाई जा रही थी कि ये दोनों नेता अपने क़दम वापस खींच सकते हैं, लेकिन महापंचायत में अपने समर्थकों की उमड़ी भीड़ से गदगद ललन सिंह ने कहा, 15 सालों तक लालू के ख़िलाफ़ लड़ते रहे हैं और अब नीतीश के ख़िलाफ़ लड़ेंगे. नीतीश के पेट में कहां-कहां दांत हैं, यह बात हमसे अच्छा कौन जानता है. आप लोग चिंता न करें, उनके पेट से एक-एक दांत हम निकाल लेंगे. प्रभुनाथ सिंह ने भी कहा कि जिस चौखट को छोड़ आया, वहां जाने का सवाल ही पैदा नहीं होता. हमने लड़ाई छेड़ दी है और यह नीतीश सरकार के खात्मे के साथ ही ख़त्म होगी.

महापंचायत में जो प्रस्ताव पास किया गया, उसमें भी नया विकल्प देने की बात प्रमुखता से कही गई है. विधायक किशोर कुमार मुन्ना कहते हैं कि लालू एवं नीतीश दोनों अलग कहां हैं. दोनों ने मिलकर बिहार का बेड़ा गर्क किया है. इसलिए दोनों को हटाकर एक ऐसा विकल्प बनेगा, जो सही मायनों में बिहार का विकास करेगा. अखिलेश सिंह का कहना है कि महापंचायत की सफलता ने यह साबित कर दिया कि बिहार के लोग नीतीश के ख़िलाफ़ हैं और इस सरकार का जाना तय है. महापंचायत में भीड़ जुटाने के लिए सभी नेताओं ने दिन-रात एक कर दिया था. दिग्विजय सिंह, ललन सिंह, प्रभुनाथ सिंह, अखिलेश सिंह, नागमणि, सूरजभान सिंह एवं किशोर कुमार मुन्ना के समर्थक काफी बड़ी संख्या में महापंचायत में जुटे. तैयारी समिति के प्रमुख पी के सिन्हा ने कहा कि पंचायत में भारी भीड़ जुटने की सूचना पहले ही प्रशासन को दे दी गई थी. इसके बावजूद जाम से निपटने के उपाय नहीं किए गए. इस कारण सैकड़ों वाहन पटना से बाहर रह गए और हज़ारों समर्थक महापंचायत में शामिल नहीं हो सके. युवा नेता अजय सिंह ने कहा कि सुपौल से आए उनके हज़ारों समर्थक जाम के कारण गांधी मैदान नहीं पहुंच पाए. विधायक बबलू देव ने भी आरोप लगाया कि उनके समर्थकों को प्रशासन ने गांधी मैदान तक पहुंचने में काफी परेशान किया.

वहीं दूसरी तरफ शिवानंद तिवारी इस तरह के आरोपों को ख़ारिज़ करते हुए कहते हैं कि यह किसान रैली नहीं, बल्कि गाड़ी रैली थी. इसमें लोग कम, गाड़ियां ज़्यादा थीं. भाजपा अध्यक्ष सी पी ठाकुर ने कहा कि जितने संसाधन लगाए गए, उस हिसाब से भीड़ नहीं आई. बयानों को छोड़ दें तो यह साफ़ है कि नौ मई को एक लाख से ज़्यादा की भीड़ महापंचायत में जुटी थी.

feedback@chauthiduniya.com

मिट्टी का क़र्ज़ उतार पाया तो ख़ुद को भाग्यशाली मानूंगा : दिग्विजय

किसान महापंचायत के प्रमुख नेता एवं बांका के सांसद दिग्विजय सिंह ने कहा है कि चिलचिलाती धूप में गांधी मैदान में जुटी लाखों की भीड़ ने नीतीश सरकार की विदाई तय कर दी है. बटाईदारी के जिस मुद्दे को लेकर हम लोगों ने संघर्ष शुरू किया था, उस पर जनता ने अपनी मुहर लगा दी है. अब यह संघर्ष नीतीश कुमार के हटने तक जारी रहेगा. इस सरकार की उल्टी गिनती शुरू हो गई है. उन्होंने कहा कि उनके साथियों ने दिन-रात मेहनत करके लोगों को यह बताया कि बटाईदारी क़ानून अगर लागू हो गया तो अनर्थ हो जाएगा. हम लोग जनता को समझाने में सफल रहे. नए विकल्प के सवाल पर दिग्विजय सिंह कहते हैं कि हम ज़रूर नया विकल्प देंगे और ऐसा विकल्प देंगे, जो सही मायनों में बिहार को विकास के रास्ते पर ले जाएगा. नया विकल्प ऐसा होगा, जिसमें बिहार की जनता की पूरी भागीदारी होगी. यह पिछले बीस सालों से दुर्दशा झेल रहे बिहार को देश-दुनिया में सम्मान दिलाएगा. दिग्विजय सिंह का कहना है कि संकीर्ण राजनीति ने बिहार का बहुत नुक़सान किया है. इसलिए ढेर सारी चुनौतियां इस राज्य के सामने खड़ी हैं. किसान बदहाल हैं, बिजली नहीं है, शिक्षा और काम के अभाव में पलायन जारी है. विकास का ढिंढोरा पीटा जा रहा है. सूई बनाने तक का उद्योग नहीं लगा, पर राज्य के मुखिया उद्योग रत्न का पुरस्कार ले रहे हैं. अगर अब भी इस राज्य को पटरी पर लाने का ईमानदार प्रयास नहीं किया गया तो यहां की मिट्टी यहां के नेताओं को कभी माफ नहीं करेगी. उन्होंने कहा कि मैं यहां की मिट्टी में पैदा हुआ हूं, इसलिए बिहार का दर्द महसूस करता हूं. यहां की जनता के सहयोग से अगर मिट्टी का क़र्ज़ उतार पाया तो ख़ुद को भाग्यशाली मानूंगा.

चौथी दुनिया

ललन सिंह का इतिहास भी पेशेवर अपराधी वाला रहा है. वह अनंत सिंह से किसी भी मायने में कम नहीं हैं. एक जमाने में ललन सिंह की गिनती इंडियाज मोस्ट वांटेड के तौर पर होती थी.

इसी समाज में पैदा हुई, पली-बढ़ी भोलिया उर्फ पूनम, जिसने नाचने-गाने के पेशे को छोड़कर त्रिस्तरीय पंचायती राज्य के सबसे उच्च सदन ज़िला परिषद के चुनाव में जीतने के लिए काफी मेहनत की.

चौथी दुनिया

सामान्य कोटे के कारण सरगर्मी बढ़ी

नए परिसीमन में बगहा विधानसभा के सामान्य कोटे में आने से प्रमुख दलों में टिकट पाने के लिए होड़ मची है. 2005 के चुनाव में पूर्णमासी राम यहां से जदयू के टिकट पर चुनाव लड़े थे और उनकी जीत हुई थी. बाद में वह गोपालगंज से लोकसभा चुनाव जीतकर सांसद बने. उनके सांसद बनने के बाद यह सीट ख़ाली हो गई. उसके बाद 2009 के उपचुनाव में यहां कैलाश बैठा ने जीत दर्ज़ की.

इस बार बगहा के सामान्य कोटे में आ जाने के कारण राजग के कई दिग्गजों की नज़र इस सीट पर है. जदयू से प्रभात रंजन सिंह, काशी नरेश सिंह, दया शंकर सिंह, राकेश सिंह, भीष्म साहनी आदि की दावेदारी है, तो भाजपा खेमे से गजेंद्रधर मिश्र, रामनगर के विधायक और पूर्व मंत्री चंद्रमोहन राय की भी यहां से चुनाव लड़ने की चर्चा है. विरोधी दल राजद खेमे से पूर्व चेयरमैन सुधीर कुमार गुप्त, ज़िला अध्यक्ष छेदी साहनी, श्याम नारायण यादव तो कांग्रेस खेमे से पूर्व चेयरमैन और मुखिया रह चुके रणजीत राव, पूर्वनगर अध्यक्ष राजेंद्र साह और रामचंद्र प्रसाद आदि के नामों की चर्चा है.

सुधीर कुमार गुप्ता

रणजीत राव

विधानसभा क्षेत्र बगहा

राजद के सुधीर गुप्त की वैश्य समाज में सबसे ज़्यादा पकड़ मानी जाती है. जदयू के काशी नरेश सिंह को राजनीतिक पारी का लंबा अनुभव है. वह सांसद और विधायक बनाने के खेल में माहिर माने जाते हैं. जदयू के प्रत्याशियों में अजय शंकर सिंह का नाम भी चर्चा में है. वह बड़गांव पंचायत के पूर्व मुखिया भी रह चुके हैं. उनके चाचाजी और दादाजी लोहिया विचारधारा के समर्थक और पोषक रहे हैं. इस क्षेत्र में अजय शंकर सिंह एक लोकप्रिय व्यक्ति के रूप में जाने जाते हैं. समाजसेवी आर्ट ऑफ लिविंग के अपर्णा सिंह जो अध्यात्म क्षेत्र में इन दिनों अपना परचम लहरा रही हैं. उनकी भी दावेदारी प्रबल है. भाजपा के गजेंद्रधर मिश्र 1974 के जयप्रकाश आंदोलन में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया और इस क्रम में उन्हें जेल भी जाना पड़ा. उन्हें बेतिया जेल में कैद किया गया था. वह जनसंघ में कई पदों पर, भाजपा में दो बार ज़िलाअध्यक्ष, बगहा बार एसोसिएशन के तीन बार प्रेसीडेंट रह चुके हैं. कांग्रेस के संभावित प्रत्याशी रणजीत राव का कहना है कि अबकी बार बगहा की जनता नीतीश कुमार को ख़ारिज़ कर देगी. क्योंकि एक भी काम नीतीश कुमार ने पूरा नहीं किया है. इसलिए इस बार जीत कांग्रेस की होगी. कांग्रेस के रणजीत राव बगहा नगर परिषद के दो बार चेयरमैन और नरईपुर गांव के मुखिया रह चुके हैं.

कांग्रेस व जदयू को महंगाई ले डूबेगी. जनता ने दोनों को परख़ लिया है. इन दोनों दलों से ग़रीबों का कुछ भला नहीं होने वाला है. जदयू के काशी नरेश सिंह का कहना है. इस बार भी जदयू ही सत्ता में आएगी. क्योंकि नीतीश जनता के विश्वास पर ख़रे उतरे हैं.

वहीं राजद के संभावित प्रत्याशी सुधीर कुमार गुप्ता का कहना है कि कांग्रेस व जदयू को महंगाई ले डूबेगी. जनता ने दोनों को परख़ लिया है. इन दोनों दलों से ग़रीबों का कुछ भला नहीं होने वाला है. जदयू के काशी नरेश सिंह का कहना है. इस बार भी जदयू ही सत्ता में आएगी. क्योंकि नीतीश बाबू जनता के विश्वास पर ख़रे उतरे हैं. आगामी विधानसभा चुनाव में एक बार फिर विकास मुद्दा बनेगा. और लोगों को अच्छी सरकार का चयन करना पड़ेगा. नए परिसिमन के तहत बगहा विधानसभा क्षेत्र में कुल 2,36,000 मतदाता हैं. मतदान के लिए 228 मतदान केंद्र बनाए जाएंगे, जिसमें 125 गांव के मतदाता शामिल होंगे. नए परिसिमन के मुताबिक़ बगहा के दो प्रखंड़ की पांच पंचायत, बगहा नगर परिषद को मिलाकर बगहा विधान सभा का गठन किया गया है. ब्राह्मण, राजपूत, यादव, मुसलमान, बनिया यहां निर्णायक मतदाता होंगे.

प्रो. अरविंद नाथ तिवारी
feedback@chauthiduniya.com

टिकट के लिए मचा घमासान

नीरज कुमार सिंह

चक्रवात प्रभावित किशनगंज विधानसभा में इस समय चुनावी चक्रवात चरम पर है. नए प्रत्याशियों ने जहां जगह-जगह शुभकामनाओं के बैनर पोस्टर लगवाए हैं, वहीं पुराने प्रत्याशी परंपरागत तरीक़े से प्रचार-प्रसार कर रहे हैं. चर्चा में आने के लिए प्रत्याशी अपने मित्र मंडली के साथ गांव में जनसंपर्क अभियान चला रहे हैं. वहीं कुछ ऐसे प्रत्याशी भी हैं, जिन्होंने अभी से ही पटना व दिल्ली में डेरा डालने का काम शुरू कर दिया है. अधिकतर प्रत्याशी जहां दिन से लेकर देर शाम तक जनसंपर्क अभियान करते हैं, वहीं रात में आलाकमान के सामने टिकट के लिए अपने को बेहतर साबित करने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ रहे हैं. प्रत्याशियों का कहना है कि अगर उनको मौक़ा मिला तो वह किशनगंज का कायाकल्प करने के साथ ही जनता के अरमानों पर ख़रे उतरेंगे.

विगत चुनाव में यहां से राजद के प्रत्याशी अख़्तरूल ईमान ने भाजपा के संजीव यादव को हराया था, लेकिन नए परिसीमन में कोचाधामन विधानसभा सृजित हो जाने से यहां की राजनीतिक परिस्थिति एवं समीकरण बदल चुके हैं. वर्तमान में किशनगंज विधानसभा में किशनगंज नगरपरिषद के अलावा पूरे पोठिया प्रखंड के 22 पंचायतों को शामिल किया गया है, जिससे विभिन्न राजनीतिक दलों में टिकट की दावेदारी को लेकर संभावित प्रत्याशियों की संख्या में अचानक इजाफ़ा हो रहा है. यहां कांग्रेस समर्थकों का उत्साह काफी बढ़ा हुआ है. नतीजतन टिकट की दावेदारी में इसहाक़ आलम पटना में तो डॉ. जावेद आज़ाद दिल्ली में जमे हुए हैं.

राजद से टिकट की दावेदारी में हाज़ी अब्दुस सुब्हान का कहना है कि 1977 के जेपी आंदोलन से मुन्ना मुस्ताक के साथ वह राजनीति में आए. उनके सहयोग से कई लोग विधायक बने. वह राजद के किशनगंज में संस्थापक सदस्य हैं साथ ही किशनगंज राजद की परंपरागत सीट है. अपने समर्थन में उन्होंने कहा कि मेरी पत्नी वसीमा ख़ातुन हिंदू बहुल वार्ड-14 से मेरी लोकप्रियता के कारण वार्ड पार्षद बनी. शायरी में माहिर सुब्हान ने कहा कि तुमलोग हुक्मरान हो तो लाओ कोई इंकलाब, आराम से ग़रीबों का घर भी चले हमलोग और कुछ नहीं चाहते हैं. उन्होंने कहा कि मैं सुरजापुरी बिरादरी से आता हूं, जिसकी बहुलता किशनगंज विधानसभा में है. अगर पार्टी से किसी कारणवश टिकट नहीं मिलता है तो मैं निर्दलीय चुनाव लड़ूंगा और चुनाव जीतकर भी दिखाऊंगा. पूर्वमंत्री मो. सुलेमान राजद की ओर से टिकट के लिए प्रबल दावेदार माने जा रहे हैं. समाजवादी विचारधारा से जुड़े मो. सुलेमान राममनोहर लोहिया के कार्यकाल से ही राजनीति में आएं. सर्वप्रथम 1972 में निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में ठाकुरगंज विधानसभा से चुनाव जीते, फिर 1977 में जनता पार्टी के टिकट पर विधायक बने, जिसका 1980 में विघटन हो गया. पुन: 1990 में ठाकुरगंज विधानसभा से चुनाव जीते और लालू यादव के मंत्रिमंडल में कैबिनेट मंत्री का प्रभार मिला. अपने टिकट की दावेदारी के समर्थन में उनका कहना है कि पोठिया हमेशा से ही मेरा बेस कैंप रहा है. पहले ठाकुरगंज विधानसभा में रहने के कारण मैं पोठिया के वोटों से ही जीत दर्ज़ करता था. अब किशनगंज विधानसभा में शामिल हो जाने से मेरी राह और आसान हो गई. क्योंकि किशनगंज नगर क्षेत्र में ही मेरी ससुराल है. वहीं राजद से ही टिकट के एक अन्य प्रमुख दावेदार के रूप में पूर्व ज़िला परिषद अध्यक्ष मो. तसीरउद्दीन का नाम चर्चा में है. उन्होंने कहा कि मैं लगभग 15 वर्षों से राजद से जुड़ा हुआ हूं. मैं तस्लीम साहब के साथ राजद में आया था. अब तस्लीम साहब राजद में नहीं है, लेकिन मैंने राजद को हमेशा मज़बूत किया है. मैं जब ज़िला परिषद में चेयरमैन था, तो विधायक अख़्तरूल ईमान परिषद सदस्य थे. आज वह विधायक हैं. पोठिया से आज भी मेरी पत्नी जनसमर्थन के कारण ज़िला परिषद सदस्य हैं. तसीरउद्दीन से जब यह पूछा गया की अगर सुलेमान साहब को टिकट मिलता है तो क्या आप चुनाव लड़ेंगे? तो उन्होंने कहा कि मैं और पोठिया की जनता सुलेमान साहब का सम्मान करते हैं. अगर उनको टिकट मिलता है तो मैं उनका समर्थन करूंगा, वैसे सुलेमान साहब बीमार चल रहे हैं. स्थानीय लोगों का विचार है कि तासीर साहब को टिकट मिलना चाहिए. भाजपा से टिकट के प्रबल दावेदारों में त्रिलोकचंद्र जैन का नाम चर्चा में है. उनका कहना है कि मैं किशनगंज नगरपरिषद का 2002 से 2007 तक चेयरमैन रहा, वहीं 2003 में विधानपरिषद के चुनाव में मात्र चार वोटों से हारा था. वर्तमान में नगरपरिषद का उपाध्यक्ष हूं.

अब्दुस सुब्हान

त्रिलोक चंद जैन

मोहम्मद सुलेमान

संजय उपाध्याय

राजेश वैद्य

तासीरउद्दीन

विधानसभा क्षेत्र किशनगंज

भाजपा में सुशील मोदी, सांसद शाहनवाज हुसैन, राधामोहन सिंह एवं सांसद उदय सिंह के सहयोग से आगे आने का मौक़ा मिला. पार्टी आलाकमान के निर्णय के कारण मैं वर्तमान विधान परिषद चुनाव नहीं लड़ा. अत: पार्टी के प्रति मेरी निष्ठा को देखते हुए टिकट मुझे ही मिलना चाहिए. हमेशा मैंने ग़रीबों की मदद की है तथा क्षेत्र की ग़रीब जनता के लिए मेरा दरवाज़ा हमेशा खुला रहता है. भाजपा से टिकट के अन्य दावेदारों में राजेश्वर वैद्य का नाम भी सामने आ रहा है. स्थानीय लोगों का कहना है कि वैद्य भाजपा के सबसे पुराने कार्यकर्ता एवं संघ से भी जुड़े रहे हैं. वर्ष 2000 के चुनाव में तस्लीमउद्दीन से सात हज़ार वोटों से हारे थे, जबकि अन्य प्रत्याशियों की जमानत जब्त हो गई थी. राजेश्वर वैद्य ने बताया कि 1974 के जेपी आंदोलन से उन्होंने छात्र राजीनीति में क़दम रखा. जेपी आंदोलन में वह लालू यादव और सुशील मोदी के साथ थे. भाजपा से टिकट की दावेदारी में एक युवा चेहरा संजय उपाध्याय भी हैं. दावेदारी के संबंध में उन्होंने कहा कि वह तीन वर्षों तक पोठिया भाजपा प्रखंड अध्यक्ष पद पर रहे, तीन वर्षों तक प्रखंड भाजपा युवा मोर्चा के अध्यक्ष रहे और वर्तमान में वह पोठिया प्रखंड 20 सूत्री कार्यक्रम के अध्यक्ष हैं. सभी पार्टियों में जब युवा चेहरों को तरज़ीह दिया जा रहा है, तो मेरी भी दावेदारी बनती है. वैसे मैं आलाकमान के सारे निर्णय का पालन करूंगा, लेकिन मेरी दावेदारी को नकारा नहीं जा सकता है.

feedback@chauthiduniya.com

छत देने के नाम पर छीनी जा रही खुशी

साहूकारों, सूदख़ोरों तथा जमींदारों द्वारा आर्थिक शोषण की बात तो होती ही रहती है, लेकिन सरकार द्वारा शोषण हो तो समझ में नहीं आता है. आर्थिक शोषण से मुक्ति दिलाना सरकार का दायित्व है. मगर, आवास के नाम पर केंद्र सरकार का उर्वरक मंत्रालय सैकड़ों लोगों का पिछले सात वर्षों से लगातार आर्थिक शोषण कर रहा है. बेबस ओर लाचार लोग और कोई नहीं बल्कि सिंदरी खाद कारख़ाना, पीडीआईएल और एचएफसी के पूर्व कर्मचारी हैं.

जिन्हें सरकार ने स्वैच्छिक अवकाश देकर सेवा मुक्त कर दिया था. 31 दिसंबर 2002 को इन कर्मचारियों से जब नौकरी छिन गई थी तो उनके सामने बच्चों की शिक्षा एक गंभीर चुनौती थी. सिंदरी में अध्ययनरत बच्चों के लिए सिंदरी में ही आवास की चाहत उनकी मज़बूरी थी. तब एक सामाजिक संगठन द्वारा दिल्ली में की गई राजनीति पहल रंग लाई. सिंदरी में बीएसएस कर्मियों को लीज़ पर आवास आंवटन की सहमति बनी, लेकिन केंद्रीय उर्वरक मंत्रालय ने यहां पेंच फंसा दिया. लीज़ पर आवास आंवटन के लिए सिक्योरिटी मनी की राशि निर्धारित हुई. दो कमरे की सीटी टाइप श्रेणी के लिए 70 हज़ार, दो कमरे एलआईएम, आरएमएल, एमएन श्रेणी के आवासों के लिए 90 हज़ार, के फोर श्रेणी के आवासों के लिए 1.25 लाख, के-7 श्रेणी के लिए 2 लाख, जे टाइप श्रेणी के लिए 3.5 लाख तथा डी टाइप श्रेणी के लिए 5 लाख रुपये सिक्योरिटी मनी निर्धारित हुई. सिक्योरिटी डिपोजिट के अलावा आवासों का किराया प्रतिमाह 100 रुपये से लेकर 700 रुपये तक निर्धारित किया गया. आवास किराया के अलावा म्यूनिसिपल टैक्स तथा विद्युत आपूर्ति के लिए न्यूनतम 387 रुपये मासिक निर्धारित किए गए. सिंदरी में बीएसएस कर्मियों को तत्काल आवास की चाहत थी. देखते-देखते 1200 से ज़्यादा बीएसएस कर्मियों ने लीज़ पर आवास आवंटन के लिए सिक्योरिटी डिपोजिट कर दिया. खाद कारखाना प्रबंधन ने आवास आवंटन के लिए लीज़ की अवधि 11 माह निर्धारित की. लीज़ धारक को प्रत्येक 11 माह पर स्वयं के ख़र्चे से कोर्ट पेपर पर, लीज़ पर आवास के लिए फर्टिलाइज़र कारपोरेशन ऑफ इंडिया से एग्रीमेंट करना पड़ता है. बीते सात वर्षों से यह सिलसिला चला आ रहा है. लीज़ पर आवास आवंटन के लिए पूर्व कर्मचारियों ने जो सिक्योरिटी मनी एफसीआई के खाते में बैंक ड्रॉफ्ट के माध्यम से जमा किया है. इस राशि के ब्याज के वास्तविक हकदार तो डिपोजिट होने चाहिए, लेकिन सिक्योरिटी मनी का ब्याज भी एफसीआई के ख़ाते में जा रहा है. कोई भी लीज़ धारक पांच अथवा दस वर्षों के बाद प्रबंधन को आवास सौंपना चाहेगा तो प्रबंधन उससे आवास लेकर उसके द्वारा जमा किए गए सिक्योरिटी डिपोजिट को ही वापस करेगा. आवास आंवटन की शर्तों के अनुसार सिक्योरिटी डिपोजिट का कोई भी ब्याज डिपोजिटर को नहीं दिया जाएगा. एक तरफ तो लीज़ होल्डर सिक्योरिटी डिपोजिट के ब्याज से वंचित हो रहे है तो दूसरी तरफ आवास का किराया, म्यूनिसिपल टैक्स एवं विद्युत का ख़र्चा अलग से देना पड़ रहा है. लीज़ होल्डरों को दोहरी चपत लग रही है. सिंदरी के दीपक कुमार का कहना है कि लोगों के मजबूरी का एफसीआई नाज़ायज फ़ायदा उठा रहा है. केंद्रीय उर्वरक मंत्रालय सीधे तौर पर सिंदरी में पूर्व कर्मचारियों का आर्थिक शोषण कर रहा है. सिंदरी खाद कारखाना प्रबंधन द्वारा निर्मित प्रत्येक श्रेणी के आवासों का निर्माण 40 वर्ष पूर्व हुआ था. इनमें एल टाइप श्रेणी का आवास 55 साल पुराना है. खाद कारख़ाना के कर्मचारियों के लिए वेलफेयर के तहत बनाए गए आवासों की निर्धारित आयु सीमा 30 वर्ष थी. प्रबंधन ने इन 30 वर्षों में प्रत्येक आवासों की निर्माण लागत कर्मचारियों से लीज़ रेंट या हाउस रेंट के तौर पर वसूल ली. निर्धारित अवधि समाप्त होने के बाद प्रत्येक आवास की वेल्यू शून्य हो चुकी है. बावजूद उर्वरक मंत्रालय द्वारा आवासों के लिए निर्धारित धरोहर राशि का औचित्य समझ से परे है. लीज होल्डर स्वयं के ख़र्चे पर आवास की मरम्मत भी करवाते हैं. सिक्योरिटी डिपोजिट के ब्याज से लीज़ धारकों के आवासों की मरम्मती भी हो जाती है तो राशि सार्थक होती. इस मामले में प्रबंधन भी कुछ कहने से कतराता है.

राजीव रंजन
feedback@chauthiduniya.com

मुंगेर में धरे रह गए विकास के वादे

राज्य की सुशासन सरकार अब अपने पांचवें वर्ष अर्थात चुनावी वर्ष में पहुंच चुकी है. लिहाज़ा अपने कार्यों को लेकर लोगों का विश्वास प्राप्त करने के लिए सुशासन के मुखिया नीतीश कुमार विश्वास यात्रा पर निकल पड़े हैं. साढ़ चार वर्ष के कार्यकाल में विकास की क्या रूप-रेखा बनी, सरकार की कितनी योजनाएं सरज़मीं पर उतरीं और मुख्यमंत्री की घोषणाओं पर कितना अमल हुआ. अब इन सबों की पड़ताल होने लगी है. लोग इस बात की समीक्षा करने लगे हैं कि जिस आशा व विश्वास के साथ बिहार की जनता ने राज्य की बागडोर नीतीश कुमार को सौंपी थी, उस पर वह कितना ख़रा उतरे.

अपने मुख्यमंत्रित्व काल में नीतीश कुमार दो बार मुंगेर पहुंचे और ऐतिहासिक पोलो मैदान में लगभग 800 करोड़ की योजनाओं का शिलान्यास किए. पहली बार वह 10 मार्च 2007 को 576.49 करोड़ की योजना का शिलान्यास किए, जबकि दूसरी बार विकास यात्रा के दौरान 10 फरवरी 2009 को 139.467 करोड़ की योजना मुंगेरवासियों को समर्पित की. विकास यात्रा के दौरान मुख्यमंत्री ने मुंगेर में तीन बड़ी घोषणाएं (मुंगेर में इंजीनियरिंग कॉलेज, पॉलिटेक्निक कॉलेज एवं नगर निगम बनाने) कीं. उसी सभा में राज्य के स्वास्थ्य मंत्री नंदकिशोर यादव ने मुंगेर सदर अस्पताल को 300 बेड वाला अस्पताल बनाने की भी घोषणा की थी. इन घोषणाओं पर अगर नज़र दौड़ाएं तो सरकार ने मुंगेर को नगर निगम बनाने की तो अधिसूचना जारी कर दी, लेकिन वह क़ानूनी दांव-पेच में उलझ कर रह गया. मुख्यमंत्री की अन्य घोषणाएं हवा-हवाई बनकर ही रह गई हैं. मुंगेर में न तो इंजीनियरिंग कॉलेज की नींव पड़ी और न ही पॉलिटेक्निक कॉलेज बनने की प्रक्रिया शुरू हुई है. मुख्यमंत्री की घोषणा के डेढ़ वर्ष बाद भी अब तक इन अभियंत्रण संस्थानों के लिए भूमि का भी चयन नहीं हो पाया है.

> **मुख्यमंत्री की अन्य घोषणाएं हवा-हवाई बनकर ही रह गई हैं. मुंगेर में न तो इंजीनियरिंग कॉलेज की नींव पड़ी और न ही पॉलिटेक्निक कॉलेज बनने की प्रक्रिया शुरू हुई है. मुख्यमंत्री की घोषणा के डेढ़ वर्ष बाद भी अब तक इन इंजीनियरिंग कॉलेज के लिए भूमि का चयन नहीं किया जा सका है.**

थोक भाव में पड़ा है मुख्यमंत्री द्वारा उद्घाटन व शिलान्यास के शिलापट

मुख्यमंत्री नीतिश कुमार ने अपने दो विकास यात्राओं के दौरान ज़िले में जिन योजनाओं का उद्घाटन व शिलान्यास किए उसमें आधी योजनाएं सरज़मीं पर नहीं उतर पाई हैं. मुख्यमंत्री ने 10 मार्च 2007 को मुंगेर सदर आई (आंख) अस्पताल का उद्घाटन किया था. यह भवन तीन साल बाद भी न तो स्वास्थ्य विभाग को सौंपा गया है और न ही यहां आई अस्पताल का सपना पूरा हुआ. विकास यात्रा के दौरान 18 फरवरी 2009 को मुख्यमंत्री ने नौवागढी में पशु अस्पताल भवन का उद्घाटन किया, जो अब तक प्रारंभ नहीं हो पाया है. इसके साथ ही दर्जन भर सामुदायिक सूचना केंद्रों का भी उद्घाटन मुख्यमंत्री के हाथों कराया गया था, जो सभी अधूरे पड़े हैं. अर्थात अधिकारी व अभियंताओं ने राज्य के मुखिया के हाथों अधूरी योजनाओं का उद्घाटन करवा दिया. सबसे अहम बात तो यह है कि मुख्यमंत्री द्वारा विकास यात्रा के दौरान दर्जनों ऐसी योजनाओं का आधारशिला रखा गया, जिसके लिए भूमि तक आवंटित नहीं हुआ है. आज भी मुख्यमंत्री द्वारा शिलान्यास किए गए बरियारपुर पशु अस्पताल इसका उदाहरण है, जहां एक साल बाद भी कार्य प्रारंभ नहीं हो पाया है. मुख्यमंत्री ने ज़िले में जितनी सड़क योजनाओं का आधारशिला रखी. उनमें आधी योजनाएं भी सरज़मीं पर नहीं उतर पाई हैं. पेय जल आपूर्ति योजनाओं का हाल तो काफी चिंताजनक है. हेमजापुर ग्रामीण जलापूर्ति योजना, बरियारपुर ग्रामीण जलापूर्ति योजना, गाजीपुर ग्रामीण जलापूर्ति योजना एवं संग्रामपुर ग्रामीण जलापूर्ति योजना का शिलान्यास 18 फरवरी 2009 को मुख्यमंत्री द्वारा किया गया था, जिसका अब तक कहीं कोई अता-पता नही है. बिहार शिक्षा परियोजना के तहत तीन दर्जन से अधिक विद्यालय भवनों का शिलान्यास मुख्यमंत्री के हाथों कराया गया था, जिसके सभी शिलापट आज भी बीआरसी पूरबसराय के एक कमरे में कुड़े की तरह पड़ा हुआ है. इन योजनाओं का क्या हुआ इसे बताने वाला कोई नहीं. बहरहाल अब जबकि मुख्यमंत्री उन विकास योजनाओं के बुते लोगों के बीच विश्वास यात्रा पर पहुंच रहे हैं तो मुंगेर की जनता को समझ में नहीं आ रहा कि आखिर लोगों का विश्वास मुख्यमंत्री पर कैसे कायम हो. इसलिए आज तक जितने सपने दिखाए गए वे सपने बनकर ही रह गए हैं.

कल्याणी सिंह
feedback@chauthiduniya.com

पेट की आग ने लौटाया पुश्तैनी धंधे की ओर

अपने पुश्तैनी धंधे को छोड़कर पूनम राजनीति के ज़रिए समाज की सेवा करना चाहती थी. लिहाज़ा उसने ज़िला परिषद के चुनाव में भाग्य आजमाया. वह चुनाव जीत भी गईं और ज़िला परिषद की उपाध्यक्ष भी बनीं, लेकिन यह बात वहां के राजनीतिक मठाधीशों को नागवार गुजरी. उन्हें अविश्वास प्रस्ताव के ज़रिए उपाध्यक्ष पद से हटा दिया गया. अब फिर से उसके पास नाचने-गाने के सिवाय कोई दूसरा रास्ता नहीं बचा है.

कहते हैं परिस्थितियां इंसान से क्या-क्या नहीं कराती हैं. हमारे समाज में गणिकाओं को किस तरह उपेक्षा की नज़र से देखा जाता है. इससे हर कोई परिचित है. पेट की ज्वाला और चेहरे की फीकी मुस्कान के ज़रिए यह दिखाने का प्रयास होता है कि उनके साथ सब कुछ ठीक-ठाक है, लेकिन हक़ीकत यह नहीं होता है. इसी समाज में पैदा हुई, पली-बढ़ी भोलिया उर्फ पूनम, जिसने नाचने-गाने के पेशे को छोड़कर त्रिस्तरीय पंचायती राज्य के सबसे उच्च सदन ज़िला परिषद में बैठने के लिए पिछले चुनाव में एड़ी चोटी का जोर लगा दी थी. उसे चुनाव में अपेक्षित सफलता भी मिली. यही नहीं राजनीतिक समीकरण कुछ ऐसा बना कि कल तक रंगमंच पर थिरकने वाली स्टार कलाकार भोलिया ज़िला परिषद की उपाध्यक्ष पद पर जा बैठीं. सदन में तेज तर्रार भाषण एवं अपने कार्यकलापों से सबको प्रभावित करने वाली पूनम को शायद ही इसका इल्म था कि उपाध्यक्ष की कुर्सी पर बैठना समाज के कुछ राजनीतिक मठाधीशों को पच नहीं रहा. और वे उसके पीछे पड़े हैं. इसी बीच अविश्वास प्रस्ताव आया और पूनम देवी ज़िला परिषद उपाध्यक्ष पद से मतदान में हार गई. अब क्या था एक तो पूर्व से चली आ रही ग़रीबी फिर समाज सेवा का नशा दोनों ने माली हालत को और खराब कर दिया. एक तरफ अपनी दो औलादों को उच्च शिक्षा देने की तमन्ना तो दूसरी तरफ तिरस्कार भरे वातावरण से निकल कर सम्मान पाने की ललक ने आर्थिक तौर पर पूनम देवी को झकझोर कर रख दिया. चूंकि ज़िला परिषद सदस्य के पद के लिए मानदेय निर्धारित नहीं है. इसलिए कोचस जैसी महत्वपूर्ण जगह में रहकर वहां से 30 किमी दूर ज़िला मुख्यालय आकर राजनीतिक एवं समाजिक गतिविधियों को चला पाना उसके लिए धीरे-धीरे मुश्किल होता गया. अब उसे पेट की चिंता सताने लगी. पेट में उठती आग एवं बेटा-बेटी की परवरिश उसने फिर से पुश्तैनी धंधे को गले लगा लिया. आनन-फानन में पुराने साजिंदों को वापस बुलाया गया और पूनम देवी ने लोक गायकी का रियाज़ शुरू कर दिया. अब शादी-विवाह के मौके पर पूनम लोक गीत गा कर परिवार का भरण-पोषण करती हैं. इस संदर्भ में पूनम ने कहा कि उन्हें पहले से ही यह डर सता रहा था कि राजनीति और समाज सेवा से कुछ मिलने वाला नहीं है. पेट में उठी आग को शांत करने के लिए पुश्तैनी धंधे के अलावा कुछ और सहारा नहीं होगा. समाजिक उपेक्षा से लड़ने की मद्दा रखने वाली इस महिला ने बगल में बैठे बेटे के सर को सहलाते हुए कहा कि चाहे कुछ भी हो जाए, मेरी औलाद पिछले पेशे की ओर नहीं लौटेगी. उन्हें सरकार से सहायत नहीं मिलने का भी मलाम है. क्योंकि उन्होंने जो मुक़ाम हासिल किया है वह किसी आम घरेलू महिला के बस की बात नहीं, जो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में एक हद तक सच भी मालूम पड़ता है.

पूनम

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

लोजपा-राजद गठबंधन की होगी अग्नि परीक्षा

दिव्या कुमारी

मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की कर्मभूमि और जदयू के मज़बूत गढ़ मोकामा में सेंध लगाने के लिए विपक्षी दलों ने कमर कसनी शुरू कर दी है. राजद-लोजपा गठबंधन के बाद कांग्रेस भी चुनावी अखाड़े में दाव पेंच में माहिर खिलाड़ी को उतारने की तैयारी कर रही है. बात यदि संभावित प्रत्याशियों की करें तो कुछ अप्रत्याशित दावेदार के नाम भी सामने आ रहे हैं. आलाकमान से उनकी प्रथम दौर की बातचीत हो चुकी है. वैसे राजनीतिक परिदृश्य से दूर रहने वाले इन अप्रत्याशित दावेदारों को यदि मौक़ा मिलेगा तो परिणाम के अप्रत्याशित होने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है.

फिलहाल टाल क्षेत्र के बाहुबली अनंत सिंह विधानसभा में मोकामा का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं. विधानसभा चुनावों में अनंत सिंह लगातार दो बार लोजपा प्रत्याशी नलिनी रंजन शर्मा उर्फ ललन सिंह को पटखनी दे चुके हैं. हालांकि अनंत सिंह की छवि यदि बाहुबली और दबंग की है, तो ललन सिंह का इतिहास भी पेशेवर अपराधी वाला रहा है. वह अनंत सिंह से किसी भी मायने में कम नहीं हैं. एक जमाने में ललन सिंह की गिनती इंडियाज मोस्ट वांटेड के तौर पर होती थी. बात यदि लोजपा-राजद गठबंधन की करें तो मोकामा विधानसभा क्षेत्र में इस गठजोड़ को चुनौती मिलेगी. राजद कार्यकर्ताओं की भावनाओं को नज़रअंदाज़ कर अगर लोजपा को सीट दी गई, तो भीतरघात की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है. यदि राजद नेतृत्व के कारण भीतरघात नहीं हुआ तो कार्यकर्ता ज़रूर शिथिल पड़ जाएंगे. इसकी पृष्ठभूमि लोक जनशक्ति पार्टी ने विगत लोकसभा चुनावों के दौरान तैयार की थी. लोकसभा चुनाव में राजद प्रत्याशी रामबदन राय की मदद करने के बजाए सूरजभान और उनके समर्थकों ने जद (यू) प्रत्याशी ललन सिंह के पक्ष में काम किया था. रामबदन राय खुल कर कहते हैं कि विगत लोकसभा चुनाव में सूरजभान ने ही यह कह कर गठबंधन धर्म के विपरीत काम किया था कि मोकामा में गठबंधन नहीं रहेगा. रामबदन की मानें तो सूरजभान ने गठबंधन तोड़ा था, तो फिर उनका प्रत्याशी स्वीकार नहीं होगा. कार्यकर्ताओं की भावनाओं से शीर्ष नेतृत्व को अवगत करा दिया गया है. फिलहाल जो स्थिति है उसमें दोनों पार्टियों के अलग-अलग दावेदार हैं और वे खुद को उम्मीदवार मान रहे हैं. लोकजनशक्ति पार्टी के अंदरखाने भी संशय की स्थिति है. सूरजभान और ललन सिंह सज़ायाफ्ता होने के कारण चुनाव नहीं लड़ सकते. विगत लोकसभा चुनावों के दौरान सूरजभान ने अपनी पत्नी वीणा देवी को नवादा से चुनाव लड़ाया था, जिसमें उन्हें पराजय का मुंह देखना पड़ा. इस बार वीणा मोकाम से चुनाव लड़ सकती हैं. हालांकि ललन सिंह किसी भी सूरत में दावेदारी छोड़ने को तैयार नहीं. इस सीट पर ललन सिंह अपना दावा पेश कर रहे हैं. क्योंकि वह यहां से दो बार चुनाव लड़ चुके हैं. ललन सिंह अपनी पत्नी सोनम देवी को चुनावी मैदान में उतार सकते हैं. एक तीसरा नाम हरिओम उर्फ गुड्डू के रूप में भी उभर रहा है. सूरजभान समर्थकों का एक समूह गुड्डू को बतौर दावेदार उभारने में लगे हैं. हालांकि यह तय है कि फैसला सूरजभान ही करेंगे. अगर ललन के समर्थकों की मानें तो सोनम देवी ही चुनाव लड़ेंगी. क्योंकि सूरजभान सिंह मोकामा में ललन सिंह को बाइपास करने का रिस्क नहीं उठाएंगे. राष्ट्रीय जनता दल में जो चर्चा है, उसमें एक नाम सबसे अधिक चौकाने वाला है. यह नाम है दंत चिकित्सक डॉ. रंजीत का. हालांकि राजनीति में वह नौसिखुआ हैं, लेकिन राजनीति उन्हें विरासत में मिली है. वह समाजवादी नेता स्व. चंद्रशेखर सिंह के पोते हैं और इलाक़े में उनकी अच्छी-ख़ासी पहचान भी है. टिकट के मसले पर डॉ. रंजीत की राजद सुप्रीमो से बातचीत हो चुकी है. आलाकमान ने उन्हें समय आने पर विचार करने का आश्वासन भी दे दिया है. डॉ. रंजीत अपनी दावेदारी को स्वीकारते भी हैं, लेकिन यह ज़रूर कहते हैं कि अभी कुछ कहना जल्दबाजी होगी. क्योंकि फैसला तो पार्टी नेतृत्व को ही करना है. अब एक अहम बात कि डॉ.रंजीत की दावेदारी राजद को सूट ज़रूर करेगी. क्योंकि भाजपा-जदयू और राजद-लोजपा गठबंधन में अभी तक आपराधिक छवि वाले उम्मीदवार ही सामने आ रहे थे. राजद के अंदरखाने दो अन्य नामों पर भी चर्चा हो रही हैं, जिसमें एक नाम है बाढ़ जेल में बंद कुख्यात अपराधी सरगना निरजेश सिंह उर्फ नागा सिंह का और दूसरा नाम है उनकी बहन और मोकामा की प्रखंड प्रमुख निशा देवी का. नाग की उम्मीदवारी विगत विधानसभा चुनाव में लगभग तय थी, लेकिन अंतिम समय में बात कट गई थी. फिलहाल नाग की उम्मीदवारी न्यायालय के रुख पर निर्भर है. पांच दर्जन कांडों में नामजद हो चुके नागा को यदि किसी मामले में सज़ा नहीं हुई और न्यायालय से जमानत मिल गई तो उसे उम्मीदवारी दी जाएगी और यदि न्यायालय से राहत नहीं मिली तो प्रखंड प्रमुख निशा देवी की उम्मीदवारी पर विचार होगा. प्रखंड प्रमुख निशा देवी की इलाक़े में अच्छी छवि है और पकड़ भी, लेकिन राजनीतिक अपरिपक्वता आड़े आ सकती है. हालांकि निशा देवी के समर्थक खुल कर कहते हैं कि यदि लोजपा नेता ललन सिंह की पत्नी सोनम देवी चुनाव लड़ेंगी, तो निशा देवी का चुनाव लड़ना तय है.

विधानसभा क्षेत्र मोकामा

राजद-लोजपा के अतिरिक्त बिहार प्रदेश कांग्रेस कमिटी के प्रदेश महासचिव सरदार गुरुजीत सिंह बतौर पार्टी के संभावित उम्मीदवार कमर कस चुके हैं. वह दो बाहुबलियों के ख़िलाफ़ चुनाव लड़ चुके हैं और सामाजिक गतिविधियों से जुड़े हैं. मोकामा जैसे राजनीतिक तौर पर संवेदनहीन इलाक़े में विभिन्न जनसमस्याओं को लेकर गुरूजीत समय-समय पर सड़क पर उतरते रहे हैं, जिसका लाभ उन्हें ज़रूर मिलेगा. अनिल शर्मा-जगदीश टाइटलर विवाद में ना काहू से दोस्ती ना काहू से बैर वाली स्थिति में रहे गुरुजीत को पांडिचेरी के राज्यपाल सरदार इकवाल सिंह का वरदहस्त प्राप्त है. पूर्व मंत्री श्यामसुंदर सिंह धीरज भी उछल-कुद मचा रहे हैं, लेकिन कांग्रेस के बुरे दिनों में पार्टी छोड़ कर पहले नीतीश कुमार और बाद में लालू यादव की सदारत कबूल करने वाले धीरज को पार्टी से टिकट मिलने की संभावना कम है. धीरज फिलहाल अनिल शर्मा से चिपके हुए हैं और वैसे भी प्रदेश अध्यक्ष के दिन लद जाने की चर्चा आम है. मोकामा विधानसभा चुनाव का अखाड़ा इस बार दिलचस्प होगा. विपक्षी दल सत्ताधारी दल के उम्मीदवार के काट में सशक्त उम्मीदवार देंगे. दृश्य जो हो पर अखाड़ा दमदार होगा क्योंकि पहलवान भी ठोक बजाकर ही चुना जाएगा.

feedback@chauthiduniya.com

बिहार भाजपा के प्रदेश अध्यक्ष बनने पर पद्मश्री डा0 सी0 पी0 ठाकुर को सत्-सत् बधाई

विजय खेमका
प्रदेश उपाध्यक्ष
भाजपा व्यवसाय मंच बिहार, मो. 9431814733

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 24 मई–30 मई 2010

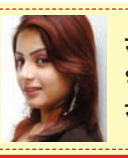

सुहानी हिंदी फिल्मों से लेकर भोजपुरी और तेलगू फिल्मों में एक साथ काम करने की तैयारी में हैं.

दुर्ग फ़तह को लेकर सियासी क़वायद तेज़

विजयेंद्र कुमार

आगामी विधानसभा चुनाव में दुर्ग फतह करने को लेकर मांझी क्षेत्र में सियासी कवायद तेज़ हो गई है. यहां कुछ पुराने चेहरे को छोड़ दें तो अधिकांश युवा पीढ़ी के दावेदार नज़र आ रहे हैं. वे मांझी क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने के लिए अपनी मुहिम में लगे हुए हैं. वहीं पुराने प्रत्याशी अपनी सियासी वज़ूद को कायम रखने के लिए अपने तरीके से कील–कांटे को दुरुस्त करने में लगे हैं. राजनीतिक कवायद का आलम यह है कि वर्षों से मांझी प्रखंड के प्रमुख और उपप्रमुख की कुर्सी पर क़ब्ज़ा जमाए सत्तापक्ष के सिपहसलारों को अपनी कुर्सी से हाथ धोना पड़ा. वहीं दूसरी तरफ उनकी जगह विरोधी गुट के दो नए चेहरों को काबिज़ कराकर नए सियासी चाल का संकेत दिया गया है. प्रमुख एवं उपप्रमुख हटाओं अभियान की कमान पूर्व सांसद प्रभुनाथ सिंह के खासमखास रहे पूर्व मुखिया जीतेंद्र कुमार सिंह संभाले हुए थे. चुनावी बिगुल बजने में अभी देर है. मगर, हर दलों में दावेदारों की लंबी फेहरिस्त है. ऐसी हालत में एक ही बिरादरी के कई संभावित उम्मीदवार चुनाव मैदान में कूदने को आतुर हैं. वैसे लोग भी हैं, जो टिकट नहीं मिलने पर स्वतंत्र रूप से चुनाव लड़ने को अमादा हैं.

नए परिसीमन के तहत मांझी विस क्षेत्र में कुल 36 पंचायतों को शमिल किया गया है, जिनमें मांझी प्रखंड के 18, जलालपुर के 15, बनियापुर प्रखंड के 3 पंचायत को शामिल किया गया है. इस क्षेत्र में मतदाताओं की कुल संख्या 2,18000 के क़रीब है. जिसमें राजपूत मतदाओं की संख्या सबसे अधिक है. संख्याबल के लिहाज से राजपूत–60 हज़ार, यादव–40 हज़ार, ब्राह्मण–22 हज़ार, मुसलमान–12 हज़ार, कोइरी–20 हज़ार और दलित–22 हज़ार के साथ शेष अन्य जाति के मतदाता हैं.

वर्तमान में मांझी विस क्षेत्र पर जदयू विधायक एवं नीतीश सरकार में गन्ना विकास राज्य मंत्री गौतम सिंह का क़ब्ज़ा है. उन्होंने 2005 के विस चुनाव में कांग्रेस के प्रो.रविंद्र नाथ मिश्रा को कुछ सौ वोटों के अंतर से शिकस्त देकर इस सीट को जदयू के पाले में डाल दिया था. विगत लोकसभा चुनाव में पूर्व मंत्री प्रो.मिश्रा कांग्रेस का हाथ छोड़कर बसपा के टिकट पर लोकसभा में अपनी क़िस्मत आजमाए थे. बहरहाल वह पुन: कांग्रेस में आ गए हैं. वापसी के बाद क्षेत्र में उन्हें कांग्रेस के संभावित उम्मीदवार के तौर देखा जा रहा है, जबकि कांग्रेस पार्टी से नए चेहरों में कंप्यूटर इंजीनियर राजा प्रताप सिंह उर्फ उब्लू सिंह की चर्चा जोरों पर है. गांव में इनका जनसंपर्क अभियान परवान चढ़ता नज़र आ रहा है. कांग्रेस महासचिव राहुल गांधी के विचारों को लोगों तक पहुंचाना उनके कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य बन गया है. इसके अलावा कांग्रेस पार्टी से मनोज कुमार तिवारी का नाम भी सामने आ रहा है.

जितेंद्र कुमार सिंह

केशव सिंह

ओम प्रकाश प्रसाद

विधानसभा क्षेत्र
मांझी

राजा प्रताप सिंह

विजय प्रताप सिंह

राजद के सशक्त एवं प्रबल दावेदार के रूप में युवा राजद नेता विजय प्रताप सिंह उर्फ चुनू सिंह की सक्रियता आम मतदाताओं के बीच खासी चर्चा में है. राजद के सभी कार्यक्रमों में शामिल होकर वह अपनी दावेदारी को मजबूत करने में जुटे हैं. जनता की अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए उनका चुनाव लड़ना लगभग तय है. राजद के दावेदार के रूप में प्रो. ओम प्रकाश सिंह के नाम की भी चर्चा है. वह विगत चुनाव में सजपा के उम्मीदवार के तौर पर मांझी से चुनाव लड़े थे.

मांझी क्षेत्र की राजनीति में अपनी प्रभावशाली एवं सशक्त भूमिका अदा करने वाले पूर्व मुखिया जीतेंद्र कुमार सिंह की दावेदारी को भी नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता है. वह आगामी विस चुनाव में पूरे दमखम से चुनाव में उतरने के मूड में है. उनका मानना है कि नीतीश सरकार की अफसरशाही से आम जनता त्रस्त हैं. वह इससे मुक्ति चाहती है. राजद का जनाधार एक बार फिर बढ़ा है और उसका लाभ भी उन्हें अवश्य मिलेगा. वह दाऊदपुर में स्थापित नंदलाल सिंह डिग्री कॉलेज के संस्थापक स्व. नंदलाल सिंह के बेटे हैं. वह पूर्व सांसद प्रभुनाथ सिंह के क़रीबी बताए जाते हैं. इसके अलावा नए दावेदारों में बलेसरा पंचायत के मुखिया सह अखिल भारतीय किसान सभा के ज़िला मंत्री ओमप्रकाश प्रसाद का जनसंपर्क अभियान पूरे शबाब पर है. राजनीति शास्त्र में स्नातक प्रसाद ग़रीब मतदाताओं के बीच काफी लोकप्रिय माने जाते हैं. वहीं दूसरी ओर लोकजनशक्ति पार्टी के एकमात्र दावेदार के रूप में लोजपा के प्रदेश प्रवक्ता केशव सिंह का नाम सामने आ रहा है. प्रदेश की लोजपा राजनीति में उनकी अच्छी पकड़ है. अन्य प्रमुख दावेदारों में बसपा से मांझी भाग–2 के ज़िला पार्षद एवं पूर्व मुखिया सुरेंद्र प्रसाद गुप्ता, पूर्व विधायक बुद्धन प्रसाद यादव और उमाशंकर सिंह का नाम सुनने में आ रहा है.

> नए परिसीमन के तहत जलालपुर विस क्षेत्र का अस्तित्व समाप्त हो जाने के कारण पूर्व मंत्री एवं भाजपा नेता जनार्दन सिंह सिग्रीवाल की निगाहें इस क्षेत्र पर टिकी हुई हैं.

नए परिसीमन के तहत जलालपुर विस क्षेत्र का अस्तित्व समाप्त हो जाने के कारण पूर्व मंत्री एवं भाजपा नेता जनार्दन सिंह सिग्रीवाल की निगाहें इस क्षेत्र पर टिकी हुई हैं. मांझी विस क्षेत्र उनके अगले चुनाव का कुरूक्षेत्र के रूप में जनमानस के सामने दिखता है. हालांकि सिग्रीवाल आगामी चुनाव क्षेत्र को लेकर अपने पत्ते नहीं खोल रहे हैं. मगर, मांझी क्षेत्र में उनकी आवाजाही शुरू हो गई है. बहरहाल आगामी विस चुनाव को लेकर क्षेत्र में राजनीति सरगर्मी तेज़ हो गई है. वर्तमान में इस सीट पर सत्तापक्ष के जदयू के मंत्री गौतम सिंह का आधिपत्य होने की वजह से राजग गठबंधन के तरफ से दावेदारों का अभाव है, लेकिन विरोधी पक्ष की राजनीति से जुड़े संभावित उम्मीदवारों की कतारें काफी लंबी हैं, जिसमें एक ही बिरादरी के दावेदारों का भरमार है. गठबंधन की राजनीति की स्थिति में सीटों के तालमेल को लेकर दावेदारों के बीच ऊहापोह की स्थिति कायम है. बावजूद दावेदारों के बीच घमासान को लेकर आम मतदाताओं में असमंजस की स्थिति व्याप्त हो रही है.

feedback@chauthiduniya.com

सुहानी का सुहाना सफ़र

मिस आंध्र प्रदेश 2005 का ब्यूटी खिताब जीत चुकी सुहानी का सुहाना दौर शुरू हो चुका है. बतौर चाइल्ड आर्टिस्ट अपने करियर का आगाज करने वाली सुहानी हिंदी फिल्मों से लेकर भोजपुरी और तेलगू फिल्मों में एक साथ काम करने की तैयारी में हैं. हालांकि यह बात भी सही है कि एक समय में एक ही नाव पर सवारी करनी चाहिए, दो नाव पर सवारी करने से कुछ भी हासिल नहीं होता है. बतौर उदाहरण कई भोजपुरी तारिकाओं का नाम लिया जा सकता है. जिन्हें पछताने के सिवाय कुछ भी हाथ नहीं लगा. कहीं सुहानी का हश्र भी उनके जैसा ही न हो जाए, लेकिन देखने में जितनी मासूस लगती है सुहानी हक़ीक़त में उतनी है नहीं. क्योंकि वह एक-एक कद्म सोच समझ कर उठा रही हैं. उन्होंने बॉलीवुड और दक्षिण भाषा की फिल्मों में भी अपनी क़िस्मत आज़माई, लेकिन ज़्यादातर उनके द्वारा निभाए गए किरदार चाइल्ड आर्टिस्ट के ही थे. इसलिए उनके बारे में अभी से कोई राय नहीं बनाई जा सकती है. अभी तो उन्हें बहुत कुछ साबित करना है. पर इतना ज़रूर कहा जा सकता है कि उनका फ्रेश चेहरा और मादक काया दर्शकों पर जादू चला सकता है. जादू इसलिए, क्योंकि इतनी छोटी सी उम्र में ही सुहानी को कई पुरस्कार मिल चुके हैं. इन सबके जरिए वह कम से कम निर्माता निर्देशकों में अपनी अच्छी छवि बनाने में कामयाब रही हैं. सुहानी कहती हैं कि उन्होंने अपने करियर में कई तरह के विज्ञापन और फिल्मों में काम किया है. जिसमें उन पर फिल्माए गए बीएसएनएल और आइडिया के विज्ञापन काफी चर्चित हुए हैं. आपको बता दें कि सुहानी सैमसंग और इंटरनेशनल फिल्म फेस्टिवल में भी कैटवॉक कर चुकी हैं. इतना ही नहीं वह हिंदी फिल्म कुछ तुम कहो कुछ हम कहें में एक काफी दमदार किरदार में नज़र आई थीं. सुहानी इस समय भोजपुरी फिल्मों में अपनी जगह बनाने में जुटी हैं. हालांकि उन्होंने साउथ की कुछ फिल्मों के ऑफर भी स्वीकार किए हैं, पर उनका पूरा ध्यान भोजपुरी इंडस्ट्री में लगा हुआ है. उनका मानना है कि भोजपुरी फिल्मों का आज अपनी ही मुकाम है. यह इंडस्ट्री सिर्फ़ देश में ही नहीं बल्कि विदेश में अपना एक खास दर्शक वर्ग बना रही है. इसलिए यहां बतौर अभिनेत्री अपने करियर के लिए बेहतर प्लेटफॉर्म मिलेंगे. इसका मतलब, अब उनके जलवे भोजपुरी फिल्मों में ही दिखाई देंगे. चलिए उम्मीद करते हैं सुहानी के इस सफर में दर्शक भी उनका हर कदम पर साथ दें.

चौथी दुनिया ब्यूरो

feedback@chauthiduniya.com

ISO 9001:2000 Certified

World Standard Quality Now Available in India

Italian International Paints

Long Life for Paints & Walls

ITALIAN Wall Putty

* Made from DPMC
* Marvelous White
* Super Smoothness
* 100% Damp proof
* 100% Crack proof
* World Class Packing

World Standard

ITALIAN

Decorative Premium

WHITE CEMENT

welcome

ITALIAN International Paints.

Plot No.8, 2nd Floor, Nitin Palace, CHANDKHEDA, Near-O.N.G.C.IRS, Ahmedabad,Pin-382424(Gujarat)

Slight Costly but Superior

Fax No.079-23972402 / 033-25224090

चौथी दुनिया

मध्य प्रदेश

छत्तीसगढ़

दिल्ली, 24 मई–30 मई 2010

www.chauthiduniya.com

प्रभात झा

काँटों भरा ताज

भाजपा हाईकमान ने प्रदेश संगठन की ज़िम्मेदारी तो सौंप दी है, लेकिन नवनियुक्त अध्यक्ष प्रभात झा की राह में चुनौतियों की भरमार है. एक तरफ राज्य सरकार की कार्यशैली से उपजा जनाक्रोश है, दूसरी तरफ गुटबाज नेता. देखना यह है कि प्रभात इस नए दायित्व को किस हद तक निभा पाते हैं.

संध्या पाण्डे

तीस साल पहले रोज़गार की तलाश में बिहार से ग्वालियर आए प्रभात झा ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की विचारधारा से जुड़े दैनिक समाचारपत्र स्वदेश में एक पत्रकार के रूप में काम करना शुरू किया. थोड़े ही समय में वह भारतीय जनता पार्टी और संघ परिवार के दिग्गज नेताओं के संपर्क में आ गए. इसके बाद उन्हें भाजपा की शीर्ष नेता विजयाराजे सिंधिया के नजदीक पहुंचने में सफलता मिली और यहीं से उनके मन में राजनीतिक महत्वाकांक्षा बलवती होने लगी. प्रभात झा को भाजपा में अपनी पहचान बनाने में ज़्यादा समय नहीं लगा. संघ एवं भाजपा के शीर्ष नेताओं को अपनी वाणी और व्यवहार से शीशे में उतारने में माहिर प्रभात ने भाजपा की चुनावी राजनीति में भाग लेना शुरू कर दिया. चूंकि वह पत्रकार रहे, इसलिए प्रचार कार्य, प्रेस नोट बनाना, नेताओं के भाषण तैयार करना और चुनावी मुद्दे उछालना अच्छी तरह जानते हैं. भाजपा नेताओं ने उनका पूरा लाभ उठाया और उन्हें पूरा मौक़ा भी दिया. प्रभात झा ग्वालियर से भोपाल पार्टी मुख्यालय में भेज दिए गए और यहां उन्होंने प्रचार कार्य का ज़िम्मा संभाल लिया.

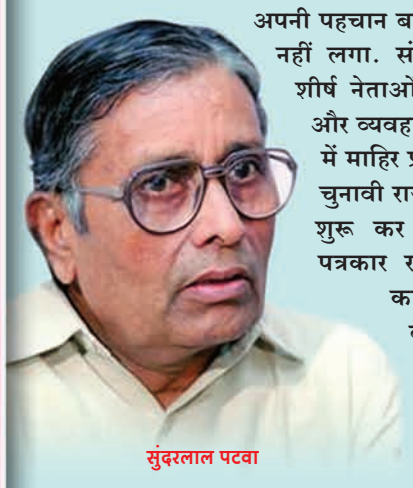

सुंदरलाल पटवा

जिन दिनों प्रभात भोपाल में थे, भाजपा के अधिकतर पुराने दिग्गज नेताओं का भोपाल से नाता टूट गया था या किसी कारण वे राज्य में पूरा समय नहीं दे पा रहे थे. ऐसे में नए कार्यकर्ताओं की टीम में प्रभात अपनी जगह बनाने में सफल हो गए.

साध्वी उमा भारती को भी पार्टी में कुछ भरोसेमंद और क्षमतावान नेताओं की ज़रूरत थी. प्रभात झा ने मौक़ा देखकर उमा भारती की टीम में प्रवेश पा लिया. अपनी बुद्धिमत्ता से वह साध्वी के काफी नजदीक हो गए. उमा भारती का सहारा लेते ही प्रभात राज्यसभा में बैठने का सपना देखने लगे थे, लेकिन उमा की भाजपा से विदाई हो गई. इसके बाद उन्होंने शिवराज सिंह चौहान का दामन पकड़ना चाहा, लेकिन शिवराज की टीम में उनके लिए कोई स्थान नहीं था, क्योंकि ज़मीनी राजनीति से जुड़े शिवराज सिंह नए आदमी पर जल्दी भरोसा नहीं करते हैं. तब शिवराज सिंह संगठन में प्रभावी नेता थे एवं पार्टी के प्रदेश अध्यक्ष. इससे पहले वह राष्ट्रीय महासचिव थे. राजनाथ सिंह पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष बने तो अपने पुराने संपर्कों का लाभ उठाकर वह दिल्ली मुख्यालय में प्रचार प्रकोष्ठ एवं चुनाव अभियान संचालन समिति में शामिल हो गए. लोकसभा चुनाव में वह अपनी सेवाएं देने के साथ-साथ दिल्ली के नेताओं के काफी नजदीक आ गए. इन्हीं नजदीकियों की बदौलत प्रभात झा मध्य प्रदेश से राज्यसभा के सदस्य बने. राज्यसभा सदस्यता पाने के बाद वह मध्य प्रदेश की राजनीति में शीर्ष पर पहुंचने के लिए व्याकुल रहने लगे. इसी बीच मध्य प्रदेश भाजपा के अध्यक्ष नरेंद्र सिंह तोमर लोकसभा सदस्य बन गए और दिल्ली में पार्टी के महासचिव भी बना दिए गए. तब उनके स्थान के लिए कई नेता जुगत भिड़ाने लगे, लेकिन गुपचुप प्रभात झा ने संघ एवं भाजपा के शीर्ष नेताओं को जिस प्रकार राजी किया और अपनी उम्मीदवारी पक्की की, वह उनकी राजनीतिक चतुराई की एक अच्छी मिसाल है.

अध्यक्ष पद के लिए कई उम्मीदवार थे. सबने अपनी-अपनी दावेदारी के लिए कई अनूठे तर्क दिए. किसी ने आदिवासी अध्यक्ष की मांग उठाई तो किसी ने महिला अध्यक्ष या दलित अध्यक्ष बनाने की मांग पर ज़ोर देकर अपने पक्ष में जनमत बनाना चाहा. बताते हैं कि प्रभात झा की राह में रोड़े अटकाने वाले कई नेता पर्दे के पीछे से उनके प्रतिद्वंद्वियों को ताक़त देने का काम कर रहे थे. चुनाव पूर्व तक लगा कि फग्गन सिंह कुलस्ते मैदान में ताल ठोकेंगे, लेकिन जब नेताओं को लगा कि कुलस्ते मैदान में उतरने की हिम्मत नहीं रखते हैं तो उन्होंने इंदौर की सांसद सुमित्रा महाजन को महिला अध्यक्ष के नाम पर आगे कर दिया. आठ मई को चुनाव के दिन सुमित्रा महाजन ने बाकायदा अपना नामांकन पत्र दाखिल किया, लेकिन जब उन्हें लगा कि उनके विरोध से काम बनने वाला नहीं है और उन्हें चुनाव लड़ने के लिए भड़काने वाले नेता ही नामांकन वापस लेने के लिए मना रहे हैं तो उन्होंने अपना नामांकन वापस ले लिया. श्रीमती महाजन ने पार्टी की रीति-नीति एवं चुनाव प्रक्रिया पर ऐतराज किया और कहा कि यह भाजपा में ही हो सकता है कि किसी कोने में चुपचाप काम करने वाले कार्यकर्ता को अध्यक्ष बना दिया जाता है. शुरुआत में श्रीमती महाजन ने ऑफ दी रिकार्ड बहुत कुछ कहा और प्रभात झा को अध्यक्ष पद की उम्मीदवारी के योग्य नहीं माना. उन्हें इस बात पर आपत्ति थी कि प्रभात संगठन में वेतनभोगी कार्यकर्ता थे और ज़मीनी कार्यकर्ताओं से उनका कोई संपर्क नहीं है.

दूसरे दिन भोपाल में पार्टी कार्यालय पहुंचने के बाद उन्होंने पत्रकारों से कहा कि अध्यक्ष पद के चुनाव को लेकर उनकी नाराज़गी थी और वह जायज़ थी, लेकिन प्रभात झा से उनका कोई व्यक्तिगत विवाद नहीं है. प्रभात ने पार्टी कार्यालय में महाजन की उपस्थिति का लाभ उठाया और उनके पैर छूकर आशीर्वाद लिया. उदारमना सुमित्रा ने प्रभात को तत्काल शुभकामना और सहयोग का आश्वासन देकर संतुष्ट कर दिया. अब प्रभात झा प्रदेश अध्यक्ष बन गए हैं, लेकिन उनका रास्ता चुनौतियों भरा है. प्रभात की समझदारी पर संदेह नहीं किया जा सकता. उन्होंने अपनी पहली पत्रकार वार्ता में ही जिस प्रकार से सार्वजनिक जीवन में सादगी, पारदर्शिता और भ्रष्टाचार मुक्त संस्कृति पर ज़ोर दिया है, उससे उनके अंतर्मन की भाषा पढ़ी जा सकती है. प्रभात ऐसे समय में अध्यक्ष बने हैं, जब प्रदेश की भाजपा सरकार पर भ्रष्टाचार के लगातार आरोप लग रहे हैं. चुनाव में बिजली, पानी एवं बेरोज़गारी के मुद्दे उछालने वाली भाजपा ने सरकार बनने के बाद इन समस्याओं के समाधान के लिए कुछ भी नहीं किया. केवल केंद्र पर असहयोग का आरोप लगाकर मुख्यमंत्री और संगठन के नेता जनता को भ्रमित करते रहे. जनता भी सब जानती है. उधर, प्रभात झा में वह दम नहीं है कि वह भाजपा सरकार की दिशा और दशा बदल सकें, क्योंकि मुख्यमंत्री शिवराज सिंह की खुद अपनी सरकार पर कोई पकड़ नहीं है. राज्य में समस्याएं बढ़ती जा रही हैं और जनता में असंतोष भी. भाजपा संगठन भी अब पहले जैसा अनुशासित, कर्मठ और जनसेवी नहीं रह गया है. कुशाभाऊ ठाकरे, प्यारे लाल खंडेलवाल जैसे सर्वमान्य और निर्विवाद नेता भी अब नहीं हैं. वरिष्ठ नेताओं में सुंदर लाल पटवा भाजपा में गुटबाज़ी की राजनीति के लिए बदनाम रहे हैं. कैलाश जोशी आत्मसंतुष्ट हैं और वह दूसरों के मामलों से दूर रहते हैं.

आज जो संगठन मंत्री हैं, उनकी मान्यता ठाकरे या प्यारे लाल जैसी नहीं है. एक-दो संगठन मंत्री तो बदनाम होकर पद से हट चुके हैं. ऐसे में प्रभात झा को अपनी टीम बनानी होगी और काम करना होगा. लेकिन लगता नहीं है कि मुख्यमंत्री और अन्य नेता प्रभात को अपनी टीम बनाने देंगे. शिवराज इतने समझदार तो हैं कि वह अब पार्टी और संगठन दोनों पर अपना वर्चस्व कमज़ोर नहीं होने देंगे. ऐसे में प्रभात झा को अपने स्वभाव के अनुरूप मिलजुल कर काम करना होगा. उन्हें सबसे पहले अपने घर के अंदर अपनों से ही निपटना होगा. दरअसल, झा प्रदेश में काफी समय तक काम कर चुके हैं और उनके परिचित उनकी कार्यशैली भी जानते हैं. कम से कम वह रबर स्टैंप बनकर तो काम नहीं कर सकते. स्थापित नेताओं को डर है कि प्रदेश में एक और पावर सेंटर न डेवलप हो जाए. इन नेताओं की यही चिंता प्रभात के विरोध का कारण थी. प्रभात झा को उक्त नेता दिल से कितना सहयोग देंगे, यह तो समय बताएगा, पर सब कुछ आसानी से चलने लगेगा, कहना मुश्किल है. प्रभात ने क़रीब आठ साल पहले प्रदेश छोड़ा था, तबसे अब तक काफी कुछ बदल चुका है. आठ साल पहले जो जूनियर माने जाते थे, वे अब काफी पावरफुल हो चुके हैं. प्रभात को इनसे तालमेल बैठाना है, सबको साथ लेकर चलना है और अपने खास लोगों की टीम भी नए सिरे से तैयार करनी है. उनकी ताज़पोशी के दौरान जो बातें हुईं, वे केवल सुनने में ही अच्छी थीं. वरिष्ठ कार्यकर्ता जानते हैं कि कौन किसे कितना सहयोग करेगा. प्रभात झा से भी कोई बात छिपी नहीं है. उनकी छवि ज़मीन से जुड़े अध्ययनशील और बेबाक राजनेता की रही है. पार्टी लाइन को आगे रखकर चलने से ही उन्हें यह पुरस्कार मिला है. अब उन पर संगठन को विस्तार देने की ज़िम्मेदारी है. इसे निभाने में वह किस हद तक सफल हो पाएंगे, यह तो सिर्फ़ समय बताएगा. फ़िलहाल, नेता उनके साथ भले न हों, लेकिन संघ के कारण पार्टी नेतृत्व उनके साथ है.

सुमित्रा महाजन

जिन दिनों प्रभात भोपाल में थे, भाजपा के अधिकतर पुराने दिग्गज नेताओं का भोपाल से नाता टूट गया था या किसी कारण वे राज्य में पूरा समय नहीं दे पा रहे थे. ऐसे में नए कार्यकर्ताओं की टीम में प्रभात अपनी जगह बनाने में सफल हो गए.

feedback@chauthiduniya.com

बाणासुर द्वारा स्थापित शिव की सोने की प्रतिमा स्थित है. पुरातत्व विभाग ने 77 टीलों में से अभी तक केवल दो ही टीलों की खुदाई की है.

मोटरन्यूरॉन नामक एक नई बीमारी इस समय भारत के कई कस्बों में अपना घर बनाती जा रही है. चिकित्सा विज्ञान के पास अभी इसका कोई इलाज नहीं है.

सार-संक्षेप

बुंदेलखंड में दुल्हन ख़रीदना मजबूरी

मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश में फैले पिछड़े और गरीब अंचल बुंदेलखंड में स्त्री-पुरुष लिंगानुपात इस बुरी तरह बिगड़ गया है कि अब विवाह योग्य युवकों को अपने लिए दुल्हन पाना मुश्किल हो गया है. इस पिछड़े और सुविधाहीन अंचल में जिन गांवों में बिजली, पानी और सड़क सुविधाओं की कमी है, उन गांवों में कोई भी अपनी बेटी या बहन का विवाह करने के लिए तैयार नहीं होता है. सुविधाहीन गांव के बारे में आम बुंदेलखंडी लोगों का मानना है कि इन गांवों में बेटी का विवाह करने के बाद उसका पूरा जीवन पानी ढोने में बर्बाद हो जाता है, क्योंकि कई गांवों में पांच से दस किलोमीटर दूरी से पानी लाना पड़ता है. इन हालातों के चलते बुंदेलखंड में अब लड़कियों की ख़रीद-फ़रोख्त का प्रचलन बढ़ रहा है. कई लोग अपने युवा पुत्रों के लिए दुल्हनें ख़रीदकर ला रहे हैं. शादी के लिए उड़ीसा और बिहार से दलालों के ज़रिए गरीब घर की लड़कियों को ख़रीदा जा रहा है, साथ ही बुंदेलखंड के देहाती इलाक़ों से ही बहला-फुसलाकर, अगवा करके अथवा ख़रीदकर औरतों को रखैल बनाकर रखा जा रहा है. हाल ही में छतरपुर ज़िले के [illegible] थाने की पुलिस ने एक आदिवासी विवाहित युवती सुनयना की बिक्री का मामला उजागर किया है. यह तो महज एक उदाहरण है, इस क़िस्म की घटनाएं बुंदेलखंड में आए दिन हो रही हैं. पिछले दो वर्ष के दौरान बुंदेलखंड के छतरपुर, टीकमगढ़, पन्ना, दमोह, और सागर ज़िलों में हज़ारों की संख्या में उड़ीसा समेत देश के विभिन्न इलाक़ों से दुल्हनों को ख़रीदकर लाया गया. मीडिया रिपोर्ट्स के अनुसार छतरपुर पुलिस रेंज में पदस्थ रहे पुलिस उपमहानिरीक्षक वरुण कपूर ने खुलकर स्वीकारा था कि छतरपुर ज़िले में कम से कम पांच हज़ार ऐसी महिलाएं मौजूद हैं, जिन्हें पत्नी बनाने के लिए लोग ख़रीदकर लाए हैं. भले ही बुंदेलखंड में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की संख्या कम हो, मगर इसके बावजूद इस इलाक़े से भी युवतियों को महानगरों में ले जाकर बेचा जा रहा है. शादी के इच्छुक लोगों को ख़रीदकर दुल्हनें दिलाने तथा बुंदेलखंड से युवतियों को बरगलाकर अथवा अगवा करके महानगरों में जाकर बेचने के काम में कई गिरोह लंबे अरसे से जुटे हुए हैं. ऐसे गिरोहों का बुंदेलखंड में कई बार पुलिस ने पर्दाफ़ाश भी किया है. इसके बावजूद ख़रीद-फ़रोख्त का कारोबार जारी है.

करोड़ों रुपये का ऋण हजम करने वाली कंपनियों के ख़िलाफ़ कार्यवाही

मध्य प्रदेश सरकार के औद्योगिक केंद्र विकास निगम के 719 करोड़ रुपयों के ऋण घोटाले के मामले में अब अदालती कार्यवाही तेज़ हो गई है. राज्य सरकार के आर्थिक अपराध अनुसंधान ब्यूरो की ओर से शुक्रवार को भोपाल की अदालत में मुंबई की जीके एक्ज़िम लिमिटेड कंपनी के ख़िलाफ़ पूरक अभियोग पत्र पेश किया गया. इस कंपनी ने 1999 में 23 करोड़ रुपया आईसीडी के रूप में लिए थे, लेकिन कंपनी ने अब तक न तो मूल राशि चुकाई है और न ही उस पर देय ब्याज चुकता किया है. इतना ही नहीं, यह कंपनी अब बंद हो चुकी है. मध्य प्रदेश सरकार का 719 करोड़ रुपयों का ऋण घोटाला काफ़ी चर्चित रहा है. कांग्रेस शासन में दिए गए इस ऋण के मामले में भाजपा शासन में जांच शुरू हुई और इसके बाद अदालती कार्यवाही शुरू हुई. इस बहुचर्चित घोटाले में पूर्व मंत्री एवं निगम के तत्कालीन अध्यक्ष राजेंद्र कुमार सिंह, पूर्व मंत्री राजेंद्र नाहटा, निगम के तत्कालीन प्रबंध संचालक एमपी राजन, संचालक आईएएस अजय आचार्य और जेएस राममूर्ति के अलावा 42 निजी कंपनियों के ख़िलाफ़ आर्थिक अपराध का प्रकरण दर्ज किया था. इन कंपनियों में अर्चना एयरवेज़, बीएसआई लिमिटेड, मेसर्स अल्पाइन इंडस्ट्रीज़, मेसर्स सिद्धार्थ ट्यूब्स लिमिटेड, ईशर फाइनेंस प्राइवेट लिमिटेड, ईशर एग्रो लिमिटेड, ईशर आयरन एंड स्टील लिमिटेड, हेरिटेज इंवेस्टमेंट प्राइवेट लिमिटेड, मेसर्स सिल्पेक्स लिमिटेड और क्लिक निक्सन लिमिटेड के विरुद्ध पूर्व में चालान पेश किया जा चुका है.

मंत्री के संपत्ति विवरण से नया विवाद

मध्य प्रदेश शासन के आदिम जाति कल्याण विभाग के मंत्री जगन्नाथ सिंह द्वारा विधानसभा में प्रस्तुत किया गया संपत्ति का विवरण विवादों में है. स्थानीय स्तर पर यह माना जा रहा है कि मंत्री जी ने संयुक्त परिवार की बहुतेरी संपत्ति का विवरण नहीं दिया है. जैसे उनके पुत्र डॉ. रवींद्र सिंह के नाम गैस एजेंसी, राजनीतिक प्रभाव से लिए गए पेट्रोल पंप, मिट्टी के तेल की डीलरशिप, स्वयं मंत्रीजी के नाम रजिस्टर्ड टाटा सफारी, पुत्र प्रभात सिंह के नाम क्रय की गई बोलेरो और तीन पुत्र वधुओं के नाम दर्ज 22 किलो सोना और 2.500 किलो चांदी भी सदन के ब्यौरे में नदारद है. इसके अलावा ग्राम [illegible] पटवारी हल्का चितरंगी में रवींद्र कुमार सिंह, प्रभात कुमार सिंह और अरुण कुमार सिंह के स्वामित्व वाली चार एकड़ ज़मीन का ब्यौरा भी विवरण से ग़ायब है. स्थानीय लोग विधानसभा चुनाव के समय दी गई जानकारी को सदन में प्रस्तुत जानकारी से मिलाकर दोनों ही तथ्यों के आंकड़ों का अध्ययन कर रहे हैं.

इलाज में लापरवाही से मौत

ज़िले के शासकीय अस्पताल में शाहिद कुरैशी नामक युवक की उपचार के दौरान हुई मौत से स्थानीय डॉ. डी.के. भार्गव पर आरोपों का सिलसिला प्रारंभ हो चुका है. शाहिद को पेट में दर्द की शिकायत के बाद अस्पताल में भर्ती किया गया था. एक रात अस्पताल में दर्द से तड़पने के बाद शाहिद की मृत्यु हो गई. [illegible] डॉ. भार्गव को ज़िम्मेदार ठहराया है. [illegible] अस्पताल का प्रबंधन ... [illegible]

रसोई गैस की कालाबाज़ारी जारी

शहर में पिछले कई वर्षों से रसोई गैस की कालाबाज़ारी का धंधा खुले रूप में जारी है. उपभोक्ताओं को 15-15 दिनों तक गैस सिलेंडर उपलब्ध नहीं होते. वहीं बिना नंबर वाले उपभोक्ताओं को 500 रु. देकर तत्काल सिलेंडर उपलब्ध हो जाता है. शहर के मुख्य बाज़ार और भीड़-भाड़ वाले इलाक़ों में अवैध रूप से छोटे सिलेंडरों को भरने का सिलसिला जारी है. ज़िले के खाद्य निरीक्षक के अनुसार अभी तक छोटे सिलेंडर भरने संबंधी कोई शिकायत नहीं मिली है फिर भी [illegible] दुकानों की जांच की जाएगी. रसोई गैस को लेकर ज़िला प्रशासन की लापरवाही किसी दिन [illegible] किसी बड़ी दुर्घटना का कारण बन सकती है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

वनाधिकार मान्यता क़ानून का दुरुपयोग

वनाधिकार मान्यता क़ानून के अब तक के क्रियान्वयन के अनुभव बताते हैं कि अब भी आदिवासियों और वनों में रहने वाले कबिलाई लोगों को अन्याय से मुक्ति दिलाने की कोशिशें हो रही हैं. विगत डेढ़ सौ सालों में सरकार ने वन विभाग को जंगलों का मालिक बनाने की पुरज़ोर कोशिशें की, परंतु उनकी ख़िलाफ़त होती रही. क्योंकि यह एक असामाजिक और अप्राकृतिक कोशिश सिद्ध हुई. आदिवासी और कई अन्य ग़ैर आदिवासी समुदाय वनों में सह जीवन पद्धति से जीवन जीते रहे हैं. वन विभाग ने सह-जीवन के इस समीकरण को वनों पर अपना क़ब्ज़ा स्थापित करने के उद्देश्य से बल और भेद के जरिए तोड़ने की लगातार कोशिशें कीं. आदिवासी समाज वन विभाग को एक ज़िम्मेदार और सहृदय विभाग नहीं मानता है, भारत की सरकार ने यह मानते हुए कि आदिवासियों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय की क्षतिपूर्ति वन विभाग की कार्यशैली के ज़रिए नहीं की जा सकती है. वर्ष 2005 में बने इस क़ानून के क्रियान्वयन की ज़िम्मेदारी आदिवासी कल्याण मंत्रालय को सौंपी. इतना ही नहीं इस क़ानून की नियम और प्रक्रियाओं में भी वन विभाग की भूमि को बेहद सीमित रखा, परंतु मध्य प्रदेश में संकट यह है कि वन विभाग के प्रभुत्व और बल के सामने आदिवासी विकास विभाग व्यवहारिक रूप से पनप ही नहीं पाया. वन विभाग के अफसरान ग्राम सभाओं और वन अधिकार समितियों की बैठकों में जाकर क़ानून के बारे में भ्रम की स्थिति पैदा कर रहे हैं. मसलन सिवनी ज़िले की आमागढ़ पंचायत के नन्हीं कंहार गांव में सभी परिवारों को ढाई हेक्टेयर भूमि पर अधिकार के लिए दावा करने के लिए बाध्य किया गया, जबकि उन्हें क़ानूनन 4 हेक्टेयर ज़मीन पर दावे का अधिकार था. यहां 29 परिवार हैं किंतु 18 परिवारों को ही दावे करने दिए गए और वहां यह बताया गया कि इस गांव में 1980 में मौजूद परिवारों को ही अधिकार पत्र मिलेंगे. इसका परिणाम यह हुआ कि बरातीलाल आदिवासी के परिवार से अलग होकर पांच नए बने परिवार को दावे करने की स्वतंत्रता नहीं दी गई. ये सभी मिलकर 30 एकड़ ज़मीन वर्षों से जोत रहे हैं, किंतु अब इन 6 परिवारों को 6.25 एकड़ तक ही सीमित कर दिया गया है. क्या 24 सदस्यों के ये परिवार जीवित रह पाएंगे? यहीं के सुखराम भलावी बताते हैं कि हमें तो यह नहीं बताया कि गांव का हर स्वतंत्र परिवार दावा कर सकता है जो वन भूमि जोत रहा है. हमें तो उन्होंने रिकॉर्ड से बताया कि बस 18 परिवार ही दावे कर सकेंगे. अब रोना आता है यह सोचकर कि बेटे और भाईयों के लिए ज़मीन नहीं बचेगी. जब सरकार ही ऐसा कर रही है तो फिर किस पर विश्वास करेंगे? ऐसा नहीं है कि नन्हीं कंहार गांव में भूलवश यह हुआ है. विसंगतियां तो यहां बड़े पैमाने पर सरकार ने पैदा की हैं. वन विभाग यह मानकर चल रहा है कि वन अधिकार क़ानून के तहत केवल उन्हीं 1.50 लाख परिवारों को जंगल की 2.5 लाख हेक्टेयर ज़मीन पर अधिकार दिया जाना चाहिए, जिनकी जानकारी उसके रिकॉर्ड में अतिक्रमणकारी के रूप में दर्ज़ है. वास्तविकता यह है की वन विभाग के ज़मीनी अमले ने बहुत से क़ब्ज़ेधारी परिवारों की जानकारी को रिकॉर्ड में आने ही नहीं दिया है, क्योंकि यदि वे सभी वास्तविक क़ब्ज़ेधारियों की रिपोर्ट अपने आला अफसरों को दिखाते तो उन पर सवाल उठते कि इतने क़ब्ज़ेधारी जंगल में क्यो हैं? ऐसे में ज़मीनी अमला उन्हें बिना रिकार्ड में दर्ज किए बार-बार बेदखल करता रहा, झोंपड़ी तोड़ते रहे और यह क़ानूनन सवाल नहीं बना. क्योंकि जिन परिवारों की मौजूदगी के प्रमाण नहीं हैं, उनकी बेदखली तो हो ही नहीं सकती. क़ानून तो सबूत मांगता है, इस नज़रिए से यदि क़ानून लागू हुआ तो लगभग 1.90 परिवार ऐतिहासिक अन्याय से मुक्त नहीं हो पाएंगे. यह सुनिश्चित किया जाना ज़रूरी है कि आदिवासी और ग़ैर-आदिवासी वन निवासियों को 4 हेक्टेयर तक की भूमि पर हक मिले. एक मुसीबत यह भी है कि इस क़ानून के तहत समुदाय को जंगल पर अपने सामाजिक अधिकार को सिद्ध करने के लिए स्वयं प्रमाण प्रस्तुत करने को कहा गया है. अन्याय के शिकार आदिवासियों को सिद्ध करना है कि उनके साथ अन्याय हुआ है, यह क़ानून की दूसरी विसंगति है. सरकार में पिछले 60 से ज़्यादा वर्षो से यह व्यवस्था नहीं है कि वाज़िब-उल-अर्ज़ और निस्तार पत्रकों में समुदाय के संसाधनों के अधिकार, विस्तार और दायरे स्पष्ट रूप से दर्ज़ किए जाते रहे हैं. हर गांव की जानकारी सरकार के रिकॉर्ड रूम में मौजूद है, जिनसे पता चलता हैं कि गांव का समाज कौन से जंगल का निस्तार, जड़ी-बूटी के लिए, आवागमन के लिए, देवता पूजन के लिए, लकड़ी के लिए या लघुवनोपज के लिए उपयोग में लाता रहा है.

क़ानून भी कहता है कि ये तमाम दस्तावेज ग्रामसभा और वन अधिकार समिति को सौंप दिए जाने चाहिए, परंतु नियम यह बना दिया गया कि यदि कोई ग्राम सभा या समिति मांगेगी तब ही इस क़ानून के तहत अधिकारों के लिए दावे करने की प्रक्रिया भी आदिवासियों के अनुरूप नहीं है. 13 पृष्ठों के फॉर्म को भरने के साथ-साथ प्रमाण प्रस्तुत करने की तकनीक से गांव के लोग अंजान हैं. नन्हीं कंहार गांव के बरातीलाल यह भी कहते हैं कि वन विभाग के बीटगार्ड, रेंजर और पटवारी गांव में आए उन्होंने ही बताया कि सभी पुराने परिवारों को ढाई-ढाई हेक्टेयर ज़मीन मिलेगी और इसके लिए फॉर्म पर अंगूठे लगवाए, हस्ताक्षर करवाए. हमें तो पता ही नहीं कि उस पर क्या लिखा था? यह तो हमेशा से ही होता रहा है कि कुछ साहब लोग आते हैं कुछ लिखते हैं, अंगूठा लगवाते हैं चले जाते हैं फिर पता चलता है कि हमारी आधी से ज़्यादा ज़मीन चली गई. यह तो हक छीनने वाला क़ानून है. वनाधिकार मान्यता क़ानून में प्रावधान है कि पूर्व में किसी भी कारण से बेदखल या विस्थापित किए गए परिवारों के वन अधिकारों को भी मान्यता दी जाएगी, जिनका जबरन विस्थापन किया गया है या सही पुनर्वास नहीं किया गया है. मध्य प्रदेश के पालपुर-कूनों अभ्यारण्य और पन्ना राष्ट्रीय अभ्यारण्य के 635 परिवारों की स्थिति अभी बेहद असहज बनी हुई है, क्योंकि पालपुर-कूनों अभ्यारण्य के 187 परिवार तो 6 सालों में 7 बार विस्थापित किए गए हैं. वे यह नहीं जान पा रहे हैं कि आख़िर वे अपने दावे कहां, किस ज़मीन पर कैसे करेंगे. यह एक बड़ा मसला है क्योंकि मध्य प्रदेश में विगत 50 वर्षो में 10 लाख परिवार विस्थापित किए गए हैं, जिनमें से 38 प्रतिशत ग्रामीण आदिवासी परिवार हैं. इन्हें नज़रंदाज़ करने का मतलब है कि परिवार ऐतिहासिक अन्याय के शिकार बने रहेंगे और आजीविका के अधिकार से वंचित हो जाएंगे. नियम कहता है कि यदि किसी भी दावेदार के दावे को यदि निरस्त किया जाता है तो उसे कारण सहित सूचित किया जाएगा. छिंदवाड़ा ज़िले के भुमका पंचायत में 136 परिवारों ने वन भूमि पर अधिकार के लिए दावे किए थे, परंतु 132 के दावे निरस्त हो गए, क्योंकि उन्हें वन विभाग के कर्मचारियों ने बताया था कि उन्हें बेदखल कर दिया जाएगा, ऐसे में दावे तो निरस्त होने ही थे, परंतु दुखद यह है कि न तो उन्हें सूचित किया गया और न ही यह बताया गया कि वे पुन: दावे दर्ज़ कराए. सिवनी ज़िले की शाखादेही पंचायत की सरपंच बेलाकनी उइके को केवल इतना बताया गया कि ढाई हेक्टेयर तक के अधिकार के लिए व्यक्तिगत दावे करे, इसके अलावा उन्हें कोई अन्य जानकारी नहीं दी गई, ऐसे में पंचायतों और सरपंच से सार्थक भूमिका निर्वाह करने की अपेक्षा कैसे की जा सकती है. उन्हें तो हाथ-पैर बांधकर अपराधी बनाया जा रहा है. ऐसे में अब तक 40 हज़ार से ज़्यादा दावे निरस्त भी हो चुके हैं. मध्य प्रदेश लोक संघर्ष साझा मंच द्वारा तीन ज़िलों, छिंदवाड़ा, सिवनी, झाबुआ में कराए गए एक अध्ययन से पता चल रहा है की 81 प्रतिशत सरपंच और 97 प्रतिशत दावेदारों को यही जानकारी है कि वन विभाग इस क़ानून का सर्वेसर्वा है. दिक्कत यह है कि यह विभाग सुनियोजित ढंग से वन अधिकार क़ानून की प्रक्रिया को अपने क़ब्ज़े में ले चुका है. नाकेदार, बीटगार्ड और डिप्टी रेंजर की मौजूदगी में ग्रामसभा की बैठक से लेकर तमाम दूसरी कार्यवाहियां हो रही है और आदिवासी विकास विभाग की भूमिका केवल ऐसे आदेश-दिशा निर्देश जारी करने तक सीमित रह गई है जो ग्राम पंचायतों और दावेदारों तक पहुंच ही नहीं रहे है. यह तय था कि व्यक्तिगत और सामुदायिक दावे करने की प्रक्रिया को ज़मीनी स्तर पर लागू करने के लिए गांव स्तर पर वन अधिकार समिति का गठन ग्राम में किया जाएगा, जिसमें वन विभाग की कोई भूमिका नहीं होगी. नन्हीं कंहार गांव पहुंचने पर वहां के दावेदारों से पता चला की वन विभाग द्वारा पहले से बनवाई गई वन सुरक्षा समिति से ही सारे काम करवाए गए. और समिति के अध्यक्ष सुखराम भलावी को यह पता ही नहीं चलने दिया गया. ग़ौरतलब है कि वन विभाग ही वन सुरक्षा समिति को नियंत्रित करता है और इनके बीच आर्थिक लेन-देन भी होता है. इसलिए समिति पूरी तरह से विभाग के प्रभुत्व में ही काम करती है. लोक संघर्ष साझा मंच के अध्ययन से यह भी पता चला कि 37 प्रतिशत वन सुरक्षा समितियों को वन अधिकार समिति में बदल दिया गया है. इससे जहां यह माना जा रहा था कि आदिवासियों और अन्य वन निवासियों की वर्तमान स्थिति को बदलने में सक्षम होगा किंतु विसंगतिपूर्ण क्रियान्वयन के कारण यह उतना सार्थक सिद्ध होगा, अब इसमें संदेह है. मध्य प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष सुरेश पचौरी का कहना है कि राज्य में जिस प्रकार से वनाधिकार मान्यता क़ानून को लागू करने का दिखावा किया जा रहा है, उससे लगता है कि सरकार की मंशा आदिवासियों और वनवासियों को उनके क़ब्ज़े की वनभूमि पर भू-अधिकार देने की नहीं है. राष्ट्रीय भूमि आयोग के सदस्य और भूमि सुधार आंदोलन के प्रणेता राजगोपाल पीवी का कहना है कि भारत सरकार ने ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने के लिए वनाधिकार मान्यता क़ानून बनाया है और इसे राज्य सरकारों को लागू करना ही होगा. फ़िलहाल वन विभाग और सरकारी राजनेताओं की स्वार्थवृत्ति के कारण भू-अधिकार के पट्टे देने में लापरवाही और टालमटोल की स्थिति बनी हुई है, लेकिन अब वनवासी भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो गए हैं.

जंगल बचाओ अभियान एनजीओ के मुख्य कार्यकर्ता विजयभाई का कहना है कि आदिवासियों एवं जंगल को अलग करके नहीं देखा जा सकता. भारत के 63 प्रतिशत वन 63 प्रतिशत आदिवासी इलाक़ों में है. विजयभाई के अनुसार आदिवासी इलाक़े में भारत का 92 प्रतिशत कोयला, 92 प्रतिशत बॉक्साइट, 78 प्रतिशत लौह अयस्क, 100 प्रतिशत यूरेनियम, 85 प्रतिशत तांबा, 65 प्रतिशत डोलोमाइट इत्यादि खनिज संपदा है. यदि भारत के जंगलों को, खनिज इलाक़ों को, आदिवासी इलाक़ों को, जलग्रहण क्षेत्र आदि को मानचित्र में एक ही साथ देखें तो यह लगभग आसपास का ही क्षेत्र है और यहीं पर भारत की सबसे शोषित और पीड़ित जनता है. भारत के वृहद खदान से भरे ज़िले भारत के 150 अति दरिद्रतम ज़िलों में आते हैं.

सचिन कुमार जैन
feedback@chauthiduniya.com

लेखक भोजन का अधिकार अभियान से जुड़े एनजीओ कार्यकर्ता हैं.

मोटरन्यूरॉन बीमारी मतलब मौत

युगल किशोर तिवारी

वैसे तो कोई भी बीमारी इंसान को ख़ौफ़ के साए में लाकर खड़ी कर देती है पर कुछ बीमारियां ऐसी होती हैं जिनके साए से निकलते निकलते आदमी दम तोड़ देता है. ऐसी ही एक जानलेवा बीमारी हैमोटरन्यूरॉन.लाइलाज बीमारियों की संख्या में समूचे भारत में लगातार वृद्धि होती जा रही है. विकास के क्रम के साथ-साथ चिकित्सा विज्ञान को अब उन परेशानियों का इलाज भी ढूढ़ना पड़ रहा है जिसका वर्णन चिकित्सा शासकीय अध्यन के दौरान कभी आवश्यक नहीं माना जाता था. मोटरन्यूरॉन नामक एक नई बीमारी इस समय भारत के कई कस्बों में अपना घर बनाती जा रही है. चिकित्सा विज्ञान के पास अभी इसका कोई इलाज नहीं है.

समूचे भारत के 185 लोग वर्तमान में एक ऐसी अज्ञात बीमारी से त्रस्त हैं, जिसका कोई इलाज नहीं है और परिणाम सिर्फ मौत है. चिकित्सक प्रारंभिक अवस्था में इस बीमारी को समझ पाने में असफल रहते हैं. इसका प्रमुख कारण चिकित्सा स्वास्थ्य की पढ़ाई के समय इस बीमारी काउल्लेख कहीं महत्व के साथ नहीं मिलता है. छत्तीसगढ़ में इस बीमारी से पीड़ित कई लोगों से बात करने के बाद चौथी दुनिया इस निर्णय पर पहुंचा है कि विकास के साथ साथ चिकित्सा स्वास्थ्य में भी अब गहन शोध की आवश्यकता है अन्यथा मोटरन्यूरान जैसी बीमारी धीरे-धीरे मानव समाज के लिए बहुत बड़ा खतरा बन सकती है.

इस बीमारी से पीड़ित शर्मा परिवार की स्थिति दो दशक से लगातार ख़राब है. रेलवे मेल सर्विस बिलासपुर में पदस्थ शशांक मोहन शर्मा के अनुसार उनके पिता स्व. निरंजन शर्मा पाली क्षेत्र में प्राचार्य के पद पर कार्यरत् थे. वर्ष 1987 में अचानक उनकी तबीयत ख़राब हुई और चलने फिरने में परेशानी महसूस होने लगी. डॉक्टरों ने डिक्सप्रोलेक्स मानकर उनका ऑपरेशन कर दिया. स्वास्थ्य में फिर भी सुधार न होने पर और लाखों रुपये ख़र्च करने के बाद डॉक्टरों ने उन्हें मोटर न्यूरान बीमारी से पीड़ित बचाया. इस बीमारी की कोई दवा न होने के कारण वर्ष 1988 में निरंजन शर्मा की मौत हो गई.

जानकारों के अनुसार यह बीमारी मूल रूप से इंग्लैंड में पाई जाती है, जहां एक लाख में से एक से पांच व्यक्ति इस बीमारी से पीड़ित होता है. वंशानुगत यह बीमारी करोड़ों में से किसी एक व्यक्ति को ही होती है. निरंजन शर्मा के छोटे पुत्र जयंत मोहन की शादी वर्ष 2000 में संपन्न हुई. शादी के एक वर्ष बाद जयंत को भी पैरों में तकलीफ महसूस हुई तब से लेकर आज तक जयंत का इलाज देश के सभी प्रमुख अस्पतालों में निरंतर चल रहा है. 10-15 दिनों के इलाज के बाद थोड़ा आराम जरूर मिलता है, पर बीमारी खत्म होने का नाम नहीं लेती. रायपुर में पदस्थ ऑर्थो सर्जन डॉ. शुक्ला के अनुसार मोटरन्यूरान से पीड़ित व्यक्ति न सिर्फ अपंग, असहाय होता है बल्कि वह न तो खाना निगल सकता है न सोते वक्त अपने हिसाब से करवट बदल सकता है. यहां तक कि वह अपनी मर्जी से हाथ पैर को हिला डुला भी नहीं सकता. सोते-सोते पता नही कब मरीज को सांस थम जाने का भय बना रहता है. शरीर के अंग हमेशा फड़कते रहते है और एक बेचैनी बनी रहती है. ऐसा व्यक्ति अपनी तकलीफों को कह पाने में भी कई बार अक्षम होता है. मोटरन्यूरान नामक बीमारी को लेकर कई मान्यताएं सामने आ रही है, पर कोई भी यह दावा नहीं कर सकता कि उसने इस बीमारी से संबंधित सभी तथ्यों को समझ लिया है. एम.एन.डी. बीमारी विश्व के 19 देशों में इन दिनों कहर वर्षा रही है. इसका प्रकोप धीरे-धीरे भारत में फैलता जा रहा है. जरूरत है केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा बीमारी से संबंधित गहन शोध की. दूसरी ओर देश की एक दवा कंपनी ने इस बीमारी की दवा की खोज का दावा किया है. कंपनी न्यूकेट द्वारा बताया गया है कि अब तक 185 लोगों को नि:शुल्क दवा कंपनी द्वारा उपलब्ध कराई गई है, वैसे इस दवा की कीमत 600 रुपये बताई जाती है.

स्व. जयंत मोहन शर्मा

बबीता शर्मा

एशिया के प्रसिद्ध न्यूरोलाजिस्ट और बॉम्बे हॉस्पिटल के विभागध्यक्ष डॉ. बी.एस. सिंघल के अनुसार इस बीमारी का इलाज अभी तक पूरी तरह से नही खोजा जा सका है. वर्तमान में उपलब्ध दवाओं से बीमारी की गति को कम किया जा सकता है. रेल्यूजोल नामक दवा दिन में दो बार लेने पर मरीज को आराम जरूर मिलता है, पर यह स्थाई इलाज नहीं है. मांस पेशियों में दर्द, खिंचाव और चुभन महसूस होना, जोड़ो में दर्द होना, खाते वक्त निगलने में परेशानियां का होना, थूक ज़्यादा आना और उसे निगलने में परेशानियां का होना, क़फ़ अधिक बनना, सांस बंद होने का एहसास होना दिन भर तनाव महसूस करना, मांस पेशियों का अधिक फड़कना आदि प्रारंभिक लक्षण होते हैं.

feedback@chauthiduniya.com

क्या है मोटरन्यूरॉन बीमारी

मोटरन्यूरॉन बीमारी की खोज केरकांट के न्यूरोलाजिस्ट जान मार्टिन ने की और 1869 में पहली बार इस बीमारी के लक्षण और सुझाव दिए. मोटरन्यूरॉन से प्रसिद्ध खगोल शास्त्री वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिन्स भी पीड़ित हैं. मनुष्य के मतिष्क में रहने वाले न्यूरो सेल जो स्पाइनल कार्ड और मांस पेशियों को सूचना भेजता है, उसे प्रभावित करते हुए नष्ट कर देता है. इस बीमारी को एम.एन.डी. के नाम से भी जाना जाता है. इस बीमारी के होने की वजह क्या है? अभी तक विश्व भर के डॉक्टरों व शोधकर्ताओ ने अब तक पता नहीं लगा सकें हैं. इसे दो चरणों में प्रारंभ हो सकता है जिसे इन्टीरियत और पोस्टीरियल अपर एवं लोवर मोटरन्यूरॉन बीमारी के नाम से जाना जाता है.

स्टीफन हॉकिंस

एमएनडी पहले चरण में इंसान के न्यूरॉन सेल को खत्म करता है. दूसरी चरण में मस्तिष्क शरीर के अंगों को सूचना देना बंद कर देता है. तीसरे चरण में शरीर के मसल्स डिआर्डर होने लगते है, मनुष्य का अपने अंगों पर नियंत्रण पूरी तरह समाप्त हो जाता है. खाना खाने, निगलने, बोलने और थूंकने तक इंसान असमर्थ रहता है. इंसान इस बीमारी के तीसरे चरण के पहुंचने तक अपनी गर्दन तक से नियंत्रण खो चुका होता है. एमएनडी के चौथे चरण में यह सीधा हार्ट सहित जरूरी अंगों का सूचना भेजने की प्रक्रियाओं पर हमला करता है. जिससे पीड़ित व्यक्ति की मौत हो जाती है. इसके साथ-साथ इस बीमारी के कुछ और भी प्रकार हैं जिनमें पीएलएस प्राइमरी लेटरेल स्क्रोरोसिल, पीएमए प्रोग्रेसिव क्यूअकलेसर स्ट्रॉफी, एसएमए स्पाइनल मस्कुलर एट्रॉफी प्रमुख हैं. इन सभी से अधीक खतरनाक एएलएस होता है जिसे एम्योट्राफिक सेंट्रल स्क्रोरोसिल कहा जाता है. प्रोगनोसिस एमएनडी से जुड़ी हुई एक बीमारी होती है. इससे पीड़ित व्यक्ति स्पाइनल मस्कुलर एट्रॉफी के शिकार होते हैं. पीड़ित व्यक्ति एएलएस की तुलना मे ज़्यादा दिन तक जीवित रह सकता है. इस बीमारी से चलने, बोलने, सांस लेने और सास फूलने व मूवमेंट करने में दिक्कतें होती हैं. मनुष्य के अंगो को जब न्यूरॉन से सूचना मिलना बंद हो जाता है तब मांस पेशियां कमजोर और ढीली पड़ने लगती है शरीर के हर अंगो पर सेंसेसन तो होता है पर प्रतिक्रिया करने में वह नाकाम होता है. मसलन जैसे किसी व्यक्ति को हाथ या पैर के किसी भी हिस्से को मच्छर काट रहा हो तब उस व्यक्ति को दर्द और मच्छर काटने का एहसास होगा. लेकिन वह चाह कर भी अपने हाथ या पैर को हिला डुला नहीं सकता और ना ही बोल कर व्यक्त कर सकता है. अंत में इस बीमारी के बढ़ने के बाद इंसान सिर्फ अपनी पलक झपका सकता है. शरीर के शेष सभी अंगों पर नियंत्रण नहीं रहता. एमएनडी बीमारी विश्व के 19 देशों में पाई जाती है. लेकिन मुख्य रूप से यह बीमारी यूके के लोगों को अधिक होती है. यह बीमारी अनुमानित तौर पर 90 फीसदी पुरूष और 10 फीसदी महिलाओं को होती है. बच्चों में यह बीमारी जन्म के समय से भी हो सकती है. जब बच्चे चलना शुरू करते हैं तभी इस बीमारी का पता चल जाता है. अमेरिका में इस बीमारी के भय से प्रति वर्ष लगभग 5600 लोग जांच की प्रक्रिया से गुज़रते हैं. एमएनडी की जांच साधारण क्लीनिक और लैब में नहीं किया जा सकता इसके लिए उच्चस्तरीय ब्लड टेस्ट, डीएनए टेस्ट, मैग्नेटिक रिजंस टेस्ट और इलेक्ट्रोमायोग्राफी टेस्ट कराने पड़ते हैं. इस बीमारी का भय और आतंक इतना है कि कई देशों में बाकायदा इस बीमारी से जुड़ी जानकारियों और सहयोग के लिए संगठन भी बनाया गया है. जिनमें एमनडी संघ स्कॉटलैंड, नेशनल इंस्टीट्यूट एन.आई.एन.डी, एमएनडी संघ आयरलैंड, मोटरन्यूरॉन डिसीज संघ साउथ अफ्रीका, ए.एल.एस. एसोशिएसन यूएसए वेस्ट और ए.एल.एस सोसाइटी कनाडा शामिल है.

दो करोड़ रुपये में दो किताबें

सर्वशिक्षा अभियान के नाम पर लूट

सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत भारत सरकार से प्राप्त धनराशि का प्रदेश में किस प्रकार खुला दुरूपयोग हो रहा है, इसके लिए यही एक उदाहरण पर्याप्त है. यहां के स्कूलों में छात्र-छात्राओं के लिए प्रत्येक स्कूल पुस्तकालय को केवल दो-दो किताबें भेजने के लिए दो करोड़ रूपया ख़र्च कर दिया. इस प्रकार राज्य के छात्र पूरे साल दो किताबों के सहारे अपना ज्ञान बढ़ा रहे हैं.

प्राप्त जानकारी के अनुसार भारत सरकार ने राजा राममोहन राय पुस्तकालय योजना 2003 में शुरू की थी. इसके तहत स्कूलों के पुस्तकालयों में नई-नई ज्ञानवर्धक किताबें भेजी जानी थी और किताबों की ख़रीद के लिए भारत सरकार राज्य को अलग से पैसा भी हर साल देती है, लेकिन सरकारी अफ़सरों की लापरवाही के कारण वित्त वर्ष 2008-09 में केंद्र से मिला पैसा ख़र्च न होने के कारण लैप्स हो गया. इस वर्ष पैसा लैप्स न हो जाए, इसलिए जल्दी-जल्दी में स्कूल शिक्षामंत्री ने केवल दो किताबें चिन्हित कर उन्हें जल्द ख़रीदने के निर्देश दिए. दोष स्कूल शिक्षामंत्री का नहीं है, क्योंकि इस योजना पर विचार करने में ही अफसरों को दो माह से ज़्यादा समय लग गया और फिर अपना दिमाग लगाकर योजना का मूल स्वरूप ही बदल डाला. बाद में स्कूल शिक्षामंत्री की औपचारिक स्वीकृति के लिए प्रस्ताव भेजकर उसे मंजूर करा लिया. जिन दो पुस्तकों को स्वीकार किया गया है, उनमें एक है- गीजू भाई द्वारा रचित दिवा स्वप्न और दूसरी है बाल पोथी.

इन दोनों की किताबों के तीन-तीन लाख सेट ख़रीदी के आदेश भी राज्य शिक्षा केंद्र द्वारा कर दिए गए हैं. ऊपर से आए आदेश का आंख मूंदकर पालन करते हुए राज्य शिक्षा केंद्र के अधिकारियों ने राज्यांश के 80 लाख रूपये भी राजा राममोहन राय पुस्तकालय ट्रस्ट कोलकाता को भेज दिए हैं.

राजा राममोहन राय पुस्तकालय ट्रस्ट द्वारा हर साल दो करोड़ रूपये की किताबें प्रदेश को दी जाती हैं. इसमें से एक करोड़ 20 लाख रुपये पुस्तकालय ट्रस्ट तथा 80 लाख रुपये राज्य शिक्षा केंद्र द्वारा दिए जाते हैं. नेशनल बुक ट्रस्ट की सूची में शामिल सरकारी और प्राईवेट प्रकाशकों द्वारा दी जाने वाली 35 प्रतिशत छूट के बाद क़रीब तीन करोड़ की किताबें प्रदेश के स्कूलों में राजा राममोहन राय पुस्तकालय ट्रस्ट द्वारा भेजी जाती थी. सत्र 2007-08 तक इस योजना के तहत सभी स्कूलों में किताबों के छह-छह सेट पहुंचते थे. हर सेट में 40 से 50 किताबें होती थी. इस तरह स्कूलों की लाइब्रेरी में हर साल क़रीब 250 किताबें बढ़ जाती थी, लेकिन अब हर स्कूल को मात्र चार-चार किताबें मिलेगी. इस प्रकार किताबें केवल दो ही होगी.

वर्ष 2003 से चल रही योजना में सत्र 2006-07 तक ज़िला स्तर पर पुस्तक मेले आयोजित कर स्कूलों को किताबें दी जाती थी. सत्र 2007-08 में चयन समिति के माध्यम से निर्णय कर किताबें ख़रीदी गई थी, इसमें भी गड़बड़ी की शिकायत मिलने पर पूर्व आयुक्त राधेश्याम जलानिया ने चयन समिति की व्यवस्था ख़त्म कर सरकारी और प्राइवेट पब्लिशर्स के लिए 75:25 का अनुपात तय कर इसी से निर्णय करा दिया था, लेकिन निर्णय लेने में खासी देरी हो गई, इसके चलते पुस्तकालय ट्रस्ट ने राज्य शिक्षा केंद्र द्वारा भेजा गया राज्यांश 80लाख रूपये आपत्ति के साथ लौटा दिए थे, इससे पिछले इस योजना का लाभ ही प्रदेश को नहीं मिल सका.

स्कूलों में छात्र-छात्राओं के लिए प्रत्येक स्कूल पुस्तकालय को केवल दो-दो किताबे भेजने के लिए दो करोड़ रूपया ख़र्च कर दिया. इस प्रकार राज्य के छात्र पूरे साल दो किताबों के सहारे अपना ज्ञान बढ़ा रहे हैं.

अर्चना चिटनिस

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

बाणासुर के नगर की खोज जारी

इतिहासकार और पुरातत्व विभाग अगर सही दिशा में काम करते रहें तो जल्द ही किसी बड़े ऐतिहासिक रहस्य से पर्दा उठ सकता है. माना जाता है कि त्रेतायुग में भगवान शिव के सबसे बड़े भक्त दैत्यराज बाणासुर की नगरी सतना ज़िले की मनोरा पहाड़ी ही थी. यहां बाणासुर ने शिव की तपस्या भी की थी और यही उसका राज्य भी यहीं था. पुरातत्व विभाग की खोज में मनोरा पहाड़ी से प्राप्त हो रही शिव प्रतिमाएं इस बात की पुष्टि करती हैं. पुरातत्व विभाग को इस मनोरा पहाड़ी की खुदाई के दौरान एक ऐसी गुफा नज़र आई है जिसका रास्ता मैयर की शारदा माता के मंदिर से जुड़ा होने का संदेह है. यह भी कहा जाता है कि इसी गुफा में बाणासुर द्वारा स्थापित शिव की सोने की प्रतिमा स्थित है. पुरातत्व विभाग ने 77 टीलों में से अभी तक केवल दो ही टीलों की खुदाई की है. इन टीलों से शिव पार्वती की संयुक्त मूर्ति, हवन कुंड और भगवान शिव की जलहरी प्राप्त हुई है. पुरातत्व विभाग को उम्मीद है कि इस क्षेत्र में इतिहास से संबंधित अभी कई अन्य राज़ खुलने शेष हैं. स्थानीय नागरिकों की मानें तो इन टीलों में 108 शिवालयों का मठ स्थित हुआ करता था. यहीं पर मनोरा नाम से एक तालाब भी स्थित था, जिसकी खोज आज भी जारी है.

feedback@chauthiduniya.com

सासन पावर लिमिटेड

आवश्यक अर्हताए :-
सिविल, मैकेनिकल, इलेक्ट्रिकल, माईनिंग, इन्फॉर्मेशन टेक्नोलॉजी एवं टैली कम्यूनिकेशन, इलेक्ट्रॉनिक्स एवं कन्ट्रोल एण्ड इन्स्ट्रूमेंटेशन में से किसी एक विषय में मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से स्नातक।
आवेदन पत्र जमा करने कि अन्तिम तिथि 22 मई 2010
आवेदन पत्र का प्रारूप मानव संसाधन विभाग सासन पावर लिमिटेड के कार्यालय में 10 मई से 20 मई के बीच प्राप्त किया जा सकता है। आवेदन पत्र के साथ निवास प्रमाण-पत्र संलग्न किया जाना आवश्यक है, संलग्न न होने पर आवेदन निरस्त माना जायेगा।

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 24 मई–30 मई 2010

रायपुर से लगभग 134 किलोमीटर दूर स्थित भौरमदेव मंदिर सातवीं से ग्यारहवीं शताब्दी के कालखंड में बनाए गए हैं.

जो दिखता है सो बिकता है

छत्तीसगढ़ का खजुराहो भौरमदेव मंदिर

जो दिखता है सो बिकता है. बाज़ारवाद के इस कमाऊ फॉर्मूले को अब छत्तीसगढ़ सरकार ने पर्यटन उद्योग के विकास और आय बढ़ाने के लिए अपनाया है. सरकार के पर्यटन विभाग ने भौरमदेव मंदिरों की ओर देशी–विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए इन्हें छत्तीसगढ़ का खजुराहो के रूप में प्रचारित करने का अभियान शुरू किया है. मज़े की बात तो यह है कि इसके अच्छे नतीजे मिल रहे हैं. और अब बड़ी संख्या में पर्यटक भौरमदेव का भ्रमण करने आ रहे हैं.

रायपुर से लगभग 134 किलोमीटर दूर स्थित भौरमदेव क्षेत्र के यह मंदिर सातवीं से ग्यारहवीं शताब्दी के कालखंड में बनाए गए हैं. नागरशैली के ये मंदिर पहाड़ी चट्टानों को काटकर बनाए गए हैं. ये मंदिर धार्मिक दृष्टि से तो महत्वपूर्ण हैं ही, लेकिन मंदिर की दीवार पर उकेरी गई कामकला की मूर्तियों और कामुक दृश्यों के कारण ये मंदिर खजुराहो और कोणार्क के मंदिरों के समान ही आकर्षक और विचित्र हैं. मध्य प्रदेश सरकार ने इससे पहले भौरमदेव का ज़्यादा प्रचार नहीं किया. मेकल पर्वत श्रृंखलाओं और घने वनों के बीच बसे भौरमदेव

छत्तीसगढ़ राज्य बन जाने के बाद राज्य सरकार ने पर्यटन गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए अपने सभी पर्यटन स्थलों का विकास करना शुरू किया और अब राज्य में पर्यटन उद्योग तेज़ी से फल-फूल रहा है.

पर्यटन क्षेत्र का मध्य प्रदेश में ज़्यादा विकास भी नहीं हुआ था. पर्यटकों के लिए बुनियादी सुविधाओं की भारी कमी के कारण भौरमदेव भ्रमण करने वाले पर्यटकों की संख्या भी काफी कम रही है, लेकिन मध्य प्रदेश के विभाजन के बाद छत्तीसगढ़ राज्य बन जाने के बाद राज्य सरकार ने पर्यटन गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए अपने सभी पर्यटन स्थलों का विकास करना शुरू किया. परिणामस्वरूप अब राज्य में पर्यटन उद्योग तेजी से फल–फूल रहा है. सरकार के पर्यटन विभाग की नज़र भौरमदेव पर पड़ी और उसने इसे छत्तीसगढ़ का खजुराहो नाम देकर मंदिर में उकेरी गई कामकला की मूर्तियों और मिथुन मूर्तियों का प्रचार कर पर्यटकों को आकर्षित करने का अभियान चलाया है. भौरमदेव मंदिर नागवंशी राजाओं द्वारा सातवीं से ग्यारहवीं शताब्दी के कालखंड में बनाए गए. वर्तमान में एक ही मंदिर पूर्ण सुरक्षित हैं जो कि कोणार्क के सूर्य मंदिर और खजुराहो के मंदिरों के समान ही हैं या एक तरह से उनकी प्रतिकृति ही है. मंदिर में शिवलिंग की स्थापना की गई है और शिव पूजकों के लिए इसका विशेष महत्व है. मंदिर से एक किलोमीटर दूर मंडवा महल है, जो कि नागवंशी राजा और हैयहयवंशी राजकुमारी के विवाह की स्मृति में बनाया गया था. इसे दूल्हादेव का महल भी कहा जाता है. नागवंशी राजा रामचंद्रदेव ने इस महल का निर्माण 1349 ईसवी में किया था, ऐसा इतिहास में बताया गया है. शिवमंदिर की दीवारों पर कुल 54 कामुक मूर्तियां और कलाकृतियां है. इनमें से कई में वात्सायन के कामसूत्र में वर्णित कामकला के विभिन्न आसनों, मुद्राओं का चित्रण किया गया है. ऐसा कहा जाता है कि नागवंशी राजा तंत्र विद्या में विश्वास रखते थे और भौतिक सुखों के लिए वे तंत्र साधना भी करते थे.

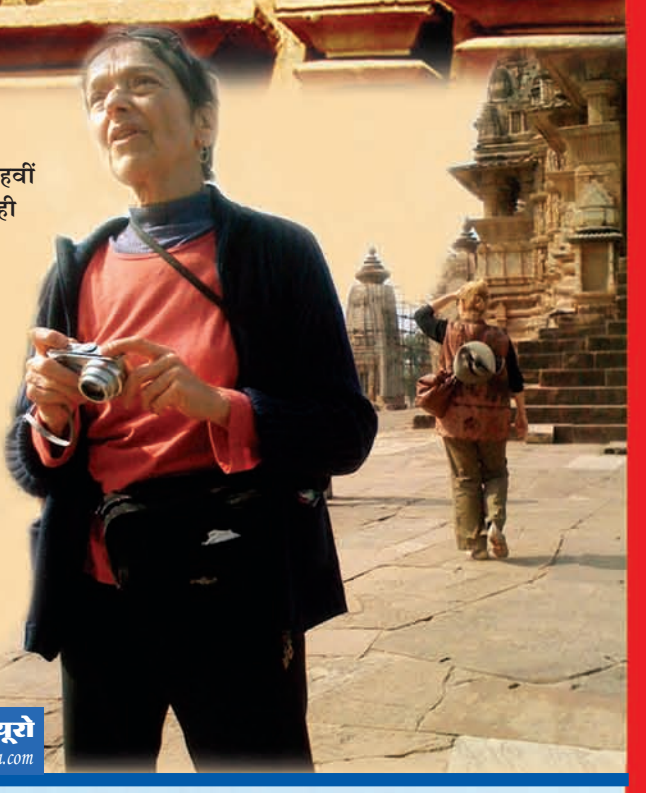

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

नर्मदा का वजूद ख़तरे में

आरती पटेल

नर्मदा नदी के उद्गम स्थल अमरकंटक से लेकर खंभात की खाड़ी तक 18 कोल विद्युत संयंत्र लगाने की तैयारी की जा रही है. विकास के नाम पर नर्मदा के विनाश की यह योजना भारत में नदियों के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लगाने के लिए काफ़ी है. क्योंकि इससे निकलने वाली वाली राख से नर्मदा को काफी क्षति पहुंचेगी. मध्य प्रदेश की जीवन रेखा कही जाने वाली नर्मदा नदी को संरक्षित रखने के लिए केंद्र या राज्य सरकार कई दावे कर चुकी है. सरकार के प्रभावशाली नेता और अधिकारी नदियों के संरक्षण के लिए करोड़ों रुपये ख़र्च करके कई अभियान चलाने का अभिनय करते रहते हैं. सरकार भी इन कार्यक्रमों में कृत्रिम संजीदगी के साथ शामिल होती है और नदियों के संरक्षण के लिए कई दावे एक साथ कर दिए जाते हैं.

केवल मध्य प्रदेश में जबलपुर से लेकर होशंगाबाद तक नर्मदा तट पर चार से पांच थर्मल पावर प्लांट लगाने की कोशिश की जा रही है. नर्मदा के उद्गम स्थल अमरकंटक से खंभात की खाड़ी तक 18 कोल विद्युत संयंत्र लगाया जाना प्रस्तावित है. एक सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2035 तक गंगा अपना अस्तित्व खो देगी. नर्मदा के 55 से 60 फ़ीसदी पानी का बहाव प्रदेश में लगने वाले चारों थर्मल पावर प्लांट के लिए सुरक्षित रखने को लेकर स्वीकृति की जा चुकी है.

नर्मदा के पास लगने वाले पावर प्लांट मैसर्स झाबुआ पावर लिमिटेड, ग्राम घनसौर ज़िला सिवनी में प्रस्तावित है. इसकी उत्पादन क्षमता 600 मेगावॉट बताई गई है. दूसरा प्रोजेक्ट नरसिंहपुर ज़िला अंतर्गत गाढरवाड़ा क्षेत्र में एनटीपीसी द्वारा स्थापित किया जा रहा है. इसकी उत्पादन क्षमता 2800 मेगावॉट बताई जाती है. तीसरा प्लांट ज़िला जबलपुर अंतर्गत शाहपुरा भिटोनी क्षेत्र में एमपीईबी द्वारा स्थापित किया जाएगा, इसकी उत्पादन क्षमता 1200 मेगावॉट बताई जाती है. साथ ही ज़िला नरसिंहपुर के झांसी घाट में मैसर्स टूडे एनर्जी द्वारा 5000 करोड़ रुपये की लागत से प्लांट लगाया जाना भी प्रस्तावित है. जबलपुर से 40 किलोमीटर दूर आसपास के 6–7 गांव में मैसर्स टुडे एनर्जी द्वारा स्थापित किए जाने वाले प्लांट के लिए 1100 एकड़ उपजाऊ भूमि का अधिग्रहण किया जा रहा है. इस ज़मीन का वाटर लेवल मात्र 50 फुट है. अब तक 74 लोगों की लगभग 300 एकड़ ज़मीन रजिस्ट्री कराई जा चुकी है. इनमें 20 आदिवासी, 30 अनुसूचित जनजाति और 24 अन्य कृषक परिवार शामिल हैं. एक अनुमान के मुताबिक़ झांसी घाट पर बनाए जा रहे प्लांट की राख और धुएं से 5000 एकड़ ज़मीन पर लगी फ़सल बर्बाद हो जाएगी. इसके साथ ही भेड़ाघाट के संगमरमर सौंदर्य को भी नुकसान पहुंचने की संभावना है.

ज़ाहिर है, विकास के नाम पर जल संसाधनों का जिस तरह का व्यापक दोहन आने वाले समय में एक भीषण जल संकट को जन्म देने जा रहा है. प्राकृतिक हालातों को देखते हुए, मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री को मंच से चिंता व्यक्त करने के स्थान पर ज़मीनी सच्चाईयों से रू–ब–रू होना होगा, तभी प्रकृति की रक्षा संभव हो पाएगी.

feedback@chauthiduniya.com

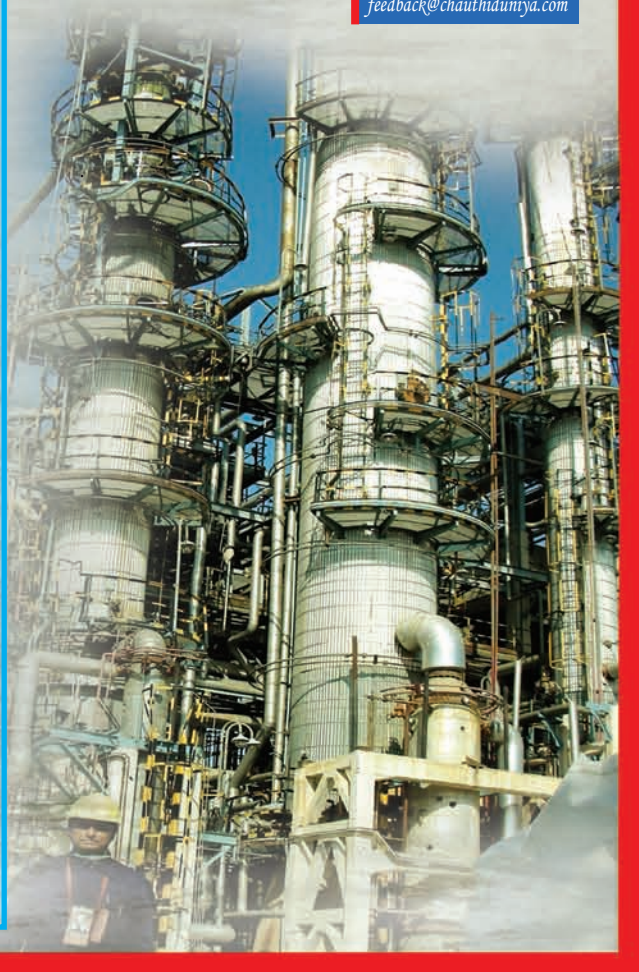

हम ज़मीन देना नहीं चाहते क्योंकि अगर इस ज़मीन में बिजली का प्लांट लगा तो क्या हम अनाज की जगह बिजली थोड़ी ही खाएंगे. ये कंपनी सिर्फ हमारी उपजाऊ ज़मीन हड़पना चाहती है. *गुजर पटेल ग्राम खुडिया*

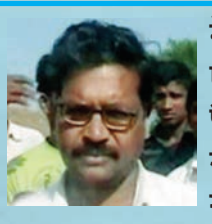

मेरी एक एकड़ ज़मीन में साल में एक लाख से ज़्यादा की फसल पैदा होती है और ये कंपनी वाले सवा लाख रुपये एकड़ जमीन ख़रीदना चाहते है. उपजाऊपन के मुताबिक़ मेरी ज़मीन 10 लाख रुपये एकड़ के हिसाब से बिकनी चाहिए तो मेरा ज़मीन बेचने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता. *खूब सिंह पटेल*

शर्मा जी और भीखम पटेल नाम के दो आदमी कंपनी की तरफ से आकर हम लोगों को जमीन बेचने के लिए डराते धमकाते हैं और कहते हैं कि कैसे भी करके ज़मीन हम लेकर रहेंगे, जबकि हम किसी भी क़ीमत पर अपनी ज़मीन नहीं बेचना चाहते. *मीरा बाई*

आज हमारी सुनने वाला कोई नहीं है जबकि हमारे खेत में गन्ने की फसल लहरा रही है, फिर भी कंपनी वाले इसे साफ करके यहां प्लांट बनाना चाहते हैं.जिससे हम और हमारे परिवार की रोजी रोटी छिन जाएगी. *मैनका बाई*

मेरी आठ एकड़ ज़मीन है जो पूर्ण सिंचित एवं कृषियोग्य है जिसे कंपनी वाले प्लांट के लिए छीन रहे हैं.जिससे हमारा जीवन दूभर हो गया है और दुख की बात तो ये है कि इस तरह की खुली दादागिरी को रोकने वाला कोई नहीं है. *बिरठन बाई किसान*